

दो शब्द

पुरातन महापुरुषों और संतों की वाणियों की उपयुक्त व्याख्या और उनका सही अर्थ कोई प्रभु-प्राप्त महापुरुष ही कर सकता है। इस पुस्तक में हज़ार संत कृपाल सिंह जी महाराज द्वारा तुलसीकृत रामचरितमानस की वाणी को लेकर फरमाए गए सत्संग प्रवचन शामिल किए गये हैं। आज तक इस ग्रंथ की जितनी भी व्याख्यायें महानुआवों ने की हैं अथवा इस पर विद्वानों द्वारा जितने भी प्रवचन किए गए हैं, उन सब में बाहरी नीति और सदाचार की शिक्षा और दशरथ पुत्र श्री राम की जीवन गाथा पर ही प्रकाश डाला जा सका है। मानस के अंतरीय गूढ़ आध्यात्मिक (रुहानी) रहस्यों की व्याख्या तो प्रभु प्राप्त महापुरुष के बिना कोई दूसरा कर ही नहीं सकता था जिस कारण इस ग्रंथ का आत्म तत्व बोध संबंधी अंतरीय ज्ञान जन साधारण तक नहीं पहुंच सका क्योंकि आम विद्वानों ने रामायण के ऐसे प्रसंगों को छुआ तक भी नहीं।

संसार के कल्याण के लिए किसी भी ज़माने, देश या समाज में आए सभी आत्मानुभवी महापुरुष उस देश काल की प्रचलित भाषा में उसी एक परम सत्य को पेश करते चले आए हैं। इसी श्रेणी में परमसंत कृपाल सिंह जी महाराज का नाम आता है जिनकी अमृतवाणी द्वारा फरमाए इस पुस्तक में सग्रहित सत्संग प्रवचनों का गहन अध्ययन करने से उनकी यह महानता सूर्य के ऊजाले की तरह प्रखर हो जाती है। इन सत्संगों से एक ओर जहाँ उनकी प्रभु प्राप्ति संबंधी महानता स्पष्ट होती है वहीं इस ग्रंथ का अंतरीय रुहानी स्वरूप खुल कर सामने आ जाता है।

यहाँ दिए जा रहे सत्संग प्रवचनों में पहले दो प्रवचन अभी तक छपने में नहीं आ सके थे क्योंकि संबंधित टेपों में आवाज बहुत ही मुँहम और weak थी। इन को कई प्रकार के वैज्ञानिक संसाधनों

का प्रयोग करके बड़ी ही कठिनता और परिश्रम पूर्वक मूर्तरूप दिया जा सका है। सर्वमुत्त इस सब काम में हज़ार महाराज जी ने अपनी दया मेहर द्वारा ही इन नाजुक हाथों से अपना काम लिया है। जिसके साथ बीते वहीं इस बात को जानता है। पहले छ्पे बाकी पाँच सत्संगों में भी बार-बार टेप से सुन कर पहले बाकी छूट गये शब्दों को उपयुक्त स्थान पर जोड़ा गया है जिससे इन सत्संगों का आव भी पूर्णतया स्पष्ट हो गया है। इस सब काम की पूर्ति में कोई ज़रा सा भी अपना वलेम नहीं कर सकता क्योंकि महाराज जी तो अपना काम जिससे, जैसे और जब चाहें, खुद ही करवा लेते हैं। हाँ, अगर इस संकलन में कहीं भी कोई कमी रह गई हो तो हम उसके लिए अपने आप को पूरा जिम्मेदार मान कर हज़ार महाराज जी तथा सारी संगत और परमार्थाभिलाषियों से क्षमा-याचना करते हैं।

इस पुस्तक का पहला सत्संग दशाहरे के अवसर पर फरमाया गया है जिस में रामायण के उत्तरकांड में से भरत-राम संवाद के द्वारा यह समझाने का यत्न किया गया है कि पूर्ण संतों के क्या लक्षण होते हैं और असंतों के क्या विनष्ट होते हैं। इसी प्रकार दूसरे सत्संग में अरण्यकांड में पंचवटी निवास के दौरान राम-लक्ष्मण संवाद द्वारा प्रभु प्राप्ति के लिए सभी मार्गों से उत्तम भवित मार्ग बताया गया है। तीसरा सत्संग हज़ार महाराज ने उस वक्ता दिया है जब रामलीला कमेटी, दिल्ली की ओर से गाँधी ग्राउंड में भारत के प्रथम प्रधान मंत्री, जवाहरलाल नेहरू तथा तत्कालीन केंद्रीय गृह मंत्री, श्री लाल बहादुर शास्त्री जी की उपस्थिति में संत जी का स्वागत करते हुए उन्हें तुलसीकृत रामायण की प्रति पेश की गई। महाराज जी ने इस सारगर्भित सत्संग में रामायण का सार बता कर उस का अंतरीय रुहानी पक्षा उजागर किया गया है।

सत्संग नंबर 4 में उत्तरकांड में से गरुड़-काकशुभुजु़दि के संवाद के द्वारा जहाँ पूर्ण सन्धुर की महानता, क्षमाशीलता, दया मेहर तथा कभी शाप न देने की प्रवृत्ति को दर्शाया गया है, वहीं एक साधारण

शिष्य की विद्रोह के अहंकार तथा मन-इंद्रियों के कुचक्र में फंसे होने की विवशता को प्रदर्शित किया गया है जिस से हमें अपनी निजी हालत देख कर अपना वास्तविक स्वरूप साफ नज़र आने लग जाता है कि हमारी इस समय क्या दशा है तथा प्रभु-प्राप्ति के लिए हमें कैसा जीवन बनाना पड़ेगा। पाँचवें सत्संग में गरुड़ ने काकभुजुंडि जी से सात प्रश्न पूछे हैं जो हर आदमी के मन में उठते रहते हैं तथा जिनका उत्तर बड़े ही सुन्दर ढंग से काकभुजुंडि जी ने दिया है कि मनुष्य योनि सब योनियों में श्रेष्ठ है। इस को पाकर विषय-विकारों में समय न गवां कर प्रभु-प्राप्ति की ओर कदम बढ़ाना चाहिए। गरीबी सब से बड़ा दुख है तथा संत मिलाप में सब से बड़ा सुख है। संत का स्वभाव परोपकार करना है तथा असंत स्वाधाविक तौर पर दूसरों का बुरा ही करते रहते हैं। जहाँ संत दूसरों को सुख देने के लिए दुख उठाते हैं, वही असंत दूसरों को दुख पहुँचाने के लिए दुख सहते हैं। अहिंसा (दूसरों को मन, वचन, कर्म से कष्ट न देना) सब से बड़ा पुण्य है तथा दूसरों की बुराई करना सब से बड़ा पाप है। प्रभु और गुरु की निंदा करने वालों को नक्ष शोग कर कौतूहल का जन्म मिलता है। काम, क्रोध, मर्द, मोह और लोभ ये पाँच मन के महाविकार हैं जिनमें फंस कर सभी जीव दुखी रहते हैं। ये सभी रोग तब ही दूर होते हैं जब हमारी आत्मा किसी प्रभु-प्राप्त महापुरुष की कृपा द्वारा मन-इंद्रियों से आजाद होकर उस महायेतन प्रभु से जुड़ जाती है।

छठे सत्संग में राम और नाम का मुकाबला करते हुए बालकांड में से तुलसीदास जी की वाणी द्वारा यह बताया गया है कि 'नाम पावर' निर्गुण और सगुण दोनों का प्रकटावा (झज्हर) करने वाली है। इसलिए 'नाम' दोनों से बढ़ कर है और तुलसीदास जी कहते हैं कि मैं अपनी समझ के अनुसार 'नाम' को 'राम' से बड़ा कहता हूँ। सातवें सत्संग में उत्तरकांड में से गरुड़-काकभुजुंडि संवाद लेकर प्रभु प्राप्ति के अब तक प्रचलित सभी मार्गों में से भवित मार्ग को सर्वश्रेष्ठ बताया गया है। जहाँ भवित की रसाई है वहाँ न ज्ञान की रसाई है, न वैराग वीर्योंकि वैराग और ज्ञान दोनों मर्द रूप हैं। भवित स्त्री

की तरह है, बादशाह महल में यो रहा है, आधी रात को भी वहाँ जा सकती है जब कि ज्ञान और वैराग दोनों बाहर दरवाजा खटखटाएंगे। भवित और माया दोनों ही स्त्री रूप हैं, इस लिए माया भवित को मोह नहीं सकती जैसे एक स्त्री दूसरी स्त्री के रूप पर मोहित नहीं होती।

हजूर संत कृपाल सिंह जी सर्वधर्म समता और विश्व एकता के सच्चे पुजारी थे। उन्होंने इस उद्देश्य से दिल्ली में रहनी सत्संग तथा देहरादून में मानव केंद्र की स्थापना की जहाँ हर धर्म के अनुयायियों ने अपने अपने समाज व धर्म परंपरा में रह कर अंतरीय आत्मानुभव की प्राप्ति की ओर कदम बढ़ाया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने अपनी अध्यक्षता में 1957, 1960, 1963 और 1970 में चार 'विश्व धर्म सम्मेलन' आयोजित किए। हजूर महाराज जी ने विश्व मानव एकता की नीव सुदृढ़ करने तथा लोगों को अंतरीय प्रभु प्रकाश व नाद-ध्वनि का अनुभव कराने के लिए 1955, 1963 और 1971 में तीन बड़ी विश्व यात्राएं कीं और फरवरी 1974 में दिल्ली में विश्वाल 'विश्व मानव एकता सम्मेलन' का आयोजन किया। इस पुस्तक में दिए उनके सत्संग प्रवचनों को ध्यान पूर्वक पढ़ने, विचारने तथा जीवन में धारण करने की प्रार्थना की जाती है। हमारी इस कलम में उनकी समर्था और महानता का वर्णन करने की ज़रा भी शक्ति नहीं है और न ही किसी भाषा को यह ताकत दी गई है कि किसी महापुरुष की महानता का शब्दों द्वारा वर्णन हो सके।

26 अक्टूबर, 2011

(दीवाली)

कृपाल रहनी सत्संग सभा (भबात)

चंडीगढ़

विषय सूची

पृष्ठ

प्रकाशक की ओर से

1. संत - असंत लक्षण
(उत्तराकांड में राम की भरत से ज्ञान चर्चा)
दशहरा सत्संग, 11 अक्टूबर, 1959
(नया प्रवचन टेप से कापी करके) 1 – 39
2. भक्ति मार्ग की महानता
(अरण्यकांड में राम की लक्षण के साथ ज्ञान चर्चा)
(पंचवटी निवास)
सत्संग 9 जुलाई, 1961
(नया प्रवचन टेप से कापी करके) 40 – 80
3. रामायण का सार
सत्संग, 7 अक्टूबर 1962
रामलीला मैदान दिल्ली 81 – 85
4. सत्यरु महिमा
(उत्तरकांड में गरुड़ - काकभुशुंडि संवाद)
सत्सदैश, नवंबर 1962 में प्रकाशित 86 – 120
5. गरुड़ के सात सवाल
(उत्तरकांड में गरुड़ - काकभुशुंडि संवाद)
सत्सदैश नवंबर 1962 में प्रकाशित 121 – 151
6. नाम की महिमा
(बालकांड में राम और नाम की तुलना)
सत्सदैश जून 1964 में प्रकाशित 152 – 185
7. भक्ति मार्ग ज्ञान मार्ग से उत्तम
(उत्तरकांड में गरुड़ - काकभुशुंडि संवाद) 186 – 223

संत्सग प्रवचन - 1

संत - असंत लक्षण

(उत्तराकांड में राम की भरत से ज्ञान चर्चा)
दशहरा सत्संग, 11 अक्टूबर, 1959
(नया प्रवचन टेप से कापी करके)

सब महापुरुषों ने एक ही बात पेश की है। सवाल सिर्फ अनुभव का रह जाता है। जब तक यह आंख खुलती नहीं, सोता हुआ जाग नहीं उठता, यह हकीकत नज़र नहीं आती तब तक यह सब बंधन ही बंधन है। उस के लिए हमें किसी ऐसे पुरुष की संगत में जाना होता है जिस ने इस अनुभव को पाया है। वह क्या करता है? हमारी आत्मा को मन - इंद्रियों से आज़ाद कर के हमें जगा देता है। वह यह देखता है कि यह सब सपने की न्याई (तरह) है। दिखता कुछ और है, हो कुछ और रहा है मगर यह कहानी उस वक्त की है जब अनुभव को पा जाता है। जो जो भी महापुरुष इस तरफ गए हैं इस बात का ज़िक्र तो करते चले गए मगर आखिर क्या ब्यान करते रहे, क्या हमने सब कुछ पा लिया? कहते हैं, नहीं। न इति, न इति, न इति करके छोड़ दिया। गुरु नानक साहब ने इस बात का ज़िक्र करते हुए बहुत कुछ खोल - खोल कर जपजी साहब में बतलाया कि उस की ताकत का ब्यान कर रहे हैं, वह भी जितना बुद्धि - बल परमात्मा ने बरब्शा है। कई कहते हैं कि यह मज़मून बुद्धि का है ही नहीं, इस लिए इस को छेड़ना ही नहीं चाहिए, कई कहते हैं वह जीअ देता है, फिर ले लेता है, कोई कहता है भई दूर आसमानों में है, कोई परिपूर्ण जान कर, और कई तरीकों से आखिर ब्यान कर - कर के हार गए, हुआ क्या? क्या वह ब्यान में आ गया?

सदियों फिलसफी की चुना ओ चुनी रही,
मगर खुदा की बात जहां थी वहीं रही।

Unsaid (लाब्यान) का **unsaid** ही रहा।

कथना कथी न आवै तोट॥ कथ कथ कथी कोटि कोटि कोट॥

अब इस चीज़ को पाने के लिए, महापुरुष दुनिया में आते रहते हैं, लोगों को जगाते हैं। हम मन - इंद्रियों के घाट पर सो रहे हैं, अपने आप से बेसुध - बेरवबर हैं। तो उन्होंने कई तरीकों से पेश किया। इस वक्त हमारे सामने मज़मून यह है रामायण का, आज दशहरा है न। अब दशहरे का मतलब यह है, रामायण तो सब गा लेते हैं भई मगर जिस खूबसूरती से पहले वाल्मीकि जी ने ब्यान किया कई हज़ार वर्ष पहले, वे भेद को जानने वाले थे, तो इस तरीके से एक कहानी की सूरत में पेश किया, भई तुम आज़ाद हो सकते हो। फिर वही सूरत बन गई। जब तुलसी साहब आए, गोस्वामी तुलसी साहब, उन्होंने क्या किया, मानस चरित्र में उस को पेश कर दिया रामायण को मगर पंडितों ने यह समझा कि यह मुखालफत (विरोध) है। इस लिए उन्होंने क्या किया, दोबारा जब आए हैं न, उस वक्त उन को तुलसी साहब कहा। पहले गोस्वामी तुलसीदास कहा, फिर तुलसी साहब। उन्होंने ब्यान किया, “पहले हम आए, हमने चीज़ पेश की, लोगों ने इस की मुखालफत समझी पर हम इस को अब घट रामायण की सूरत में पेश करते हैं।” घट रामायण पढ़िए। उसमें पढ़ने से यह मालूम होता है यह सारा सिलसिला ही संग्राम है जिंदगी का, बस। तो रामायण का अर्थ, क्योंकि रामलीला सभी जगह हो रही है, अगर इस पर थोड़ी रोशनी डाल दी जाए तो ज्यादा अच्छी रहेगी।

रामायण का सिलसिला शुरू कहां से हुआ? आपको पता हो कि नेपाल में त्रेतायुग में सूरजवंशी खानदान के राजपूत राजा राज्य करते थे। यह तारीखी (ऐतिहासिक) वाकेया (घटना) है। गो (चाहे) हमारा

इससे ज्यादा ताल्लुक (संबंध) तो नहीं मगर ताहम (तो भी) एक चीज़ को पेश करना है। इस राज्य को कायम करने वाले महाराज रघु थे। रघुवंशी कहते हैं न रघुकुल। आप के पिता का नाम था देवबाहू और महाराज अज आपके बेटे थे, अज उन का बेटा था। महाराज दशरथ महाराज अज के बेटे और रघु के पोते थे। इस तरह से तारीखी सिलसिला चलता है। महाराज दशरथ के यहां महाराज रामचंद्र जी ने जन्म लिया जो रामायण के हीरो हैं कहो। इस खानदान को सूरजवंशी इस बात से कहा गया है कि महाराज रघु सुखदेव के खानदान में से थे। सुखदेव मुनि चिराग मुनि के बेटे थे और चिराग मुनि सूर्य का लड़का था। इस लिए यह सूर्यवंशी कहलाता है। सूरज देव ऋषि का लड़का और ब्रह्मा का पोता था। तो महाराज दशरथ जी, आगे सिलसिला चलता है जहां से रामायण शुरू होती है। तो इसलिए सूरजवंशी क्यों कहा गया? इसलिए कहा गया है कि यह सूर्य खानदान है। अब रामायण एक बड़ा अद्भुत, आला ग्रंथ है जिसमें हर किस्म की तालीम मिलती है। इस में धार्मिक तालीम भी मिलती है और इस में दुनिया की तालीम भी मिलती है— दुनिया की रहनी - सहनी। इसमें आता है— माता की इज्ज़त कैसी चाहिए, गुरु का ताल्लुक शिष्य से क्या चाहिए, भाई- भाई का कैसा संबंध होना चाहिए, सिख और गुरु का क्या ताल्लुक होना चाहिए। और इस में प्रेम भावना का सब से प्रबल नक्शा पेश किया भीलनी के वाक्ये में, कि भगवान अगर मिलता है तो प्रेम के वश में आकर मिलता है। तो धार्मिक लिहाज़ से बहुत कुछ शिक्षा इस में है, आध्यात्मिक शिक्षा भी दी है— बालकांड आप पढ़िए। उसमें पांचवें और छठे दोहे में संत और असंत के लक्षण व्यान किए गए हैं। जो खल और दुष्ट लोग हैं वे दूसरों के अवगुणों की ओर देखते हैं। जो संत होते हैं वे दूसरों के गुणों को देखते हैं, यही फर्क है। वे (संत) गुणों को देखते हैं, वे (असंत)

अवगुणों को देखते हैं। मगर एक बात वही जो पहले आई थी, बालकांड के सातवें दोहे में चराचर जड़ चेतन जगत जीवों को राममयी जानना चाहिए। यह सब राम का इज़हार (प्रकट रूप) है। राम किस को कहते हैं? जो परिपूर्ण हो और बतलाया—

जड़ चेतन जग जीव सकल राममयी जान।

यह सब राम का ही रूप है।

बंदउ सब के पद कमल सदा ज्योति भगवान॥

मैं सब को नमस्कार करता हूं। यह किन को नज़र आता है? जिन की आंख खुल गई। तो इस गति को पाने के लिए इस में सबसे बड़ी चीज़ जो व्यान की गई तारीखी (ऐतिहासिक) लिहाज़ से, इस का जो दूसरा पहलू है न कि संत क्या व्यान करते हैं यह अलहदा रहा, इस का ज़िक्र किया बालकांड में। तो उस में आता है कि अनामी पुरुष की महिमा गाई है, अनामी, **Absolute**, इज़हार से पहले।

अगुन सगुन दोइ ब्रह्म सरूपा।

निर्गुण और सगुण दोनों ही ब्रह्म के रूप हैं।

अकथ अगाध अनादि अनूपा॥

जो अकथ है, अगाध, अनादि है।

मोरें मत बड़ नामु दुहू तें।

कि मेरे मत में नाम दोनों से बढ़ कर है।

किए जेहिं जुग निज बस निज बूतें॥

यह जो निर्गुण और सगुण बना, किस ने बनाया? वह **Absolute God** जो इज़हार में आया उस से बना न। तो अनामी की महिमा गाई

यहां पर।

अगुन सगुन दोइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा॥

फिर यहां तक कहा कि

निरगुन तें एहि भाँति बड़ नाम प्रभाउ अपार।

निर्गुण से भी यह बढ़ कर है। निर्गुण और सगुण दो तारीफें हैं न।

कहउं नामु बड़ राम तें निज विचार अनुसार॥

अपने विचार के अनुसार से मैं नाम को बड़ा कहता हूं। और आप देखिए राम ब्रह्म के अवतार थे मगर राम और नाम का मुकाबला किया है।

राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥

नाम ने करोड़ों जीवों का उद्धार किया।

भंजेउ राम आपु भव चापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू॥

राम एक पार हुए दरिया पर पुल लगा कर और नाम ने हज़ारों जीवों का उद्धार किया है। फिर क्या कहते हैं:

दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किए पावन॥

अब शोभा दी बाहरी, जंगलों - पहाड़ों में जब गए तो जो संतों की शोभा है वह अपने आप ला - अमित में आनी शुरू हो जाती है। फिर आप देखेंगे फिर यह भी किया कि उन्होंने, राम ने सुग्रीव और विभीषण को राजतिलक दिया। किस लिए? अपनी मदद के लिए। और उन्होंने क्या किया था उनके लिए? उन्होंने (नाम ने) बेशुमार (बेअंत) गरीबों को अपनी शरण में ले कर पार कर दिया। और यहां तक आखिर व्यान किया:

कहौं कहां लगि नाम बड़ाई। रामु न सकहिं नाम गुण गाई॥

कि नाम की महिमा कितनी व्यान की जाए, वह अगर राम भी व्यान करना चाहें, नहीं कर सकेंगे। उस का कारण है जो लाव्यान है वह व्यान में कैसे आ सकता है? गुरु ग्रंथ साहब में यही फरमा गए:

कथना कथी न आवै तोट॥

राम भी एक पावर हाऊस है। जो पोल इज़हार का है वह जितनी पावर का है, उतना ही इज़हार कर सकता है। तो यहां तक व्यान कर गए। अब तारीखी (ऐतिहासिक) लिहाज़ से आप देखेंगे कि तुलसीदास पहले हुए, गोसाई तुलसीदास जी। आपने जो मानस चरित्र की रचना की, आप लिखते हैं कि आप ने संवत् 1618 विक्रमी में पहले - पहल यह ग्रंथ रचा रामायण का, यह घट रामायण तैयार की और इस में संत मत के जो राज़ (भेद) थे न गुप्त, वे खोल - खोल कर समझाये, लेकिन पंडितों और अवाम(जनता) ने इस की मुखालफत (विरोध) की और इस को वेदों और अवतारों की निंदा समझा। था नहीं मगर लोगों ने गलतफहमी से (समझा), तो इस लिए इस हालत में उन्होंने मजबूरन मानस रामायण लिख दी। कि भई जैसे कड़वी हो न गोली, उस पर रवां चढ़ा दो तो बड़ी आसानी से खा लेता है न। और इस में बड़ी भारी राज़ की बातें दी हैं। राम चरित्र को आलमे - ज़ाहिर किया, राम नौवीं के दिन संवत् 1631 में इस को लोगों के सामने पेश किया। रामायण यहां से शुरू होती है। संवत् 1631 से पहले नहीं थी। उसमें उन्होंने फरमाया कि कई कांड रचे - बालकांड में तो उन्होंने सारंख्य शास्त्र व्यान किया। सारंख्य शास्त्र की बड़ी तारीफ (महिमा) की है सब शास्त्रों में। बालकांड में तो सारंख्य शास्त्र रचा, अयोध्याकांड में वैराग व्यान किया है, अरण्यकांड में मीमांशा का वर्णन किया, किञ्चिंधाकांड

में योग का वर्णन किया और सुंदरकांड में न्याय शास्त्र का व्यान किया, लंकाकांड में वेदांत का ज़िक्र किया (और) उत्तरकांड में समाज सुधार का। एक - एक कांड एक - एक purpose (उद्देश्य) के लिए पेश किया है अगर गौर से देखो। हम खाली कहानी सुन लेते हैं न। कहानी के पीछे बढ़ा भारी राज़ छुपा पड़ा है। छः शास्त्रों का ज्ञान रामायण में मिलेगा आप को, और सब से ऊपर महिमा गार्ड अनामी की—

अगुन सगुन दोइ ब्रह्म सरूपा।

ब्रह्म के लफज़ी मायने हैं— विरहा, जो बढ़ रहा है। अरे भई कहां से बढ़ा? उस की background (आधार) कोई होनी चाहिए कि नहीं। वह है अनाम या अशब्द। तो उस का ज़िक्र किया कि यह जो इज़हार में आया, सब उसी का रूप है। असल बात तो यही है। अब अपने - अपने विचार प्रकट किए हैं। बड़े गौर से देखोगे, रामायण या महाभारत में जंग की कहानी को गौर से पढ़ने से यह मालूम होगा कि ये मानसिक कारवाइयां हैं समझे, यानी घट में देवासुर संग्राम हो रहा है, जो ऐतिहासिक रूप है पेश किया गया। जैसे देवता और असुर एक ही पुरुष की औलाद (संतान) व्यान किए जाते हैं न, वैसे ही सूरजवंशी और चंद्रवंशी खानदान एक ही पुरुष के व्यान किए जाते हैं, सुखदेव मुनि की औलाद हैं। ये दोनों एक ही की औलाद हैं। सुखदेव मुनि हकीकत में सूर्य के बेटे चिराग मुनि की लड़की ईला थी, उस में इतिहास आता है कि वह उन की कृपा से लड़का बन गई, फिर लड़की बन गई, ऐसा इतिहास आता है, खैर इस वक्त उस से हमारा ताल्लुक नहीं। तो आखिर चंद्रवंशी ये कहलाए क्योंकि चंद्रमा के पोते थे। ये सुखदेव मुनि वशिष्ठ जी की कृपा से, कहते हैं एक माह औरत बनते थे, एक माह मर्द बनते थे। यह इतिहासों में ज़िक्र आता है। थे या नहीं, हमारी इस से गर्ज़ नहीं, हमारी गर्ज़ से गर्ज़ है इस वक्त। तो पहले स्कंद में महाभारत

के, अध्याय अव्वल (एक) में वर्णन किया है कि नाभि कंवल से ब्रह्मा पैदा हुआ और उस का बेटा मनु पैदा हुआ और मनु के गृह में मारीच और मारीच के शेर नामक लड़का हुआ। शेर से सूर्य ने जन्म लिया, सूर्य का बेटा फिर आगे मनु हुआ। इस मनु की ईला बेटी हुई, आगे जा कर दोनों की मिल जाती है। तो आप देखेंगे कि इस देवासुर संग्राम में देवताओं के साथ 'स' का लफज़ आया है—'स' और दूसरी तरफ जो असुर थे उन के साथ है 'द' का लफज़—दुशासन। देवताओं के लिए 'स' का लफज़ बरता है और उन के लिए 'द' का, जैसे दुर्योधन, सामंत। राम के लफज़ी मायने हैं— सब में रमा हुआ। कबीर साहब ने इसका निर्णय किया है—

एक राम दशरथ का बेटा, एक घट घट में बैठा।

एक राम का सकल अकारा, एक राम सबहुं से न्यारा॥

जो सबसे न्यारा है वह संतों का राम है, अनुभवी पुरुषों का। बाकी जैसे - जैसे अवतार दुनिया की तकलीफों को हरने के लिए आए, अपना - अपना काम किया, आखिर उसी ताकत को लेकर किया, हमारे मन में सब के लिए इज्ज़त है। अब ये नामों की तरफ देखोगे, वशिष्ठ किस को कहते हैं? जिसने इष्ट से विसाल (मिलाप) किया, इष्ट से वसल कर गया, उस का नाम 'वशिष्ठ।' फिर विश्वामित्र—विश्व का जो मित्र हो। ऐसे नामों से मालूम होता है कि यह कोई अंतर का ही झगड़ा है। जो लंका युद्ध में राम को (जीत) हुई तो अंहकार हो गया। उस वक्त, आप को पता है, रावण ने विभीषण का रूप धारण करके, (फिर रावण) राम और लक्ष्मण को ले उड़ा। ऐतिहासिक बात है। हनुमान कहते हैं जिसमें हंगता (अहंकार) न हो, दीनता से उन को

छुड़ाया। तो यह व्यान करने से यह नतीजा निकलता है कि यह हमारा जीवन का संग्राम है जो सब के घट के अंतर हो रहा है। जब तक हकीकत खुलती नहीं, बाहरी कहानी कहानी ही है। सारी उम्र लोग देखते रहते हैं, असलियत की (तरफ) न नज़र मारने के सबब से (फायदा नहीं उठाते)।

रामायण एक बड़ा उत्तम ग्रंथ है फिर मैं अर्ज करूँ। रामायण के रहस्य क्या हैं? दशरथ—दस रथ—शरीरधारी रथ। इस के दस द्वारे हैं, नौ प्रकट हैं, दसवां गुप्त है। दशरथ—पांच ज्ञान इद्रे और पांच कर्म इद्रे हैं। दशरथ—दस इद्रे इस रथ को खैंच रहे हैं। इस के तीन गुण आगे बनते हैं, तीन स्त्रियां दशरथ की बताई हैं। जो कौशल्या थी वह सत् का अवतार थी, सतोगुणी नमूना था कौशल्या का जिस से राम पैदा हुआ। सुमित्रा जो थी वह रजोगुणी थी और कैकेई थी तमोगुणी। तीन गुणों का इज़हार बतलाया कहानी की सूरत में। राम कौशल्या के बेटे थे, निज मन कहो, उनमें सतोगुण प्रबल था। जहां भी कहीं गुस्से में आए, लक्ष्मण आए, राम नहीं आए। तो इस लिए रजोगुणी अंश, लक्ष्मण सुमित्रा के बेटे थे न, रजोगुण में गुस्सा होता है। अब देखिए, जहां कहीं भी लड़ाई हुई, लक्ष्मण ने सूर्पनरवा का नाक काटा, झगड़ा हो गया। यह जो लख मन या पिंडी मन कहो, इस का कारण बना पिंडी मन। इस के बाद धनुष तोड़ने के बाद परसुराम से झगड़ा किस ने किया? लक्ष्मण ने। राम ने नम्रता से उसको शांत किया, सतोगुणी थे न। भरत जी राम के भाई थे, लेने के लिए आए तो लक्ष्मण फिर बिगड़ गया, कहने लगा, “झगड़ा करने को आया होगा।” जहां देखो लक्ष्मण की लड़ाई है। रजोगुण का असर है। जहां भी रजोगुण होगा, वहां लड़ाई होगी। राम थे सतोगुणी, हमेशा समझाते रहे, अरे भाई! यह बात ऐसे नहीं। तीर कमान लेकर तैयार हो गया जब भरत जी उनको लेने के लिए आये, ‘‘देखो

जी फौज लेकर आ गया है हमें पकड़ने को।’’ तो सूर्पनरवा का नाक भी उसी ने काटा। हर बार राम ने उसको रोका। मगर ज़ाहिरा शरीर में दो ही मन रहते हैं—एक पिंडी मन, एक ऊपर निज मन कहो, वह हमेशा समझाएगा। अंतर एक मन कहता है भई यह कर ले, एक कहता है भई ऐसा न करना (वह भी साथ रहता है)। तो राम कह दो, निज मन, सतोगुणी निज मन को सीता रूपी आत्मा मिली कहो जो मन इंद्रियों के घाट पर घिरी पड़ी है। आपको पता है सीता कहां से मिली? पृथ्वी से। अरे, यह (शरीर) पृथ्वी ही तो है और क्या है? इस में से सुरत मिली। तो इस से मिलने से नतीजा क्या हुआ आखिर? जब रावण से आज़ाद होकर आई है सीता, तब इसकी असल सुरत जाग उठी। अब यह पिंडी है। सुरति अभी हमारी पिंडी बनी रहती है। तो निज मन रूपी राम ने, सीता कहां रही? लंका में। लंका का क्या स्वरूप वर्णन किया है? त्रिकुटी जिसको कहते हैं उस का रंग—रूप सुनहरी था। गोल्डन कहते हैं सोने की बनी हुई थी। अंतर के इशारे दिए हैं। गोल्डन—सुनहरी प्रकाश है क्योंकि वहां उगते सूर्य की तरह सुनहरी रोशनी मिलेगी। जब पिंड—अंड से पार चलो तो वैसी रोशनी आती है। तो सुरत जब वहां से, मेघनाद आप को पता है, किस को कहते हैं? बादल की गर्ज़, त्रिकुटी देश का ज़िक्र किया है, जहां पर सूरज का सुनहरी रंग का प्रकाश है। गायत्री मंत्र में इस का ज़िक्र आया है—आता है न—तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो। आगे ज़िक्र करके बड़ा साफ कर दिया है। तो वहां की रसाई का सवाल है। वहां पर प्रणव की ध्वनि हो रही है बादल की गर्ज़ की तरह। आखिर यहां तक जीवात्मा को पहुंचने के बाद बहुत कष्ट उठाना पड़ता है। यहां तक मुश्किल है। जब इस से आगे चले जाओ फिर ‘पहले विपता बहुतक भोगी जब लग चढ़े न त्रिकुटी पार।’ पिंड, अंड, त्रिकुटी के पार चढ़े तब कुछ होश आती है नहीं तो कशमकश लगी

रहती है। त्रिकुटी पार होने का मतलब दसवां द्वार पारब्रह्म मंडल जिस को अव्याकरण कहते हैं वह राज्य करता है। आए अविद्या तन के भीतर—यह स्वामी जी महाराज ने थोड़ा इशारा देते एक शब्द में बताया है। ‘राज किया दस द्वार’—इस के राजा बने ना।

इस के बाद जब सुरत अयोध्या में राम को छोड़ कर, फिर आप को पता है कि सीता राम को पीछे छोड़ गई, समा गई। निज मन के दायरे के भी ऊपर वह अव्यक्त जो हालत थी न, जिस को अशब्द कर के व्यान किया महात्माओं ने, याद रखो सुरत भी जब तक सतोगुण न धारण करे, तब तक कल्प्याण नहीं, तामसिक हालत और राजसिक में इस का कल्प्याण नहीं। आप देखिए, इन्सान के अंतर दो मन हैं—एक अंडी मन, एक ब्रह्मंडी मन। ब्रह्मंडी मन इस को समझाता है, भई यह बात ठीक नहीं, ऐसा न करना मगर आत्मा मन के अधीन है, अंडी मन ब्रह्मंडी मन के अधीन है, मन आगे इंद्रियों के अधीन है। जब आत्मा मन से भी जुदा होती है तब अपने आपे का ज्ञान इस को हो जाता है। यह जागृति का वाकेया है दर्जे—ब—दर्जे। तो भगवान राम जब वापस आए हैं, सीता को इस त्रिकुटी से पार कह दो, लाए हैं, फिर आके राज संभाला। यह आता है जिक्र कि आखिर सीता राम को छोड़ जंगल में चली गई और वहां पृथ्वी में समा गई। जब आए हैं तो शहर वाले लोग, बड़ी कुदरती बात है कि शहर वाले लोग जो उन के इंतज़ार में थे वे बड़े बिहबल (व्याकुल) थे। तो भरत जी आए, तो कैसे उन्होंने मिलाप किया और क्या व्यान किया, वहां थोड़े से लक्षण व्यान किए हैं संत और असंत के। आखिर निज मन थे न, हर एक चीज़ को समझते थे और क्या कहना चाहिए, मर्यादा पुरुषोत्तम थे। एक कहानी रचनी थी, नहीं तो मुआफ करना, राम को रोना काहे का। सीता आए, सीता किस ने देखी है, समझे? बताया न, भई राम ब्रह्म के अवतार थे। हिन आया,

मारीच ने शक्ल धारण की सोने के हिरन की। सीता ने कहा, “‘इस हिरन को पकड़ना है।’” तो रामचंद्र जी उसके पीछे गए। अरे भई! मुआफ करना, एक खेल रचना था न, भाई कभी सोने का भी हिरन हो सकता है? मगर सीता के कहे पर चले गए। ब्रह्म थे न, अवतार त्रिलोकी के जानने वाले थे, फिर क्यों भूल में आ गए? एक स्टेज पर जब एक्टर (कलाकार) आता है वह काम करता है। दुनिया इसी तरह भूलती है। फिर लक्ष्मण ने, वे चले गए, धोखा था न। धोखे में, फिर जब वापस वहां से आवाज़ आने लगी, सीता ने कहा, “‘तुम्हारा भाई कहीं ज़रबी हो गया, भागो।’” लक्ष्मण ने कहा, “‘नहीं, राम भूलने वाला नहीं है, यह कभी हो नहीं सकता।’” कहने लगी, “‘नहीं, तुम्हारी नज़र मंद हो गई है।’” वहां ऐसा कुछ व्यान किया है। वे कहने लगे, “‘माता, यह बात नहीं है।’” खैर, इतराज़ करने पर एक लकीर वहां डाल दी। इस से बाहर तुम नहीं आना, कोई बला नहीं खाएगी। आप को पता है, रावण साधु का वेश धारण कर उस लकीर के अंदर नहीं आया। अगर सीता उस लाईन से पार न जाती तो पकड़ी न जाती। हमारी सुरत यह इन दस द्वारों में कैद है, अगर इस से बाहर न आए तो कौन पकड़े? इंद्रियों के घाट के ही बंधन हैं। इस लकीर से हम बाहर आ जाते हैं, कभी एक इंद्री पकड़ कर ले जाती है, कभी दूसरी, कभी तीसरी, मन के अधीन हो कर। तो यह ठड़े दिल से विचारने वाली बात है, रोना हमारा ही है भई। सच्ची बात है। इन्सान के अंतर रामायण हो रही है, युद्ध हो रहा है, संग्राम हो रहा है। कहीं पर दुःशासन लफ़्ज़ ‘दुः’ का add (जोड़) दिया, जो असुर थे। कभी एक जीतता है, कभी दूसरा जीतता है। मगर आप को पता हो, वेदों में एक जिक्र आता है कि देवों की और दैत्यों की आपस में लड़ाई हो गई, सुर और असुरों की। कहते हैं वे भाग कर पहले वेदों में गए, यह गाथा आती है। मतलब क्या? अरे भई, तुम अगर

जन्म - मरण से आजाद हो कर हकीकत को पाना चाहते हो तो पढ़ने - लिखने से नहीं होगा। वेद, ग्रंथ, पोथियां चाहे सब जो चाहे पढ़ लो, आलिम - फाजिल (विद्वान) भी ऐसे ही कैद हैं जैसे और कैद हैं, बल्कि और ज्यादा कैद हैं मुआफ करना, क्योंकि हकीकत को जानने वाला कुछ और होता है। अगर तुम मंत्रों के जाप ही में लग जाओ, जाप करने से भी तुम बच नहीं सकते पर जाप में जिस चीज़ का ज़िक्र है उस को पाने से बच सकते हो। गायत्री मंत्र में दिया है 'तत्सवितुर्वरेण्यं'। 'भर्गो' का ज़िक्र आता है— सूर्य । अभी मैंने ज़िक्र किया जब वह प्रकाश होता है तो गायत्री मंत्र सलामती देने वाला हो जाता है। अगर एक चीज़ ही न मिले तो उस के मंत्र का हज़ार - लाख बार जाप कर लो तो भी प्राप्ति तो नहीं है। बात समझे, बात क्या थी? इशारे तो दिए हैं—

वेद कतेब कहो मत झूठे, झूठा जो न विचारे॥

एक उपनिषद में का इस बात का ज़िक्र किया है कि जो वेदों को बगैर गुरु के पढ़ता है, वह वेदों का चोर है चोर, ये लफज़ बरते हैं क्योंकि (गुरु के बिना) सही मायने (समझ) नहीं आते। अनुभवी पुरुष इशारे से काम लेते हैं। क्योंकि सही मायने गुरु के बगैर समझ नहीं आएंगे तो गलत मायने बतलाएंगे। जितने लोग गुमराह होंगे सब का पाप उस के सिर पर होगा। अब आप समझें। ग्रंथ - पोथियां हम पढ़ सकते हैं, हकीकत को जान नहीं सकते जब तक किसी समझे हुए से न सुनें जिस ने कि उस को पाया है नहीं तो आलिम (विद्वान) लोग एक ही के पांच - पांच अर्थ कर देंगे भई, पांच हो तो नहीं सकते। कहने वाले की भी एक ही से मुराद (अभिप्राय) होती है।

महापुरुष आए, उन्होंने खोल - खोल कर सादी बोली में, उस वक्त की प्रचलित ज़बान में उसी बात को पेश किया ताकि हर कोई समझ

सके, और बात कोई नहीं। रामायण देखिए, संस्कृत के आलिम (विद्वान) थे, संस्कृत में लिख सकते थे मगर हिंदी को पेश किया ताकि लोग समझ सकें। तो पुरातन ग्रंथ जिस ज़बान में हैं वह ज़बान (भाषा) आज रायज़ (प्रचलित) नहीं गो (चाहे) हम उस को जिंदा करना चाहते हैं। अरे भई! जो प्रचलित ज़बान है उसमें लोग ज्यादा समझेंगे। इसलिए गोस्वामी जी ने हिंदी में पेश किया। तो जब जब महापुरुष आए, उन्होंने उस वक्त की प्रचलित ज़बान में चीज़ वही पेश की। **Truth is one** (सच्चाई एक है)। सिख गुरु साहब आए। उन्होंने पंजाबी ज़बान में, प्रचलित ज़बान में पेश किया। आप देखिए, बिल्कुल **parallel** रव्याल (समानान्तर विचार) मिलेंगे। जो सच का मुतलाशी (जिज्ञासु) है, **Parallel study of religions** (धर्मों का समानान्तर अध्ययन) रखता है, वह कहता है, एक ही बात है। एक ने एक तरह से व्यान कर दी, ज़बांदानी (भाषा) अपनी, तर्जेव्यान (व्यान करने का ढंग) अपना मगर मज़मून वही। अरे भई, हम एक ही के पुजारी हैं, झगड़े काहे के, हमारे पैदा किए हुए हैं न। अनुभवी पुरुष तो पैदा नहीं करते। न वह समाजों को तोड़ता है, न नई बनाता है। जब भी ऐसा पुरुष दुनिया में आता है तो दुनिया को क्या उपदेश देता है? वह जगत - गुरु होता है।

समाज बड़े **noble purpose** (पवित्र उद्देश्य) से बनाए गए थे, मैंने अभी अर्ज़ किया था। इन का काम यह था कि मनुष्य जीवन हमारा सुख से व्यतीत हो। उस का रामायण में ज़िक्र किया हर पहलू के साथ और ज्ञान का भी अनुभव छः शास्त्रों के मुताबिक इस में व्यान किया है। अब जो उस राज़ (भेद) से वाकिफ (जानकार) हैं वे तो इस रामायण से क्या कुछ लेते हैं। जो किस्सा - कहानी पढ़ छोड़ते हैं या राग - रंग देखते हैं वे पटाखे छोड़ लेते हैं, बस । तो महापुरुष आए, उन्होंने यह

चीज़ पेश की। जिस ज़बान में की, मतलब से मतलब है। और भई! तुम आत्मा - देहधारी हो, बड़ी मोटी बात, **right understanding** (सही नज़री) पैदा करो। आत्मा चेतन स्वरूप है, मन - इंद्रियों के घाट पर धिरी पड़ी है, जिस्म का रूप बनी बैठी है, जगत का रूप बन कर अपने - आप को भूल चुकी है। पृथ्वी से सीता पैदा हुई, यही है न। तो सुभति के साथ इस की शादी हो जाए अगर इस को **right understanding** देता है। पिंडी मन इस को गुमराह करता रहे, कोई असर नहीं। कोई महात्मा हमें ऐसा मिल जाए जो हमें त्रिगुणात्मक अड़े से ऊपर ले जाए, पिंड से पहले ऊपर आए, फिर होश आएगी, फिर अंड से ऊपर, फिर ब्रह्मांड से ऊपर। अपने आप को जब जानेगा फिर हकीकत को जानेगा, **Cosmic Consciousness** में जाग उठेगा। जब वह होगी, तो वह भी आखिर **Cosmic** है, उस का भी तो आधार होना चाहिए, वह **Super consciousness** है। उस को अनाम, अशब्द कर के लफज़ों से व्यान किया है। बाकी महात्मा अपने - अपने तरीके से थोड़ा **explanation** (व्याख्या) देते हैं, किसी को थोड़ा ऊपर व्यान किया, किसी को थोड़ा नीचे किया, बात वही है। तो झगड़ा कोई है नहीं, हमारे किए हुए हैं। **Right understanding** से देखो, सब को एक जैसे जिस्म दिए गए। कोई फर्क है? कबीर साहब अनुभवी पुरुष थे। तो ब्राह्मण कहने लगा, हम बड़े हैं। और भई —

ब्राह्मण तू ब्राह्मणी जाया, आन बाट काहे नहीं आया।

पैदा होना एक तरह से, मरना एक तरह से, बाहरी बनावट एक जैसी, एक जैसी जिस्म के अंतर की बनावट। तो परमात्मा ने तो आत्मा - देहधारी बनाए। समाज इस लिए बनाए गए थे कि परमात्मा ने एक जैसा जिस्म सबको दिया है। जिसने अपनी आत्मा को मन - इंद्रियों से आज़ाद करके अपने आप को जाना, प्रभु को पहचाना, उस का

कल्याण, वह ब्राह्मण है सच्चे मायनों में। जिस ने जैसा कर्म किया, वैसा कहलाया। मुल्क की रक्षा करके क्षत्रिय बन गए, लोगों को खाने - पीने के सामान मुहैया (उपलब्ध) किए तो वैश्य बन गए। बाकी सेवा का काम करने वाले सब शूद्र बन गए। और (पुराने) ज़माने में यह नहीं था। शूद्र लोग ब्राह्मण बन सकते थे। आज तुम फ्रूट बेचने लग जाओ तो फ्रूट - फरोज़ बन जाओगे कि नहीं, चमड़े का काम करो तो चमार बन जाओगे। जैसा कर्म किया वैसा कहलाया। मगर संतों की नज़र से सारी दुनिया ही चमार है। क्यों? आप को पता है राजा जनक को जब अष्ठावक्र ने ज्ञान दिया है तो क्या कहा। सब हंस पड़े, उन का जिस्म ज़रा बेडौल था। आठ बल पड़ते थे—अष्ठावक्र। देखो भई, यह कोई मामूली बच्चे की बात थोड़े ही है अनुभव का देना। और, अनुभवी पुरुष थोड़ा अनुभव दे सकता है, फिर इस को दिनों दिन बढ़ाना होता है। तो सब हंस पड़े, यह कोई बच्चों की बात थोड़े ही है अनुभव का देना। उन का जिस्म बेडौल सा था, लोग हंस पड़े। कहने लगे कि राजन्! तुम को ज्ञान चाहिए। कहने लगे, “हां महाराज।” “तो फिर इन चमारों की सभा को क्यों इकट्ठा किया है जिनकी नज़र मेरे चमड़े पर है, मेरी आत्मा पर नहीं।” अब आप देखेंगे नज़रिया (दृष्टिकोण) क्या है? **Right understanding** से काम बनेगा। सहीनज़री सहीनज़री वालों से मिलेगी। उन के लिए यह कोई झगड़ा नहीं।

यहां पर कई लोग आते हैं, भई कौन सा मंदिर बनाया है? भई यहां मंदिर है (शरीर) और नीचे ज़मीन ऊपर आसमान, सारा जगत ही हरि मंदिर है। हम भूल में जा रहे हैं, इस से निकलो। बुद्धि से तो निकलोगे, **theory** (सिद्धांत) से समझो। निकलोगे जब **self analysis** (आत्म - साक्षात्कार) होगा। जब सहीनज़री बन जाएगी, सब आत्मा - देहधारी हैं, झगड़े काहे के रह गए। कुत्तों - बिल्लों के अंतर भी

वही। नामदेव के मुतलिक आता है - रोटी पका रहे थे, एक कुन्ता रोटी लेकर भाग गया। कोई कहता है दाल - भाजी लेकर पीछे भागे, कोई कहता है धी की कटोरी ले कर पीछे भागे, भगवान् स्त्री न खाइए। हमारी नज़र में वे पागल नज़र आते हैं, मुआफ करना मगर हैं तो हकीकत - परस्त कि नहीं। स्वामी रामतीर्थ से पूछा गया, “अरे भई! जो तुम व्यान करते हो यह कोई पागलपन ही न हो।” तो कहने लगे, “भई, इस पागलपन पर उंगली उठाने का उस को हक है जिस को इस का भी कुछ तजरबा हो, दोनों तरफ से तजरबा हो,” तो फिर वह मुकाबला ठीक कर सकता है न। उस पागलपन का पता ही नहीं है। तो यह है रामायण में। जिस बात को समझना था, जिन्होंने समझा, उन की सोहबत में बैठ कर हकीकत को पाना था, अपनी आत्मा को पिंड - अंड से पार त्रिकुटी पार, दशम द्वार में ले जा कर आखिर निज मन को भी छोड़ कर हकीकत में वासिल करना था।

आखिर मन किस को कहते हैं? मन भी आखिर बड़ा, ब्रह्म किस को कहते हैं? जो बढ़ रहा है। एक कुटस्थ ब्रह्म भी है न, कि नहीं। जो कुटस्थ ब्रह्म है, पारब्रह्म जिस को कहते हैं आगे स्टेज है। संतों ने इस का **detail** में (खोल कर) व्यान किया है। तो उन्होंने सिर्फ कहा, “भई, ब्रह्म ही सब कुछ है।” पारब्रह्म भी तो लफज़ बरता है। मेरे पास एक दफा, लाहौर की बात है, बहुत सारे आर्य समाजी भई आए। कहने लगे, “भई, ब्रह्म से परे कुछ नहीं।” “बहुत अच्छा साहब, ब्रह्म तक तो हम साथी हैं कि नहीं, आगे हुआ तो चल पड़ा, नहीं, तो तुम्हारा आदर्श तो पूरा हो गया कि नहीं, झगड़ा काहे का।” झगड़े तो न-समझी के हैं, **right understanding** के न होने से। सहीनज़री बन जाए तो सही रव्याल बनेंगे, सही रव्याल से सही ज़बान बनेगी और सही ज़बान से **right conduct of life** (सही जीवन) बन जाएगा।

झगड़ा ही कोई नहीं रहेगा। यही एक **background** (पृष्ठ भूमि) है जिस को हम भूल चुके हैं। समाज इसी गर्ज़ के लिए बनाए गए थे मगर आमिल लोगों की कमी से लकीर के फकीर लोग बन गए, समाजों के पुजारी बन गए, परमात्मा किनारे रह गया।

चाले थे हरि मिलन को बीच ही अटकेयो चीत।

जब - जब अनुभवी पुरुष, ऐसे लोग आते हैं न, वे तो आत्मा के लैवल से देखते हैं। जो समाजों के पुजारी होते हैं, कहते हैं भई, यह हमारी रोज़ी में खलल डालने लग गया। वे डडे लेकर गिर्द हो जाते हैं। कबीर साहब ने एक जगह ज़िक्र किया है कि एक हंस कोधरे, कोधरा बड़ा मामूली दर्जे का अनाज होता है, के खेत पर आ बैठा तो ज़िंमीदार डंडा ले कर गिर्द हो गया। “अरे भई! हट जाओ यहां से।” कहते हैं, भोले ज़िंमीदार को पता ही नहीं, हंस तो मोती खाते हैं, कोधरा खाते ही नहीं। अनुभवी पुरुष जब आते हैं, आप की समाजों को न बनाते हैं, न तोड़ते हैं। वे कहते हैं सब आत्मा - देहधारी हैं। समाज तो इन्सानों ने बनाए, तुम्हारे लिए बनाए गए थे, तुम तो समाजों के लिए नहीं बनाए गए थे। **Man is the oldest.** (इन्सान सब से पुरातन है।) अब आप देखेंगे, नज़रिया क्या है, बन क्या रहा है? वही बड़े **noble purpose** (पवित्र उद्देश्य) से समाज बनाए गए ताकि इन्सान की जीवन - यात्रा सुख से व्यतीत हो। अरे! सुख से क्या व्यतीत, पाकिस्तान बना। चौदह लाख के मुर्दों के ढेर पर हम खड़े हैं। अब भी होश नहीं आ रही। आगे मालूम नहीं और क्या बनेगा, जो हालत जा रही है। तो आज इस बात की बड़ी भारी ज़रूरत है कि इन्सान होश में आएं। समाजों के लैवल से नहीं, आत्मा के लैवल से। तब तो कुछ बन सकता है, नहीं तो बुरी गति होगी। बाकी दूसरा पहलू कि हमारी आत्मा, हम चेतन - स्वरूप हैं, इस की खुराक अगर हो सकती है तो महाचेतन प्रभु, **bread of life**,

आत्मा को अगर संतुष्टि होगी तो प्रभु को मिलने से होगी। जड़ पदार्थों से न हुई, न हो सकती है। तो यह है अनुभवी का (नज़रिया)। जब ऐसे अनुभवी पुरुष दुनिया में आते हैं वे देखते हैं दुनिया की हालत क्या बन रही है। वे कहते हैं भई, सिख भाइयों में आता है—

राज करेगा खालसा, आकी रहे न कोय।

खालसे लोग जो हैं, वे राज्य करेगे। खालसा किस को कहते हैं? शकल धारण करने वाले को नहीं (कहा) भई। खालसा वह है—

पूर्ण जोत जगे घट महिं तहि खालसा तहि नखालस जानो।

जिस के अंतर ज्योति का विकास पूर्ण हो गया, वह खालसा। मैं पाकिस्तान में गया। मैंने उन को कहा, “मैं चाहता हूं भई, तुम्हारा पाकिस्तान, ‘पाकिस्तान’ पाकों (पवित्र लोगों) के रहने की जगह बन जाए और ‘खालिस्तान’ खालिस (पवित्र) रहने वालों की जगह बन जाए तो दुनिया में सुख न हो जाए।” बाहरी बनावट का सवाल नहीं। फिर आगे कहते हैं जो उनकी शरण में आएंगे वे बचेंगे, बाकी सब गर्दिश (धूल) में रहेंगे। अरे! पवित्र आत्मा ही हमेशा राज्य करती रही है, दिलों पर राज्य करती है। बादशाह तो जिस्मों पर राज्य करते हैं, वे दिलों पर राज्य करते हैं। कबीर साहब आए, लाखों जीव कबीर के पुजारी हैं। उस के माता - पिता का नाम भी पता नहीं किसी को मुआफ करना। ईसा आए, उस के माता - पिता का किसी को नाम पता नहीं। हज़रत मुहम्मद साहब आए। कौन जानता है उन के माता - पिता कौन थे? मुसलमान भाई शायद जानते हों। ये जो अनुभवी पुरुष आए, सारी दुनिया के दिल पर राज्य कर रहे हैं, अपनी - अपनी जगह। तो संतों का राज्य तो भई हमेशा ही अटल रहा है, है और रहेगा।

हां, जो संत हैं उन के लक्षण क्या होते हैं? अब यह सवाल रहा।

भगवान राम जब वापस आए हैं न, रामायण में बड़ा अच्छा सा दिया है, तो वह अब आप को सुनाएंगे। आधे घटे में खत्म हो जाएगा। भरत जी सवाल करते हैं कि भई आप बताओ, संतों के लक्षण क्या हैं और असंतों के क्या हैं? समझने वाली बात है। संतों का राज्य होगा न, खालसा कहो, पाक (पवित्र) पुरुषों का कहो। वे संत कैसे होते हैं? गौर से सुनिए। रामचंद्र जी का भरत को उपदेश समझो। क्योंकि आज दशहरा है, थोड़ा इसी के मुतलिक (संबंधी) ही पेश कर दिया जाए। मतलब से मतलब है, चीज़ तो वही एक है सब जगह। एक चीज़ को पेश कर दिया जाए ताकि रामलीला का भी पता लगे, रामलीला असल बात क्या है। कि संतों का राज्य होगा और असंत कौन होते हैं, यह परख कैसे बनेगी? व्यान करेंगे। गौर से सुनिए।

(1) सनकादिक विधि लोक सिधाए। भ्रातन्ह राम चरन सिर नाए॥

कहते हैं पहले सनकादिक वगैरा को मिले थे, वे तो चले गए ब्रह्म को, भाइयों ने रामचंद्र जी के चरणों में शीश निवाया। भरत जी जो थे खड़े हैं हाथ जोड़ कर। क्या कहते हैं—

(2) पूछत प्रभुहि सकल सकुचाहीं। चितवहि सब मारुतसुत पाहीं॥

यानी सब ही रामचंद्र से कुछ पूछना चाहते हैं मगर शर्मिते (सकुचाते) हैं। हनुमान की तरफ बार - बार देखते हैं, यह कुछ कहे। दिल में वे जानना चाहते हैं कि भई आप की इतनी बुद्धि, आप लंका को जीत कर आए, सीता को वापस लाए, सुनना चाहते हैं, कुछ पूछना चाहते हैं मगर व्यान नहीं करते, शर्मिते (सकुचाते) हैं। हनुमान की तरफ ज़रा कुछ देख रहे हैं कि तुम ही लफज़ों में कुछ कहो।

(3) सुनी चहहि प्रभु मुख कै बानी। जो सुनि होए सकल भ्रम हानी॥

वे यह चाहते हैं कि रामचंद्र जी की ज़बान से कुछ सुनें ताकि

जितने शक - सकूक हैं सब दूर हो जाएं क्योंकि जो भी इस गति का मालिक है न, (स्पष्ट) चीज़ पेश करेगा न। इस लिए वे सुनना चाहते हैं।

(4) अंतरजामी प्रभु सभ जाना। बूझत कहु काह हनुमाना॥

रामचंद्र जी भांप गए भई ये क्या चाहते हैं। हनुमान जी से कहने लगे, कहो भई ये क्या कहते हैं, तुम कहो। जी—

(5) जोरि पानि कह तब हनुमंता। सुनहु दीनदयाल भगवंता॥

तो हनुमान ने हाथ जोड़ कर अर्ज़ की कि ऐ महाराज! दीनदयाल भगवान! सुनिए, ये क्या कहते हैं।

(6) नाथ भरत कछु पूछन चहहीं। प्रस्न करत मन सकुचत अहहीं॥

कहते हैं, ऐ नाथ! भरत जी कुछ पूछना चाहते हैं मगर हिचकिचाते हैं। आप कुछ नहीं कह पाते। जी —

(7) तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ। भरतहि मोहि कछु अंतर काऊ॥

तो राम जी हनुमान से कहते हैं, तुम मेरे स्वभाव को जानते हो। मेरे और भरत में मुझे कोई फर्क नहीं लगता। मेरा और उस का दिल एक है, दुनिया समझे या न समझे। जी—

(8) सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना। सुनहु नाथ प्रनतारति हरना॥

राम की यह बात सुन कर भरत जी ने उनके पांव पकड़ लिए रामचंद्र जी के और कहने लगे, ऐ भक्तों के दुख दूर करने वाले स्वामी! सुन, मैं क्या कहता हूँ?

(9) दोहा— नाथ न मोहि सदेह कछु सपनेहुं सोक न मोह।

केवल कृपा तुम्हारिहि कृपानंद सदोह ॥

कहने लगे, हे नाथ! मुझे सपने में भी कभी भ्रम नहीं हुआ। ऐ सच्चिदानन्द प्रभु! सिर्फ आप ही की मेहरबानी से यह भी बात है कि यह कभी नहीं हुआ। गो (चाहे आप) चले गए बनवास के लिए, मैं पीछे रहा। मुझे राज्य के लिए कहा वजीर ने मगर मेरे दिल में यह कभी नहीं आया कि राम मेरे मुकाबले में हैं। चुनांचे आप को पता है, इतिहास बतलाता है कि गए (राम को लेने वन में), आप राज्य करो। वे नहीं आए, तो कहते हैं खड़ावें (जूते) दे दो। तरक्त पर खड़ावें रखवीं, आप नीचे बैठ गए। यह भाई - भाई का सलूक है। सबक सीरवो। भ्रातृ - भाव का कितना ऊंचा उपदेश है सदाचार के लिहाज़ से। हम भाई - भाई लड़ रहे हैं, मुआफ करना। बच्चे, लड़के और पिता लड़ रहे हैं। माता और बच्चों का प्यार देखिए। कैकेई के खाली कहने से, पिता को भी नहीं कहा, चले गए आज्ञा का पालन करने। जब लोगों ने कहा कि देखो, कैकेई ने तुम्हारे साथ दुश्मनी की है। कहने लगे, नहीं, मेरे प्रारब्ध कर्म थे, कैकेई का इस में कोई कसूर नहीं। फिर भी, जब वापस आए हैं, आप को पता है, सबसे पहले किस को मिलने गए हैं? पहले कैकेई को मिलने गए। ये हैं लक्षण। उन के दिल में किसी के लिए वैर नहीं। भाई के लिए ये प्यार है। कहने लगे, ऐ हनुमान! तू जानता है कि मेरे और भरत में कोई फर्क नहीं। अब भरत भी कहता है मेरे दिल में कोई नहीं। दिल - दिल का साक्षी होता है न। हां, लक्ष्मण डंडा लिए फिरता था, मुआफ करना। तो जो चीज़ हकीकत हो, जो ज्ञात हो यह कह दो। जो निज मन है न, सुमति जिस को कहते हैं, वह तो ठीक समझता है और दिल दिल को जान भी लेता है। दूसरा क्या समझेगा? तो बड़े प्यार से कहते हैं कि मैं अब आप को अर्ज़ करता हूँ।

(10) करउं कृपानिधि एक ढिठाई। मैं सेवक तुम्ह जन सुखदाई॥

अब देखिए एक ही माता के बच्चे हैं, कैकेई माता के, तीन रानियां

थीं न, ऐतिहासिक तौर से मैं पेश कर रहा हूं, मगर कितना भाव है? कहते हैं कि ऐ कृपा सागर! मैं बेअदबी कर रहा हूं। आज कहेंगे, भाई साहब निकल जाओ कि मैं गुस्ताखी करने लगा हूं। मैं सेवक हूं और आप सेवकों को सुख देने वाले हो। मैं आप का दास हूं। मुझे यह बनता तो नहीं कुछ कहना मगर ताहम (तो भी) गुस्ताखी समझ लीजिए, मेरे दिल में जो मैं पूछना चाहता हूं वह बताइए।

(11) संतन्ह की महिमा रघुराई। बहु विधि वेद पुरानन्ह गाई॥

कि ऐ रामचंद्र जी! संतों की महिमा वेदों और पुराणों ने कई तरीकों से, बहुत तरह से गाई है। संतों की महिमा वेद, शास्त्र, ग्रंथ - पोथियां गाती चली आई हैं। आप को पता है, सुखमनी साहब गुरु अर्जुन साहब ने जो रची है, तीन अष्टपदियां इसी महिमा पर गाई हैं। साधु की महिमा, ब्रह्मज्ञानी की महिमा और संत की निंदा की। अठारह अष्टपदियां जो पहले लिखी हैं उस में तीन अष्टपदियां सिर्फ इस पर दी हैं। सब वेद - शास्त्र यही कहते हैं। जो गुरु को ब्रह्म का स्वरूप जानता है, इसमें कोई शक नहीं वही हकीकत को पा सकता है। अरे भई मुआफ करना, जिस पोल पर वह महात्मा, यह घड़ी मेरे हाथ में है, कौन पकड़ रहा है इसको? मेरा हाथ। मेरा हाथ तो मेरे से जुड़ा है, मैं पकड़ रहा हूं। अरे, उनके अंतर प्रभु बैठा है, हमारे अंतर भी है। हमारे अंतर गुप्त है, उनके अंतर प्रकट है।

सब्जो घट मेरे साइयां सुन्नी सेज न कोइ॥

बलिहारी तिस घट के जां घट परगट होइ॥

जो प्रकट है, प्रकट कर देता है। इस लिए उस की बड़ाई इसी में है। पढ़ाना, लैक्चर देना, कथा करना, ज्ञान सुनाना, ग्रंथ - पोथियां बनाना, यह नहीं। यह कोई भाई भी कर सकता है। अरे, इंद्रियों के घाट से

ऊपर लाना—

खैंचे सुरत गुरु बलबान।

अनुभव की आंख खोलना, यह देखने वाला बन जाए। परमात्मा ज्योति - स्वरूप है, ज्योति का विकास हो जाए, अंतर में दो ही हैं - ज्योति मार्ग और श्रुति मार्ग। जो उस रास्ते का अनुभव करा दे इंद्रियों के घाट से ऊपर लाकर, यह पहली निशानी है। आखिर जो उस को बतलाता है, कौन बतला सकता है, मुआफ करना? परमात्मा का न कोई भाई है, न बंधु, न माता, न पिता। अगर उसकी खबर कोई देता है तो वह कौन हो सकता है? यही कहना पड़ेगा वह (प्रभु) आप ही कहीं बैठा अपनी खबर आप देता है। तो बड़े प्यार से अर्ज कर रहे हैं कि ऐ रामचंद्र जी महाराज! संतों की महिमा वेदों - शास्त्रों में बहुत गाई है। आगे—

(12) श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्ह बड़ाई। तिन्ह पर प्रभुहि प्रीति अधिकाई॥

कहते हैं वेदों और शास्त्रों ने भी गाई है, आप ने भी गाई है। आपने भी अपने श्रीमुख से बड़ाई की है और मुझ पर आप का प्रेम भी बहुत है, अब आप कृपा कीजिए। आगे बतलाएंगे—

(13) सुना चहउं प्रभु तिन्ह कर लच्छन। कृपासिंधु गुन ग्यान बिच्छ्छन॥

तो कहते हैं, ऐ स्वामी! मैं उनके लक्षण, उनके औसाफ (गुण) आप की ज़बान से जानना चाहता हूं क्योंकि आप कृपा - सागर हैं, गुण और ज्ञान के पूर्ण निपुण हैं, पंडित हैं, जानने वाले हैं। इसलिए आप की ज़बान से मैं जानना चाहता हूं। यह तो ग्रंथों - पोथियों ने गाई है न, आप तो ज़िंदा मौजूद हैं। याद रखो, ज़िंदा महात्मा की कीमत पुरातन से कम नहीं बल्कि ज़िंदा महात्मा न हो तो पुरातन महात्मा की समझ ही नहीं आती, क्यों साहब। हमारे दिल में सब महापुरुषों के लिए इज्जत है जो

पिछले ज़माने में आए। जो ग्रंथ - पोथियां रच गए हमारी हिदायत के लिए, हमारे लिए हीरे - जवाहरात से भी ज्यादा कीमती हैं मगर जब तक अब ऐसा कोई महात्मा न मिले जो हमें वह दात दे सके, (फिर उन ग्रंथ - पोथियों की समझ आती है), फिर इस की महिमा ऊँची हुई कि नहीं। तो दोनों **past Gurus are also needed** (पुरातन गुरुओं की भी ज़रूरत है) और मौजूदा महात्मा की भी ज़रूरत है जो हमें वह चीज़ दे सके। हमारे हज़ूर से सवाल किया, वहां पर पादरी रहते थे ब्यास के स्टेशन पर, तो कहने लगे कि भई कौन बड़ा है, हज़रत ईसा बड़ा है कि बाबा जैमल सिंह? कहने लगे, “भई बाबा जैमल सिंह को तो मैंने देखा है, ईसा को देखा नहीं। उस को भी खड़ा करो तो मैं मुकाबला करके फैसला करूँ।” तो जिंदा महात्मा ही से, मुआफ करना, पिछली बात समझ आती है, नहीं तो ये सरबस्ता (गुप्त) राज़ (भेद) हैं **sealed book** (सील की हुई पुस्तक) की तरह **handed down from posterity** से **posterity** (पुश्त - दर - पुश्त) चले आते हैं मगर पता नहीं क्या हैं। इस लिए गुरु अर्जुन साहब जी ने जब गुरबाणी रखी है, इस में सब महापुरुषों की बाणी ली, सब महापुरुषों की बाणी एकत्र की, जो अनुभवी पुरुष थे, जितनी मिल सकी। दादू साहब, कबीर साहब थे, अपने और सिरव गुरु साहिबान थे और फरीद साहब थे, नामदेव थे, रविदास जी थे। जो बाणी मिल सकी, सब की रख दी और फिर कहा—

प्यो दादे का खोल डिट्ठा खजाना। तो मेरे मन भया निधान॥

हमारे बाप - दादा के रुहानी खजाने हैं भई, खोल कर देखो, इस में क्या दिया है। माथा टेकने से काम नहीं बनेगा, माथा टेको, अदब करो ठीक है मगर जो वे कहते हैं वह मानों, कि नहीं। वे भी कहते हैं जाओ गुरु के पास, जाओ साधु के पास, जाओ संत के पास। हम कहते हैं

ग्रंथ - पोथियां ठीक, हमें साधु के पास जाने की ज़रूरत नहीं। अरे भई! हमें समझ ही नहीं आएगी ग्रंथों - पोथियों की, **right import** (सही मायने) नहीं समझ आएगा।

मैं जब अमेरिका में गया तो लोगों ने मुझ से सवाल किया कि भाई आप ने तो **truth** (सच्चाई) को बड़ा **simple**, सादा तरीके से पेश किया है, यह मुश्किल क्यों बन गई हमारे लिए? मैंने कहा कि जिन को इस बात का तजरबा नहीं था, **those who had no first hand knowledge of truth, they were beating about the bush.** जो आगे - पीछे भाग - दौड़ में रहे, न देखा, न कह सकते हैं कि यह यह है, उनकी तकसीरें (व्याख्याएं) असल से भी मुश्किल बन गई। तो अनुभवी पुरुष की बड़ी महिमा है। न ग्रंथ - पोथियां समझ आएंगी, न बात समझ में आएंगी। पुरातन महात्माओं की बड़ाई भी नहीं समझ आती है। जब उस चीज़ को देखते हैं, ओहो! वे क्या थे? तो बड़े प्यार से कहते हैं कि वेदों - शास्त्रों ने तो महिमा गाई है, आप मौजूदा हैं, आप सुनाएं उनके लक्षण, आप की ज़बान से हम सुनना चाहते हैं। हां जी—
(14) संत असंत भेद बिलगाई। प्रनतपाल मोहि कहहु बुझाई॥

कहते हैं कि ऐ भक्तों के पालने वाले! आप संतों और असंतों के औसाफ (गुण) खोल कर समझाइए ताकि हमें समझ आ जाए कि संत कौन हैं और असंत कौन हैं?

(15) संतन्ह के लच्छन सुनु भ्राता। अगनित श्रुति पुरान बिरव्याता॥

श्री रामचंद्र जी कहने लगे कि ऐ भई! संतों के औसाफ (गुण) सुन। वे बेशुमार (अनगिनत) हैं, वेद और पुराणों में खोल - खोल कर गाए हैं। जो तुम पूछना चाहते हो, वेदों - पुराणों में खोल - खोल कर गाए हैं, पर वे कहते हैं हम आप की ज़बान से सुनना चाहते हैं। भई,

देखा - व्यान कुछ और होता है न, और पढ़ा पढ़ाया और सुना - सुनाया कुछ और होता है।

(16) संत असंतन्हि कै असि करनी। जिमि कुठार चंदन आचरनी॥

फरमाते हैं कि संत और असंतों के फर्क-चंदन का एक दरख्त ले लो, एक कुल्हाड़ी ले लो। चंदन के दरख्त की तरह तो संत, कुल्हाड़ी है असंत। अब इनका हश्र क्या होता है? आगे व्यान करेंगे।

(17) काटइ परसु मलय सुन भाई। निज गुन देइ सुगंध बसाई॥

कुल्हाड़ी चंदन के दरख्त को काटता है और चंदन देता है खुशबू उसे। कुल्हाड़े से भी खुशबू आने लग जाती है। लोहे का होता है न, उस से खुशबू आने लगती है। वह उसको काटता है, वह उस को खुशबू देता है। काटने का दर्द नहीं, खुशबू देता है, उस का स्वभाव है, चंदन का स्वभाव है खुशबू देना। कुल्हाड़ी काटे भी लोहे का, उस को भी खुशबू देता है, चाहे काटने वाला हो, यही फर्क है। इस का नतीजा क्या हुआ? आगे व्यान करेंगे।

(18) दोहा - ताते सुर सीसन्हि चढ़त जग बल्लभ श्रीरवं।
अनल दाहि पीटत घनहिं परसु बदन यह दंड॥

कहते हैं कि यही वजह है कि चंदन सब दुनिया को प्यारा है, वह तो देवताओं के माथे पर चढ़ता है और कुल्हाड़े का क्या हश्र होता है? कुल्हाड़े के मुँह को आग में जला कर उस के सिर को पीटा जाता है, यह उस को सज़ा मिलती है। वे सज़ा नहीं देना चाहते, याद रखो, संत सज़ा नहीं देना चाहते, वह जो काल - पावर है न, वह सज़ा देती है। वे बुरा चितवन नहीं करते मगर जो आखिर just (न्याय) है न, काल - पावर बड़ी just है, याद रखो। अधर्मियों को दंड देती है, धर्मियों

को उबारती है ताकि दुनिया की स्थिति कायम रहे, यह काम उस का है। संत उस को उजाड़ते हैं, उसकी नगरी को उजाड़ते हैं मुआफ करना। नाम दिया, प्रभु से मिला दिया, दुनिया तो गैर - आबाद हो गई। जो बुरा चित्त है उसको सज़ा तो मिलती है, यह कुदरत का नियम है, बुराइयों के सबब से। यहां तक कि एक पूरी अष्टपदी संत की निंदा में गाई है गुरु अर्जुन साहब ने।

संत का दोखी बिष्ठा का रूप॥

उसको कहीं ठिकाना नहीं मिलता और बड़ी लंबी पूरी अष्टपदी दी है मगर वह किसी का बुरा नहीं करेगा, गालियां निकालते जाओ, आओ भई। हमारे हजूर के पास लोगों ने आना कि महाराज! हमने आप की बड़ी निंदा की है। कहते, मेरे तक नहीं पहुंची। ये लक्षण हैं। जो evils (बुराइयों) के लिए प्रेम return (वापस) करता है, They return love for evils. (वे बुराइयों के लिए प्रेम वापस भेजते हैं।) कौन करता है? महात्मा बुद्ध थे। एक आदमी आया। हमेशा कायदे की बात है, अनुभवी पुरुष जब इस रास्ते जाते हैं महात्मा, तो लोग उनकी मुखालफत (विरोध) करने लग जाते हैं। एक आदमी आया, गालियां निकालने लगा, शाम तक खड़ा रहा, अंधेरा पड़ गया। होश आई, ओहो, अंधेरा हो गया। जाने लगा तो कहने लगे, “देख भाई, जो किसी के लिए सौगात ले कर आए, अगर वह न कबूल करे तो किस के पास रहेगी?” कहने लगा, “उसी के पास जो लाया था।” कहने लगे, “अच्छा भाई, यह सौगात मुझे मंजूर नहीं।” जाने लगा तो कहने लगे, “मेरे से दीवा ले लो और इस को घर तक छोड़ आओ।” ये गुण बहुत कम मिलेंगे आपको। ऊपर से बड़े महात्मा होंगे, बीच से जड़ें काटेंगे। भई दुनिया को तो हम धोखा दे सकते हैं, प्रभु को कैसे धोखा दे सकते

हैं?

लोक पतीने कछु न होवे नाहीं राम अयाणा॥

हमारे हजूर थे, उन्होंने मुझे एक बार चिट्ठी लिखी थी कि संगत में कई तरह के लोग आते हैं। पहले लिखा, हम संतों की जायदाद बे - आरामी की है। सत्संग में कई किस्म के लोग आ जाते हैं। कोई तो कद्रदान आते हैं, तारीफ (बड़ाई) करते हैं, मुतलाशी (जिजासु) होते हैं, कोई सिर्फ नुक्ताचीनी ही के लिए आ जाते हैं। कहने लगे, “अगर बद (बुरा) आदमी अपनी बढ़ी (बुराई) से बाज़ नहीं आता (नहीं हटता) तो नेक को नेकी से क्यों बाज़ आना चाहिए।” (इससे) दुनिया में दुर्व खत्म हो जाएंगे।

आवत गाली एक है उलट भी भई अनेक।

अगर न उलटो तो वही एक की एक।।

इसी लिए कहा कि

हार चले सो संत है, जीत चले सो मीत।

ये झगड़े इसी लिए बनते हैं, और क्या बात है। अगर एक से गलती हो जाए तो दूसरा मुआफ कर दे, मुआफ करना, **Forgive and forget.** संतों का लक्षण, कोई करे भी तो भूल जाओ, दिल में नहीं रखो। दुनियादार लाख (स्वांग रचना) कर ले, कोई मौका मिले, उस को फाँसी चढ़ा दे, यह हालत बन रही है और याद रखो, दुनिया में तो ब्लैक मार्कीट है ही, इसमें शक नहीं, वे भी कोई चार - छः आना (25 - 30 पैसे) रुपये में से देंगे, अरे भई! परमार्थ में इतनी ब्लैक मार्कीट है, देते कुछ नहीं, (उलटा तुम्हारी) गरदनों पर सवार हैं, यह हालत बन रही है। मैं यह अर्ज़ किया करता हूं चार शराबी, जिन को

नशा आया हो, किसी समाज के हों, गले लग कर बैठते हैं तो चार प्रभु - भक्त मिल कर क्यों नहीं बैठ सकते, एक का मुंह उधर, एक उधर। अरे भाई! आखिर उसी एक ही के गुणानुवाद गा रहे हो कि किसी और के, मगर नहीं। मैं जब ऋषिकेश गया था सन् 1948 में, हमारे हजूर चोला छोड़ गए तो मैं ऋषि चला गया था। असल में सच्ची बात तो यही है कि अनुभवी पुरुष के बाद दुनिया में जीना किसी काम का नहीं। खैर मैंने सोचा यही था कि मैं वापस नहीं आऊंगा। वहां मैं हरेक महापुरुष से मिला जितने महापुरुष वहां रहते हैं। यह 1948 की बात है। तो हर एक से मिला, **intellectual wrestlers** (बुद्धि के पहलवान)। एक आदमी मुझे मिला जो पिंड से ऊपर जाता था जड़ चेतन को अलहदा कर के। तो मैं जय दयाल गोयनिका से भी मिला जो उन दिनों वहां थे। मैंने उनसे कहा कि भई क्या अच्छा हो ये मठ जो हैं न पब्लिक के, ये पब्लिक के हवाले कर दिये जाएं। जो महात्मा रह जाएं, वे मिल बैठें, भई हमें यह चीज़ समझ आई है। कहने लगे, आपने बात तो बहुत ठीक कही है मगर इन मठधारियों ने नहीं मानना। इन को मिला कर बैठने काम तुम करो, मेरा सारा गीता भवन तुम्हारी सेवा के लिए हाजिर है। ये लोग पूछते हैं कि **World Religions Conference** (विश्व धर्म सम्मेलन) में आप क्यों गए? वे किसी एक समाज या दूसरे के बंधन में नहीं कि उसी में पैदा हो सकते हैं, बाकियों में नहीं। अरे भई! रविदास चमार थे, कबीर साहब जुलाहे थे, तुलसी साहब ब्राह्मण थे, गुरु साहिबान खत्री थे। अरे खत्री, ब्राह्मण, शूद्र हम ने बनाए कि प्रभु ने मोहरें लगा कर भेजा? यही बात समझने की है। सब प्रचार उसी का करते हैं कि सारी मनुष्य - जाति एक है मगर हमारा मजहब सब से ऊपर है। यह ‘मगर’ वाली बात ही लोगों को खराब कर रही है। अरे भाई! सब समाज अच्छे हैं, सब का **noble purpose**

(पवित्र उद्देश्य) वही है। किसी स्कूल में रह कर लड़का पास ही कोई न होता हो तो क्या फायदा? जिस समाज या स्कूल से लड़के ज्यादा पास हों, खुशी है न। जो उस हकीकत को पा जाए, जिस समाज में ज्यादा भक्त बनें, वह समाज मुबारिक। तो अनुभवी पुरुष जब तक रहते हैं, वे बंधनों में आपको नहीं रखते। वे आप भी आज़ाद होते हैं, तुम को भी आज़ाद करने आते हैं। जब वे चले जाते हैं तो लोग यह समझते हैं कि लोग भाग न जाएं, हमारी आमदन में कमी न हो जाए। एक झूठ को पचास झूठ और बोल कर दुनिया को पेश करते हैं। ये संतों के रास्ते नहीं। अभी एक मिसाल दी। आगे और देंगे —

(19) विषय अलंपट सील गुनाकर। पर दुख दुख सुख सुख देखे पर॥

कहते हैं वे इंद्रियों के भोगों-रसों से आज़ाद होते हैं, लज्जाते नफ्सानी(मन की लज्जतों) से कहो, इंद्रियों के भोगों-रसों में वे लंपट नहीं होते, उन में फसे नहीं होते, भोग-रस उन को खैच नहीं सकते और शील को धारण किए होते हैं, ब्रह्मचर्य की रक्षा रखते हैं। ब्रह्मचर्य की रक्षा ज़िंदगी है, इस का पात करना मौत है। जहां ब्रह्मचर्य की रक्षा है उस में सारे गुण आ जाते हैं। जिस मकान की बुनियाद मज़बूत हो, कितनी मंज़िलें चढ़ा लो। अरे, ब्रह्मचर्य से यह जीवन कायम रहता है, दिल - दिमाग सही रहता है, किसी काम के करने के काबिल होता है। एक ब्रह्मचर्य की न रक्षा करने से न दिल सही, न दिमाग सही। तो कहते हैं कि वे क्या होते हैं? ब्रह्मचर्य की रक्षा वाले सब गुणों की खान होते हैं, खान। जो वे बोलते हैं, आपको पता है, गुरबाणी में क्या कहा?

मनै धर्म सेती सबंध॥

उनका धर्म से संबंध बन जाता है। जो बोलते हैं वही कुरान बन जाता है। हरेक गुण के मुज़स्सम अवतार हो जाते हैं, ज़बान मीठी नम्रता भरी,

न दिल को दुखाने वाली और नफ्सानियत से पाक (मन से पवित्र)। अब और क्या होता है? वे कहते हैं:

पर दुख दुख सुख सुख देखे पर॥

दूसरों के दुख को देख कर अपना दुख मानते हैं। दूसरों को सुख देकर आप सुखी रहते हैं। कोई दुख दे तो भी सुख देते हैं, चंदन और कुल्हाड़ी की तरह, और दूसरों के दुख देख कर वे पसीज जाते हैं। गुरु नानक साहब घर से निकले। आप को पता है घर वालों ने क्या किया? सास थी मूलो। कहने लगी, “देख नानक, अगर तूने यही करतूत करनी थी, ये बच्चे क्यों पैदा किए?” दुनिया की ज़बान दो-मुहिं सर्पिनी होती है। कहने लगे, “देख माता! जिन बंधनों में तू मुझे फंसाना चाहती है मैं दुनिया को उन से आज़ाद करने आया हूँ।” घरबार छोड़ा, समझे, घरबार छोड़ा, जंगल की राह ली। चार उदासियां धारण कीं— मशरिक, मगरिब, सुमाल, जनूब (पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण), मक्के - मदीने तक गए, काबुल तक, चीन और ब्रह्मा तक गए, हिमालय की पहाड़ियों तक गए और Ceylon (लंका) तक गए। पंडितों ने क्या कहा? यह कुराहिया है कुराहिया, अकलें खराब करता है। तो बड़े प्यार से कहते हैं कि वे दूसरों के दुख को अपना दुख मानते हैं। कोई भूखा मर रहा है, हम साथ ऐश कर रहे हैं। अरे भाई! संतों का यह नज़रिया (दृष्टिकोण) नहीं, संत का यह स्वभाव नहीं। दूसरों के दुख को अपना दुख मानते हैं। तो भाई नंदलाल जी ने कहा—

खलक खालिक की जान कर खलक दुखावे नाहिं।

खलक दुखे नंदलाल जी खालिक कोपे ताहिं॥

सब का दुख हमारा दुख है। अगर हम अपना दुख मानें तो दूसरों को

दुख क्यों देंगे? दूसरों के दुख को देख कर उनका दिल पसीज जाता है। और जिंदगी बिल्कुल पाक मुजस्सम, **Chastity** (पवित्रता) और गुणों की खान कहो, मुंबा (इकट्ठ) कहो, होती है।

(20) सम अभूतरिपि बिमद बिरागी। लोभा मरष हरष भय त्यागी॥

सम - वृत्ति रहते हैं। सम - भावना— सब को एक जैसा, दुश्मन आए, कि आओ जी बैठो, गैर आए तो भी कहे आओ जी बैठो, अपना आए तो भी कहे कि आओ जी बैठो, बल्कि, मुआफ करना, अपने बच्चों (की अपेक्षा) दूसरों से ज्यादा प्यार करते हैं। तो सम - भावना रखते हैं, किसी से दुश्मनी नहीं। और क्या होता है? अभी बहुत कुछ रह गया। ‘लोभा मरष हरष भय त्यागी।’ उनके अंतर लोभ, वैरागी पुरुष हैं सच्चे, कोई attachment (बंधन) नहीं। पैदा होने पर खुशी नहीं, मरने पर गमी नहीं और नम्रता धारण किए होते हैं। खुशी और खौफ (डर) दोनों ही उनके नज़्दीक नहीं आते। न खुशी से वे अफराव (फूलते) में आते हैं न गमी (दुख) से उनके माथे पर बल आता है। यह निशानी है। प्रारब्ध पर विश्वास करते हैं। हमारा एक बच्चा बीमार हो जाए, भागेंगे, महाराज! इस को ठीक कर दो, इसको ठीक कर दो। अरे भई! उस का इलाज है, जाओ डाक्टर के पास करा लो। सम - भावना, यानी देखो, संतों की क्या तौफीक है, हमारी क्या तौफीक है? अंहकार में मते (मस्त) फिरते हैं। लब्ध - लालच को रख कर उसके ज़ेरे - असर (प्रभाव में) लोगों की गरदनें कटवा देते हैं। यही हो रहा है और क्या है। एक चीज़ को पाने के लिए कोई रुकावट बने, दुश्मनी और धड़ेबंदी करते हैं। अरे भई! यह संतों का लक्षण नहीं।

(21) कोमलचित दीनन्ह पर दाया। मन बचक्रम मम भगति अमाया॥

कोमल चित्त होता है उन का, नरम - दिल, किसी को दुखी नहीं

देख सकते और गरीबों पर दया (करते हैं), माया से आज़ाद और मन, कर्म और वचन से भक्ति में लीन, प्रभु का प्यार, बस ये उन के लक्षण हैं। कोई बिज़नस नहीं बना रखा, कोई दुकानें नहीं चलाते। उन का काम केवल दूसरों के दुख दूर करना है, बाहरी भी जहां तक मुमकिन हो, आत्मा को जो मन - इंद्रियों के घाट पर धिरी पड़ी है, उससे छुड़ाना, बस। शम्स तबरेज़ साहब ने एक जगह कहा कि देखो भई, मुझे इन फटे - पुराने कपड़ों में न देखो, मेरे अंतर नज़र मारो मैं किस विलायत का बादशाह हूँ। हमें यह न देखो कि हमारे पास पैसा कोई नहीं, हमारे पास वह खान है जो कभी खत्म होने वाली नहीं। क्या हुआ तुम आज हम को अपने दरमियान कैदियों की शक्ल में एक कैदी देखते हो? मगर हम कैदी नहीं। आपको पता है कैदखाने में कौन लोग जाते हैं? कैदी तो जाते ही हैं, वहां दो और भाई भी जाते हैं—एक डाक्टर, एक सुपरिटैंडेंट जेल। सुपरिटैंडेंट जेल क्यों जाता है? वह देखता है कि भाग तो नहीं गया कोई, कहीं दरवाज़ा तो नहीं टूट गया, कोई आपस में रखडूस (झगड़ा) तो नहीं मचा, वह इसलिए जाता है। और डाक्टर जाता है जो बीमार है उस को बाहर भेज दो, उसको दूध भी दो, घी भी दो, ज़रा strong (तगड़ा) हो जाए भई! जा निकल जा। अरे भई! संत भी दुनिया में आते हैं, अवतार भी आते हैं, दुनिया की स्थिति कायम करने के लिए, अधर्मियों को ढं देने के लिए, धर्मियों को उबारने के लिए। वह (परमात्मा की) एक ही ताकत है, वही दो सूरतों में इज़हार कर रही है, यह कह दो और संत आते हैं, मन - इंद्रियों के घाट से ऊपर ला कर प्रभु से जोड़ते हैं, दुनिया तो गैर - आबाद हो गई। अगर प्रभु का प्यार दिल में है, प्रभु सब में है, सब का प्यार है। इसलिए साधु की तारीफ की तुलसी साहब ने, क्या—

गुरु निवै जो शिष्य को संत कहावै सोए॥

गुरु जो शिष्य को नमस्कार करता है वह संत कहलाता है। गुरु अकड़ा रहता है, शिष्य बेचारे माथे टेक-टेक कर मर जाते हैं। ओर! उस बेचारे की आंख नहीं खुली, गुरु की तो आंख खुली है न, कि नहीं। गुरु की तो आंख खुली है न। वह तो देखता है सब में वही (प्रभु) है। ये लक्षण हैं संतों के, मुआफ करना।

(नोट: सत्संग का बाकी का हिस्सा बहुत कोशिश करने पर भी मिल नहीं सका। भज्मून को पूरा करने के लिए रामायण में से बाकी हिस्सा श्री हनुमान प्रसाद पोददार जी के अर्थ सहित दिया जाता है।)

(22) सबहि मानप्रद आपु अमानी। भरत प्रान सम मम ते प्रानी॥

वे सबको सम्मान देते हैं पर स्वयं मानरहित होते हैं। हे भरत! वे प्राणी (संतजन) मेरे प्राणों के समान हैं।

(23) बिगत काम मम नाम परायन। साँति बिरति बिनती मुदितायन॥

(24) सीतलता सरलता मयत्री। द्विज पद प्रीति धर्म जनयत्री॥

उनको कोई कामना नहीं होती। वे मेरे नाम के परायण होते हैं। वे शान्ति, वैराग्य, विनय और प्रसन्नता के घर होते हैं। उनमें शीतलता, सरलता, सबके प्रति मित्रभाव और ब्राह्मण (ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म को बिंध कर पारब्रह्म में जाये) के चरणों में प्रीति होती है जो धर्मों को उत्पन्न करने वाली है।

(25) ए सब लच्छन बसहिं जासु उर। जानेहु तात संत संतत फुर॥

(26) सम दम नियम नीति नहिं डोलहिं। परुष वचन कबूँ नहिं बोलहिं॥

हे तात! ये सब लक्षण जिसके हृदय में बसते हों, उसको सदा सच्चा संत जानना। जो शम (मन के निग्रह), दम (इन्द्रियों के निग्रह), नियम और नीति से कभी विचलित नहीं होते और मुख से कभी कठोर

वचन नहीं बोलते तथा

(27) दोहा - निंदा अस्तुति उभ्य सम ममता मम पद कंज। ते सज्जन मम प्रानप्रिय गुन मंदिर सुख पुंज॥

जिन्हें निन्दा और स्तुति (बड़ाई) दोनों समान हैं और मेरे चरण - कमलों में जिन की ममता है, वे गुणों के धाम और सुख की राशि संतजन मुझे प्राणों के समान प्रिय हैं।

(28) सुनहु असंतन्ह केर सुभाऊ। भूलेहुँ संगति करिअ न काऊ॥

(29) तिन्ह कर संग सदा दुखदाई। जिमि कपिलहि घालइ हरहाई॥

अब असंतों (दुष्टों) का स्वभाव सुनो, कभी भूलकर भी उनकी संगति नहीं करनी चाहिये। उनका संग सदा दुःख देने वाला होता है जैसे हरहाई (बुरी जाति की) गाय कपिला (सीधी और दुधारु) गाय को अपने संग से नष्ट कर डालती है।

(30) खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी। जरहिं सदा पर संपति देखी॥

(31) जहुँ कहुँ निंदा सुनहिं पराई। हरषहिं मनहुँ परी निधि पाई॥

दुष्टों के हृदय में बहुत अधिक संताप रहता है। वे परायी सम्पत्ति (सुख) देख कर सदा जलते रहते हैं। वे जहाँ कहीं दूसरे की निन्दा सुनते हैं, वहाँ ऐसे हर्षित होते हैं मानो रास्ते में पड़ा खजाना मिल गया हो।

(32) काम क्रोध मद लोभ परायन। निर्दय कपटी कुटिल मलायन॥

(33) बयरु अकारन सब काहू सों। जो कर हित अनहित ताहू सों॥

वे काम, क्रोध, मद और लोभ के अधीन तथा निर्दयी, कपटी, कुटिल और पापों के घर होते हैं। वे बिना ही कारण सब से वैर करते हैं। जो भलाई करता है वे उसके साथ भी बुराई करते हैं।

(34) झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना॥

(35) बोलहिं मधुर बचन जिमि मोरा। खाइ महा अहि हृदय कठोरा॥

उनका झूठा ही लेना और झूठा ही देना होता है। झूठा ही भोजन होता है और झूठा ही चबेना होता है (अर्थात् वे लेने - देने के व्यवहार में झूठ का आश्रय लेकर दूसरों का हक मार लेते हैं अथवा झूठी डींग हाँका करते हैं कि हमने लाखों रुपये ले लिए, करोड़ों का दान कर दिया। इसी प्रकार खाते हैं चने की रोटी और कहते हैं कि आज खूब माल खा कर आये अथवा चने चबा कर रह जाते हैं और कहते हैं हमें बढ़िया भोजन से वैराग्य है, इत्यादि। मतलब यह कि वे सभी बातों में झूठ ही बोला करते हैं।) जैसे मोर (बहुत मीठा बोलता है, परन्तु उस) का हृदय ऐसा कठोर होता है कि वह महान विषैले सौँपों को भी खा जाता है वैसे ही वे भी ऊपर से मीठे बचन बोलते हैं (परन्तु हृदय के बड़े ही निर्दयी होते हैं)।

(36) दोहा - पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपबाद।

ते नर पाँवर पापमय देह धरें मनुजाद॥

वे दूसरों से द्रोह करते हैं और परायी स्त्री, पराये धन तथा परायी निन्दा में लगे रहते हैं। वे पापी मनुष्य नर - शरीर धारण किये हुए राक्षस ही होते हैं।

(37) लोभइ ओढ़न लोभइ डासन। सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न॥

(38) काहू की जौं सुनहिं बड़ाई। स्वास लेहिं जनु जूँडी आई॥

लोभ ही उनका ओढ़ना और लोभ ही बिछौना होता है (अर्थात् लोभ ही से वे सदा घिरे हुए रहते हैं)। वे पशुओं के समान आहार और मैथुन के ही परायण होते हैं, उन्हें यमपुर का भय नहीं होता। यदि किसी

की बड़ाई सुनते हैं तो वे ऐसी (दुखभरी) साँस लेते हैं मानो उन्हें जूँडी (बुखार) आ गई हो।

(39) जब काहू कै देखवहिं बिपती। सुखी भए मानहुँ जग नृपती॥

(40) स्वारथ रत परिवार बिरोधी। लंपट काम लोभ अति क्रोधी॥

जब किसी की विपत्ति देखते हैं, तब ऐसे सुखी होते हैं मानो जगतभर के राजा हो गये हों। वे स्वार्थी, परिवार वालों के विरोधी, काम और लोभ में लम्पट और अत्यन्त क्रोधी होते हैं।

(41) मातु पिता गुर बिप्र न मानहिं। आप गए अरु घालहिं आनहिं॥

(42) करहिं मोह बस द्रोह परावा। संत संग हरि कथा न भावा॥

वे माता, पिता, गुरु और आत्मज्ञानी किसी को नहीं मानते। आप तो नष्ट हुए ही रहते हैं, (साथ ही अपने संग से) दूसरों को भी नष्ट करते हैं। मोहवश दूसरों से द्रोह करते हैं। उन्हें न संतों का संग अच्छा लगता है, न भगवान की चर्चा ही सुहाती है।

(43) अवगुन सिंधु मंदमति कामी। बेद बिदूषक परधन स्वामी॥

(44) बिप्र द्रोह पर द्रोह बिसेष। दंभ कपट जियँ धरें सुबेष॥

वे अवगुणों के समुद्र, मन्दबुद्धि, कामी, धर्म ग्रंथों के निन्दक और जबरदस्ती पराये धन के स्वामी (लूटने वाले) होते हैं। वे दूसरों से द्रोह तो करते ही हैं परन्तु आत्मज्ञानी से विशेष तौर पर द्रोह करते हैं। उनके हृदय में दम्भ और कपट भरा रहता है, परन्तु वे (ऊपर से) सुन्दर वेष धारण किये रहते हैं।

(45) दोहा - ऐसे अधम मनुज खल कृतजुग त्रेताँ नाहिं।

द्वापर कछुक बृदं बहु होइहहिं कलिजुग माहिं॥

ऐसे नीच और दुष्ट मनुष्य सत्ययुग और त्रेता में नहीं होते। द्वापर में थोड़े - से होंगे और कलियुग में तो इनके झुंड - के - झुंड होंगे।

(46) पर हित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥

(47) निर्णय सकल पुरान बेद कर। कहेउँ तात जानहिं कोबिद नर॥

हे भाई! दूसरों की भलाई के समान कोई धर्म नहीं है और दूसरों को दुःख पहुँचाने के समान कोई पाप नहीं है। हे तात! समस्त पुराणों, वेदों और धर्म ग्रंथों का यह निर्णय मैंने तुम से कहा है, इस बात को आत्मज्ञानी लोग जानते हैं।

(48) नर सरीर धरि जे पर पीरा। करहिं ते सहहिं महा भव भीरा॥

(49) करहिं मोह बस नर अघ नाना। स्वारथ रत परलोक नसाना॥

मनुष्य का शरीर धारण करके जो लोग दूसरों को दुःख पहुँचाते हैं, उनको जन्म - मृत्यु के महान संकट सहने पड़ते हैं। मनुष्य मोहवश स्वार्थी होकर अनेकों पाप करते हैं, इसी से उन का परलोक नष्ट हो जाता है।

(50) कालरूप तिन्ह कहूँ मैं भ्राता। सुभ अरु असुभ कर्म फल दाता॥

हे भाई! मैं उनके लिये कालरूप हूँ और उनके अच्छे और बुरे कर्मों का (यथायोग्य) फल देने वाला हूँ।

+++

सत्संग प्रवचन - 2

भक्ति मार्ग की महानता

(अरण्यकांड में राम की लक्षण के साथ ज्ञान चर्चा)

(पंचवटी निवास)

सत्संग ९ जुलाई, १९६१

(नया प्रवचन टेप से कापी करके)

रामाकृष्णा परमहंस थे, वे देवी के उपासक थे। कमाल दर्जे की भक्ति थी। जब अपने गुरु के पास गए हैं, कहने लगे, यह (देवी) भी एक आधार है। इस का भी जो आधार है उस को जानो। एक इष्ट जब बन जाए न, वह जिस का मुजस्सम है नहीं, उस में लय होना है। यह नुकते की बात है। देवी भी उन में प्रकट थी, सब कुछ था मगर यह इष्ट भी जो इसकी background है न, जिस का यह आधार है उस में लय होना है। तो आखिर गुरु ने उन के माथे पर हाथ रखा, फिर वह पर्दा टूट गया। इस तरह मीरा का भी कमाल दर्जे का (प्रेम था), जब रविदास के पास पहुँची हैं तो वह पर्दा हट गया। कहती है जिस की तलाश में जन्मों - जन्मों से भटक रही थी सत्गुरु के मिलने से फौरन मिल गया। इष्ट तो कोई आदमी बना सकता है। इष्ट बना लो, उस का प्रकट होना भी पूर्ण पुरुष का इष्ट, वह वही मुजस्सम होता है, उस में लय हो जाता है अपने आप। बाकी उसके छुट (बिना) जितने और इष्ट हैं सब देवी के हैं, देवताओं के हैं या किसी और के हैं वे इज़हार हैं, वह मुजस्सम है, वह इज़हार है। यह बड़ी सांकरी (तंग) गली है जिस में दो रह ही नहीं सकते, एक हो कर रहना पड़ता है। द्वैत का आलम जब तक बना रहे काम नहीं बनता। तो आगे और महापुरुषों की, कभी किसी की, कभी किसी की वाणी, मुखतलिफ (विभिन्न) महात्माओं की वाणी से आप के सामने रखा जाता है। बात वही है, हमेशा महात्मा कहते चले आए हैं। राम थे या नहीं, हमारा इस से झगड़ा कोई नहीं मगर

जो रामायण में दिया है, इष्ट बना कर हरेक पहलू से जब पाया है तो कैसे कोई इन्सान प्रभु को पा सकता है, हमारी उस से गर्ज है। हमारे दिल में इस के लिए भी गर्ज है मगर जिस आदर्श को वे पेश करते हैं, जिस की वे भी पूजा करते थे, राम भी किसी की पूजा करते थे, वह है असल में हमारा आदर्श। रामायण में, दो रामायण हैं— एक महर्षि वाल्मीकि ने लिखी, एक है तुलसीकृत रामायण। तुलसीकृत रामायण में कई मज़मून हरेक पहलू से बड़े आला (उत्तम) तरीके से रखे। आगे दो - तीन बार, शायद चार बार रामायण से पेश किया गया था। आज रामायण का वह हिस्सा जहाँ भगवान राम, चौदह वर्ष के बनवास का यह बहाना है और रास्ते में पहले दरिया से पार होना था, मल्लाह कहता था, “भई तेरे पांव से लग कर अहिल्या पत्थर से आदमी बन गई, तुम मेरी बेड़ी (किश्ती) में नहीं चढ़ सकते, कहीं मेरी बेड़ी भी आदमी बन जाए, मेरी रोज़ी भी जाती रहे।” हरेक ने अपने angle of vision(दृष्टिकोण) से देखना है ना। “तो इस लिए क्या करो, पांव धो कर चढ़ो”, समझे—खैर मतलब से मतलब है। जब पार हुए तो वे मज़दूरी देने लगे। कहने लगा (मल्लाह), “देखो, तेरा और मेरा पेशा एक ही है। मैं दरिया से पार करने वाला मल्लाह हूँ, तू संसार सागर से पार करने वाला मल्लाह है, मैं तुझ से मज़दूरी नहीं लेता, तू मुझ से मज़दूरी न लेना।” तो भगवान राम जब पंचवटी गए हैं न, तो वहाँ निवास किया। बाहर जगत में रह कर महापुरुषों ने क्या करना है? प्रभु की याद ही करनी है न। साथ लक्ष्मण को रखा, जैसे गुरु नानक साहब मरदाना को रखा करते थे। किसी न किसी चीज़ को समझाने के लिए कोई न कोई सवाल पेश हो जाता है। तो आगे मुख्तलिफ महात्माओं की बाणी रखी गई, आज तुलसीकृत रामायण से आपके सामने वह समय जो राम जी का पंचवटी में निवास करने का था और वहाँ लक्ष्मण

के साथ कुछ ज्ञान- चर्चा हुई, वह पेश की जायेगी। आप देखेंगे कि वे क्या कहते हैं। याद रखो जब से दुनिया बनी है आदर्श वही (प्रभु) है, समझने का फर्क है। आप गौर से सुनेंगे। पहले जगह का ज़िक्र करेंगे कि जहाँ महात्मा बैठे वही शोभा देने लग जाती है, समझे। उसका ज़िक्र करके फिर लक्ष्मण जी का सवाल होगा, फिर उस का जवाब देंगे। है मज़मून बड़ा छोटा पर बड़ा पुरमगज़ (अर्थ भरपूर) है। वह आप के सामने रखा जाएगा। गौर से सुनिए वे क्या कहते हैं। मैं क्योंकि हिंदी नहीं पढ़ा, उन्होंने (रामायण की पुस्तक) उर्दू में सामने रख दी।

(1) जब तेराम कीन्ह तहं बासा। सुखी भए मुनि बीती त्रासा॥

जब भगवान राम पहले तो विचर रहे थे न, फिर वहाँ उन्होंने वास कर लिया, पंचवटी में जा बैठे तो वहाँ ऋषि - मुनि जितने थे सब को ढारस हो गई कि भई हम नज़दीक हो गए। भक्त का भगवान अगर वहाँ चलता - फिरता आ जाए फिर दिल को ढारस मिलती है कि नहीं। कहते हैं जब से राम वहाँ ठहरे तो पंचवटी में जो ऋषि - मुनि थे बड़े खुश हुए, सब बेखौफ हो गए। बच्चा अगर पिता के पास आ जाए सब खौफ (डर) दूर हो जाते हैं कि नहीं। तो सब के भगवान आ गए, छः तरख्तों पर बैठने वाले आ गए तो सब निश्चिंत और बेखौफ हो गए। सब खुश थे। मामूली बात है जिस से प्यार हो, जो हमारा इष्ट हो अगर वह सामने आ जाए तो खुशी होती है कि नहीं, दिल मज़बूत हो जाता है। तो ऐसे ही ऋषि - मुनियों के दिल मज़बूत हो गए, खुश हो गए। तो व्यान कर रहे हैं तुलसी साहब—

(2) गिरि बन नदीं ताल छबि छाए। दिन दिन प्रति अति होहिं सुहाए॥

तुलसी साहब बड़े शायर (कवि) हैं, समां (भूमिका) बांधते हैं कि

कैसी रौनक वहां की बन गई? कि जितने पहाड़ थे, जितने जंगल थे और जितने नदी - नाले बह रहे थे सब में एक रौनक बढ़ गई। जब किसी का प्रीतम किसी (उस) के पास आ जाए तो जंगल और पहाड़ भी खूबसूरत लगते हैं। समझे, नहीं।

धनी विहूणा पाट पटंबर भाए सेती जालै॥

जो धनी (प्रीतम) से दूर हो जाए, कहते हैं कि रेशमी कपड़े भी पहनने को मिल जाएं तो आग में जला देने चाहिए।

धूड़ी विच लोअंड़ी सोहां नानक तह सौह नालै॥

कि अगर वह प्रभु, वह प्रीतम हमारे साथ हो, सोने को खाली ज़मीन मिल जाए, वही शोभा देती है। तो भगवान राम वहां आ गए, जो नदी - नाले बहते थे न, वे भी शोभा देने लग गए। पहाड़ बड़े सूखे होते हैं, वे भी बड़ी शोभा देने लग गए, राजिक (रिज़क देने वाले) बन गए और जंगल और शोभायमान हो गए। तो उन की जो फिज़ा थी न, वह सब और रंग पकड़ने लग गई, बड़े खुशनुमा बन गए। क्यों? आप को पता है कि कुदरत का, nature का मालिक आ जाए तो nature खिलखिलाएगी कि नहीं, कायदे की बात है। दुनिया जो है, nature जो है, nature के बनाने वाला सामने आ जाए तो और शोभा देती है कि नहीं। शायराना रव्याल है। बड़े सुंदर तरीके से पेश कर रहे हैं।

(3) खग मृग बृंद अनंदित रहहीं। मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं॥

दिनो - दिन रौनक उन की बढ़ने लगी, बड़े खुशनुमा मालूम होने लगे। यह कायदे की बात है कि प्रीतम से नज़दीकी बहिश्त (स्वर्ग) है, उस से दूरी दोज़ख या नर्क है। जब अपना प्रीतम आ जाए तो जंगल - पहाड़ सब रौनक देते हैं और—

खग मृग बृंद अनंदित रहहीं। मधुप मधुर गुंजत छबि लहहीं॥

जितने चरने वाले हैवान (जानवर) थे, जितने चहचहाने वाले परिदे (पक्षी)थे, खूब खुशी से चहचहाने लगे और उन की जो खुश - अल्हानी कहो, मीठी ज़बान कहो वह और अति सुंदर मालूम होने लगी। कहते हैं दिल मानता हो न, साबत हो तो मेंडक जो टर्टीते हैं, वे भी अच्छे लगते हैं, मुआफ करना। दिल की अवस्था ब्यान कर रहे हैं कि ऐसी अवस्था बन गई जब भगवान राम पंचवटी में वास करने लगे, गिर्दगिर्द की फिज़ा सारी बदल गई। **Atmosphere** (वातावरण) चार्ज होता है न। जैसी हस्ती वैसा atmosphere. हर एक इन्सान से सुआएं (किरणें) निकलती हैं। वे अवतार थे, चौदह कला संपूर्ण। आम इन्सानों से हज़ारों दर्जे ज्यादा उन की रेडियेशन थी। उस रेडियेशन का असर यह कि चिरंद भी मस्त हो रहे हैं, परिदे भी चहचहा रहे हैं। उन के वहां जाने से वहां जो ऋषि - मुनि थे खूबसूरत लगने लगे, पहाड़ भी सुंदर लगने लग गए क्योंकि जिस का इंतजार था (वह आ गया), कुदरत देख कर खिल गई। यसू मसीह साहब थे, एक चोर था। यह उन का वाकेया (घटना) आता है कि पानी को देख कर शराब बन गई, दो - तीन जगह से। मतलब यह था कि नशा देने वाली चीज़ बन गई। तो कहने लगे कि इस पर मज़मून लिखो कि यह क्या है। सब ने, किसी ने दस सफे, किसी ने बीस सफे, किसी ने तीस सफे, खूब मारो - मार लिखा जितना जो भी किसी की समझ में आया। वह चोर चुपचाप बैठा था, कुछ नहीं लिखा। जब इम्तिहान का वक्त पूरा होने लगा, दो मिसरा (वाक्य) लिखा, कुछ लिख दीं दो लाइनें। उस को 100 फीसदी नंबर मिल गए। बाकी सब ने बीस - बीस तीस - तीस सफे लिखे, (मिला) कुछ भी नहीं। सब हैरान हुए कि हम इतना लिख - लिख कर मर गए, हमारे नंबर बहुत थोड़े, इसने लिखा ही कुछ नहीं, सिर्फ एक लाईन

लिख कर दे दी है और इस को पूरे नंबर मिल गए, बात क्या है। वे देखना चाहते थे बात क्या है। कहने लगा, साहब, **Water saw Lord and blessed it**, पानी ने अपने मालिक को देखा, बनाने वाले को तो नहीं, बात समझे। तो राज़ (भेद) को समझो, यह भक्ति का राज़ है। जहां दिल माने वहां कोई खदशा (डर) नहीं। जब दिल न हो तो वही रेशमी कपड़े, बाग और गुलजार सब दुखदाई हो जाते हैं। क्योंकि भगवान राम वहां आए, रेडियेशन थी, सब को उभार मिला, कुदरत को भी उभार मिला, चरिंदों को, परिदों को, सब को उभार मिला। ऋषि - मुनि जो *in tune* (लिव लगाए हुए) थे, उन को और उभार मिला, बात तो यही है।

(4) सो बन बरनि न सक अहिराजा। जहां प्रगट रघुबीर बिराजा॥

कहते हैं जंगल की ऐसी शोभा बन गई कि शेषनाग हजारों मुंह से प्रभु के गुणानुवाद करते हैं पर कहते हैं कि जंगल की महिमा शेषनाग भी ब्यान नहीं कर सकते। शोभा तो होगी भई, जैसी हस्ती बैठे उसकी रेडियेशन से वायुमंडल की शोभा तो बन जाएगी न। कहने लगे ऐसी सुंदर अवस्था, ऐसा **atmosphere** (वातावरण) था कि उस से क्या चिरंद, क्या परिद, क्या इन्सान, क्या ऋषि - मुनि सब जैसे फूल खिलते हैं, ऐसे खिल गए। अगर उसकी महिमा ब्यान करना चाहे शेषनाग भी, तो वह भी ब्यान नहीं कर सकेगा। क्यों? राज़ क्या है? वहां भगवान राम आप विराजमान हैं। रेडियेशन का सवाल है। जिस जगह कोई महापुरुष बैठ जाए, ये अवतार हों या संत हों, रेडियेशन का ज़िक्र कर रहे हैं। इन (अवतारों) की रेडियेशन भी बड़ी होती है, उस जगह की शोभा बनी। शिवजी महाराज के मुतल्लिक ज़िक्र आता है कि एक बार वे पार्वती के साथ जा रहे थे, एक जगह खड़े हो गए। पार्वती ने पूछा, “क्यों जी?” कहते हैं कि इस जगह से खुशबू आ रही है, यहां कभी

कोई महात्मा बैठे थे। हम लोग उस रेडियेशन को ज़ाया कर (गंवा) देते हैं और और रव्याल गदे कर के। इस लिए स्वामी विवेकानंद ने कहा कि जो पाप हम बाहर, धर्म - स्थानों से बाहर करते हैं वे तो शायद परमात्मा बरब्श लेगा, जो पाप हम धर्मस्थानों में या तीर्थस्थानों में करते हैं वे परमात्मा भी बरब्शोगा नहीं, बात समझे। इस लिए मैं आप भाइयों को बार - बार इस जगह की पवित्रता के लिए ज़ोर देता हूँ। मैं तो यही कहता हूँ बाहर दुनिया छोड़ो, यहां के रहने वाले पवित्रता रखो, यहां आने वालों की रुह सिमटने लग जाएगी। रेडियेशन का असर होता है। हम लोग अपने मंद रव्यालों से, झगड़े - रगड़े, रोना - चीखना, यह - वह से उस **atmosphere** को **nullify** (असर खत्म) कर देते हैं। शोभा क्यों हो रही थी? क्योंकि भगवान राम वहां विराजमान थे। नीचे वहां ईट और पत्थर ही हैं। वहां क्या था भई, पंचवटी क्या है? किस ग़र्ज से खुबसूरत बन गई? भगवान राम वहां रहे। वह शहर भी तीर्थ है। जितने तीर्थ स्थान बने, कैसे बने हैं? वहां कोई न कोई महात्मा रहा, कोई न कोई वली - अवतार रहा। आज दिन तक उन जगहों की इज्ज़त हो रही है, नहीं तो वहां क्या? वही मिट्टी, पत्थर, पानी है। और क्या है? जहां जहां ज़मीन, वहां वहां जल - पाषाण (पत्थर)। उस की शोभा, उस की इज्ज़त, उस की मान और बड़ाई केवल इसी सबब से है कि कभी कोई महापुरुष रहा। तो तुलसी साहब ब्यान कर रहे हैं कि वहां इस लिए शोभा बढ़ गई। क्यों? क्योंकि भगवान राम वहां विराजमान हो गए। जी (एक श्रोता ने कहा कि आवाज़ थोड़ी कम है, महाराज जी ने आवाज़ ठीक करने को कहा और फरमाया) न्यूटन था। सङ्क किनारे एक **mathematical problem** (गणित का प्रश्न) हल कर रहा था। बैंड बजता हुआ पास से गुज़र गया। वह अपने रव्याल में महब (मगन) था। पूछा कि बैंड बजा? कहता है, “कोई नहीं, मुझे पता नहीं।” यकसूर्ई

(एकाग्रता) से बैठो तो गर्मी कहां और सर्दी कहां, शोर कहां? कई बार आपको समझाया है कि ‘सत्संग करो बनाया।’ बना कर करो, आओ छुट्टी कर दो (दुनिया को), bye bye, साथ बैठने वालों का भी रव्याल छोड़ दो। यह नहीं करोगे तो फिर निकलोगे कैसे? यही attachment (लम्पटताई) है। आप को पता है जैसा समय वैसा उपदेश, उस बात को समझो। तुम को बच्चे रोते नज़र आ रहे हैं, जांघों में खुर्क (खाज) हो रही है। नीचे बैठे हो गर्मी में, आप को तो सूरज चढ़ आया है, आप को होगी या मुझे गर्मी होगी। तो रव्याल का सवाल है भई।

(5) एक बार प्रभु सुख आसीना। लछिमण बचन कहे छल हीना॥

कहते हैं (भगवान राम) एक बार बड़ी खुशी से बैठे हुए थे, महात्मा को खुला छोड़ दो। जो बंधन में बैठते हैं वे पूरा फायदा नहीं उठाते। उस को अपना खेल खेलने दो। चुपचाप देखते रहो वह क्या कहता है। कहते हैं खुशी से बैठे थे। जंगल का समय था, एकांत थी, सब तरफ शोभा ही शोभा थी। खुशी से बैठे हुए थे। साथ लक्ष्मण था न, उसने एक सवाल कर दिया बहुत खुश देख कर कि इस वक्त वह पावर जो उन के अंतर काम कर रही थी न अवतारों में, आखिर इज़हार (प्रकट रूप) है न उसी ताकत का, एक negative पावर, एक positive पावर। तो positive पावर और negative पावर ताकत दोनों ही एक जगह (से लेते) हैं। बिजली कहीं बर्फ जमाती है कहीं आग जलाती है।

एक बार प्रभु सुख आसीना। लछिमन बचन कहे छल हीना॥

तो लक्ष्मण ने सवाल किया कि महाराज आप बताओ, मेरा एक सवाल है, उस का निर्णय कीजिए। आप खुशी से बैठे हो, इस वक्त तुम्हारे अंतर वही ताकत जो अवतार ले कर आए, वह इज़हार कर रही है। याद रखो, जहां अवतार आ बैठे रेडियेशन तो होती है, कुदरत

शोभायमान हो जाती है। आप कृपा कर के जवाब दीजिए। क्या?

(6) सुर नर मुनि सचराचर साई। मैं पूछउं निज प्रभु की नाई॥

कहते हैं तुम अवतार हो negative power के। यह सब कुदरत कायनात तुम्हारे ही आसरे चल रही है क्योंकि यह negative पावर है न, यह बढ़ रही है। तुम इस सब के मालिक हो। मैं भी तुम को स्वामी समझता हूं। यह nature (प्रकृति) तुम्हारी beck and call (इशारे) पर चल रही है, समझो। तुम सब के मालिक हो। मालिक को देख कर कुदरत खिलखिलाती है। मैं भी आप को स्वामी समझ कर सवाल कर रहा हूं। क्या सवाल? आगे जवाब देंगे। गौर से सुनिए—

(7) मोहि समझाइ कहहु सोइ देवा। सब तजि करौं चरन रज सेवा॥

कहते हैं ऐ देवों के देव! मुझे समझा कर वही बात कहो जिस से सब कुछ छोड़ कर मैं आप ही के चरणों में लगा रहूं। वह बात समझाओ कि मालिक और सत्त्वरु, चराचर जितने हैं सब, चराचर उस को कहते हैं जो फैलाव में जा रही है entity, इस लिए वह बात मुझे समझाओ खोल कर कि मैं तेरा ही दास बन जाऊं सारी उम्र। जी—

मोहि समझाइ कहहु सोइ देवा। सब तजि करौं चरन रज सेवा॥

अब सवाल आता है, क्या सवाल करते हैं, बड़ा खोल कर सवाल करेंगे। हाँ जी—

(8) कहहु ग्यान बिराग अरु माया। कहहु सो भगति करहु जेहिं दाया॥

अब पूछ रहे हैं कि आप ज्ञान, बैराग और माया का वर्णन कीजिए, ये क्या चीज़ हैं और साथ उस भक्ति का भी ज़िक्र कीजिए जिस भक्ति से प्रसन्न हो कर आप दया करते हैं। बड़ा अच्छा सवाल है। ज्ञान किस को कहते हैं, बैराग किस को कहते हैं और माया किस का नाम है, इन

को खोल कर समझाइए और साथ ही साथ वह भक्ति समझाइए जिस भक्ति से प्रसन्न हो कर तुम जीवों पर दया करते हो। जी—

(9) दोहा— ईश्वर जीव भेद प्रभु सकल कहौ समुझाइ।
जातें होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ॥

और इस के साथ—साथ यह समझाइए, ऐ प्रभु! ईश्वर और जीव में क्या भेद है? वह सब समझा कर कहिए जिस से आप के चरणों में प्रेम हो और शोक, मोह, अज्ञान, भ्रम का, सब का नाश हो जाए। अब गौर से सुनिए, उस का जवाब देंगे।

(10) थोरेहि महं सब कहउं बुझाई। सुनहु तात मति मन चित लाई॥

अब भगवान राम जवाब देते हैं कि मैं थोड़े ही मैं सब समझा कर तुम को बतलाता हूँ। कहते हैं ऐ प्यारे! मन और चित्त लगा कर, लोगों को आप ही समझ में नहीं आता, बड़ा ज़रूरी सवाल है, बड़ा गूढ़ ज्ञान है इसमें। कहते हैं मैं थोड़े ही मैं सब समझा कर कहता हूं, मन और चित्त लगाकर सुनो, मैं क्या कहता हूं ऐ प्यारे मित्र! तात कहते हैं प्यारे को। जी—

(11) मैं अरु मेर तेर तैं माया। जेहिं बस कीन्हे जीव निकाया॥

बड़ी अच्छी तरह से दिया है कि माया किस को कहते हैं। जहां पर मेरे तेरे का सवाल है वही माया है। जब तक हम मेरे और तेरे में फसे पड़े हैं यह सब माया है। जब सब उसी का इज़्हार (अभिव्यक्ति) है फिर मेरा कौन है और तेरा कौन है। जो तेरा तेरा करते तुझ में लय हो गए—

तू तू करता तू भया मुझ में रही न हूँ।

जब आपा पिर का मिट गया जित देखां तित तू॥

कहते हैं जहां पर मेरे तेरे का सवाल है वहीं माया है। यहां बड़ी

मोटी बुद्धि वाला भी समझ सकता है। माया व्यान में आ नहीं सकती। मिसाल दी है एक जगह तुलसी साहब ने कि आम पका हुआ हो, उस पर लाली आ जाती है। लाली आम से जुदा नहीं मगर लाली आम भी नहीं। उस का आधार आम का है पर आम आधार होते हुए भी यह लाव्यान है। अब वह बात समझाते हैं जो जड़ से जड़ (मंद बुद्धि) इन्सान भी समझ सकता है कि जहां पर मेरे—तेरे का सवाल दिल में बैठा है, यह मेरा यह तेरा, वहीं माया है, बड़ी मोटी बात। अब वे इन्सान जिन्होंने सब चीज़ों को अपना बनाने का ठेका ले रखा है, मेरा घर, मेरी औलाद, मेरे बच्चे, यह तेरा घर नहीं, यह तेरी जगह नहीं। मेरे—तेर में दुनिया बंध रही है, मेरे—तेर में सारा जगत बंध रहा है। यही कबीर साहब कहते हैं। तो माया किस को कहते हैं, समझ आ गई। माया वहीं समझो जहां मेरे—तेर का सवाल है। अब आप देखो सब माया में हो कि नहीं। यह मोटी निशानी दी है, एक कसौटी दी है इस बात को जानने की। जहां मेरे—तेर नहीं, समझो वहां माया नहीं। मेरे—तेर नहीं, माया कोई नहीं। मेरे—तेर वहीं नहीं होगी जहां हकीकत पर नज़र होगी।

एह जग सच्चे की है कोठड़ी सच्चे का विच वास॥

जब वही वही होगा तो मेरे—तेर कहां होगी। यह भी तेरा, यह भी तेरा, यह भी तेरा। गुरु नानक साहब थे, वे मोदीखाने (राशन भंडार) में नौकर लग गए। उनका काम था तोल—तोल कर देना। गृहस्थी थे, दो बच्चे थे उनके मगर मेरे—तेर का सवाल नहीं। वे तोलने लगे—एक, दो, तीन, चार, पांच, छः, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, तेरह (तेरा)—तेरह—तेरह करते तेरा—तेरा ही करते चले गए, मैं तेरा—तेरा, तेरे में मिल जाऊं।

तेरा तेरा करते तू भया, मुझ में रही न हूँ।

जब आपा पर का मिट गया जित देखां तित तूं॥

वहां माया कहां रही, यह बताओ। लोगों ने जा कर शिकायत की कि नानक ने तेरी दुकान लुटा दी। अरे भाई, इतने महब हो जाओ तो घाटा नहीं पड़ता। जब हिसाब किया गया तो कुछ रुपए मालिक की तरफ निकले। यह है माया के न होने की निशानी। जहां जिस्म - जिस्मानियत, मैं और तू का सवाल रहे वहां माया है। आगे और कुछ व्यान करते हैं, गौर से सुनिए—

(12) गो गोचर जहां लगि मन जाई। सो सब माया जानेहु भाई॥

और गौर से सुनिए। कहते हैं कि जहां तक मन, इंद्रियों और इंद्रियों का सामान जाता है, वहां तक सब माया है। माया कहां तक है? आप देखिए, बाहर पिंडी मन, अंतर में अंडी मन, फिर ब्रह्मंडी मन, ये सब माया हैं। यहां स्थूल इंद्रियां, वहां सूक्ष्म इंद्रियां, वहां कारण इंद्रियां, तो जहां तक मन - इंद्रियों का फैलाव है वहां तक सब माया है। जब तक तीन गुणों के पार न जाओ, पिंड, अंड, ब्रह्मंड के ऊपर न जाओ, माया से अतीत नहीं होते। रामाकृष्ण परमहंस ने कहा कि आदमी माया से अतीत क्यों करके नहीं हो सकता और हम कहते हैं कि हम माया से अतीत हैं। अरे भई, जंगलों में जाओ, वहां भी माया है। जहां तक मन इंद्रियों के घाट पर हैं वे सब माया में हैं। अरे, मन - इंद्रियों के घाट से हटना, माया तीन किस्म की है, गौर से समझो, एक बाहरी माया, समझे, फिर इस के अंतर सूक्ष्म माया, फिर आगे तीसरी माया कारण माया जिसको प्रधान कहते हैं। बाहरी माया में सब फंसे पड़े हैं। रहते - सहते सूक्ष्म माया में फंसे पड़े हैं, उस से और ऊंचे जाने वाले कारण माया, प्रधान में फंसे पड़े हैं। अरे, माया से जब हमारी छुड़ाई हो, तब मुक्ति हो न। जो यहां के सामानों में हैं न, वे तो सब हैं ही इस की ज़द (हद) में।

अरे, पिंड से ऊपर जाने वाले माया से अभी अतीत नहीं हुए। जब तक सूक्ष्म मंडल तय न हो, सूक्ष्म मन के घाट से ऊपर न आओ, जब तक कारण मंडल तय न हो, कारण मन से ऊपर न आओ, माया से तुम अतीत हो नहीं सकते। बात समझ रहे हो। बड़ी खूबसूरती से जवाब दे रहे हैं। यह बात हमेशा सच है कि जहां तक मन इंद्रियों की भाग छोड़ है चाहे स्थूल है, सूक्ष्म या कारण है सभी। घरबार छोड़ कर माया से अतीत हो जाओगे? तो संत - महात्मा क्या कहते हैं? भई घरबार छोड़ने की ज़रूरत नहीं, माया से अतीत होने की ज़रूरत है।

इस लिए कहते हैं -

सत्युर पूरा भेटिए पूरी होवे जुगत॥

हसदेयां खेलदेयां खवेदेयां पहनदेयां विच्चे होवे मुक्त॥

थोड़ा सा सूक्ष्म मंडल से ऊपर आओ, थोड़ा सूक्ष्म इंद्रियों से ऊपर आओ और कारण देह को छोड़ो, कारण इंद्रियों से ऊपर आओ, प्रधान माया भी खत्म हो गई। तुम को होश आ जाएगी, तीन गुणों के अडे से पार हो जाओगे। अब समझ आई, माया से अतीत होना किस को कहते हैं। यह रामायण तो कई बार हम ने पढ़ी होगी, कितने सूक्ष्म तरीके से व्यान कर रहे हैं? जी—

(13) तेहि कर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ। विद्या अपर अविद्या दोऊ॥

अब कहते हैं और गौर से मैं तुम को भेद की बात बतलाता हूं। भेद की बात को सुनो, क्या? माया विद्या और अविद्या दोनों रूपों में है। अविद्या में भी माया है और जिस को हम विद्या कहते हैं उस में भी माया है। विज्ञान भी विद्या है न दुनियावी मायनों में, बात समझो। माया के दो रूप हैं— एक विद्या, एक अविद्या, समझो। माया, प्रकृति और प्रधान,

तीनों से, त्रैगुणात्मक अड़े से पार हो (जाए), पिंड, अंड, ब्रह्मांड से पार (जाए), तब माया से अतीत होता है। जो पिंड में बैठा है, त्याग कैसा है? चाहे जंगल में जा बैठे तो क्या, बर्फनी गुफाओं में जा बैठे। जब तक मन - इंद्रियों का घाट नहीं छूटता, चाहे वह स्थूल है, सूक्ष्म है या कारण है, तब तक माया से अतीत नहीं होता। इस लिए महापुरुषों ने कहा— अरे भई, घरबार छोड़ने से क्या बनेगा। जिस का खाओगे, उस को देना पड़ेगा। जो काम करना है—छोड़ो पिंड, ‘खैंचे सुरत गुरु बलवान।’ तुम को इंद्रियों के घाट से बाहर - ऊपर कौन लाएगा —पहले स्थूल से, फिर सूक्ष्म से, फिर कारण से? कोई सत्युरु। बड़ी खूबसूरती से जवाब दे रहे हैं। जी—

(14) एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा। जा बस जीव परा भवकूपा॥

अब विद्या और अविद्या दो रूप बन गए माया के। कहते हैं अविद्या तो बड़ी खराब है। सब जीव अविद्या में हैं। जो इस के वश में हैं, वे संसार के कुएं में डूबे, गिरे रहते हैं। पढ़ने - लिखने का नाम भी अविद्या है, मुआफ करना। इंद्रियों के घाट से ऊपर जाना—पहले स्थूल से, फिर सूक्ष्म से, फिर कारण से— बाहरी अविद्या से हट कर अंतर विद्या में आ गए, वह भी माया है। जब तक तीनों से पार न जाओ, काम नहीं बनता। यह संतों का उपदेश है। कई लोग यह उपदेश देते हैं— चलो पिंड से ऊपर, आगे और खत्म हो गया? न भई, एक मंजिल तय हुई। आगे ले जाने वाला कोई बाहर से तो गाइड करेगा, जब तक वहां आ कर अंतर गाइड न करे, काम कैसे बने? बहुत सारे फकीर, ऋषि, मुनि और महात्मा यहीं मारे गए, सूक्ष्म मंडल में या कारण मंडल में। और बचाने वाला कौन है? गुरु। गुरु स्वरूप का अंतर प्रकट होना जो है, यह अंतर गाइड का साथ होना है। यह आप को सूक्ष्म और कारण—दोनों में धोखे

से बचाता है और पारब्रह्म में ले जाता है, बात समझे। यह है तालीम संतों की। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि अविद्या तो बड़ी खराब है, नर्क का रूप है जिस में सारा जहान डूब रहा है— पढ़े - लिखे, अनपढ़, गरीब - अमीर, हाकिम और महकूम (प्रजा)। अगर बाहर से कोई हटे भी तो उस की क्या अवस्था है, आगे ब्यान करेंगे।

(15) एक रचइ जग गुन बस जाको। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताको॥

और दूसरी जो विद्या है, वह कैसी है? कि उस में भी सब माया का पसारा ही है न। यह तो अविद्या बाहर की सब माया का पसारा है और दूसरी भी माया ही का पसारा है, उस में माया का पसारा ऐसा ही है सब। वह अपने गुणों के वश में जगत को रखती है और उस में अपना बल नहीं है। वह ईश्वर के प्रेमियों से ऐसा करती है। माया अपना बल नहीं, माया के जरिए—

शिव शक्ति आप उपाय के करता अपना हुक्म रचाया॥

तो विद्या और अविद्या दोनों ही बंधन का कारण हैं। यह (विद्या) ऊंचे दर्जे का बंधन है वह नीचे दर्जे का। बहुत सारे जीव तो अविद्या ही में हैं, पिंड और इंद्रियों के घाट पर बैठे हैं, मोटी बात। जो ऊपर भी गए, सूक्ष्म और कारण में गए, वे भी अभी माया के अंतर हैं। इन से पार जाओ तो माया से अतीत हो जाओ। आज तक जितने महापुरुष आए सब यही कहते हैं। भगवान कृष्ण ने गीता में कहा कि “**त्रैगुणा रोगा विषया भवतु अर्जुना!**” तीन गुणों का जितना सिलसिला है, वहां पर बंधन है, ऐ अर्जुन! तू उसके पार चल। संत ‘उस पार’ ही का ज़िक्र करते हैं। ये कहते हैं वे उसे कुछ और ही कहते हैं। और क्या कहते हैं, वही तो रोना है न। अब पार जाने के लिए भी एक है। जैसे **electricity** (बिजली) से मिला देते हैं, फिर बिठा देते हैं, कहते हैं, चलो भाई।

बाहर आप को परमात्मा के इज़्हार में आई ताकत का कॉटैक्ट (संपर्क) देते हैं, अपने - आप चले जाते हैं। खाली सुनते रहो। कितने जा सकते हैं? आगे ज़िक्र आएगा, सुनिए गौर से।

एक रचइ जग गुन बस जाकें। प्रभु प्रेरित नहिं निज बल ताकें।।

इसका अपना बल कोई नहीं, सिर्फ प्रभु के प्रेम के बल से माया से ऊपर आ सकता है। माया को पतिव्रतिनी कहा गया है। माया का जो पति है उस को जानो। माया का ज़िक्र किया इस से पहले। जपजी साहब में इस बात का निर्णय (स्पष्टीकरण) किया गया है—

एका माई जुगत विआई तिन्न चेले प्रवाण॥

इक संसारी इक भंडारी इक लाए दीवाण॥

ओह वेरवै इन्हां नदर न आवै बहुता एह विडाण॥

ये आधार तो उसी से ले रहे हैं। ये मालिक हैं उस हस्ती में—पैदा करने की शक्ति, पालने की और संहार करने की शक्ति। तीनों ही माया के बेटे हैं मगर माया के बेटे होते हुए ये उस से बेबहरा (बेरवबर) हैं और माया और बल लेती है उन से। बाणियाँ हम पढ़ छोड़ते हैं, बड़े deep (गूढ़) मायने हैं, तह में राज़ (भेद) हैं, आमिल (अनुभवी) के बगैर समझ नहीं आता। जी—

(16) ज्ञान मान जहं एकउ नाहीं। देरव ब्रह्म समान सब माहीं॥

कहते हैं कि यहां जानना और न जानना कोई भी नहीं, दोनों से परे की अवस्था है। तो मैं अर्ज़ कर रहा था कि ज्ञान किस को कहते हैं, समझे। जहां तक विज्ञानमय कोष है तब तक ज्ञान नहीं। आम दुनिया यह मानती है कि विज्ञानमय कोष में ज्ञान हो जाता है पर इस से पार ज्ञान है। जहां बुद्धि भी स्थिर हो जाए— इंद्रियां दमन हों, मन खड़ा हो

और बुद्धि भी स्थिर हो, तब आत्मा का साक्षात्कार होता है, अनुभव तब जागता है, पहले नहीं। तो तीन चीज़ों का आप के सामने ज़िक्र हो गया। माया किस को कहते हैं? यह सब माया का पसारा है। उस की दो किसमें हैं— एक बाहरी, एक अंतरीय। अंतरीय के आगे दो हिस्से हैं— इन को विद्या और अविद्या कहते हैं। अविद्या में तो सारा जहान ही फ़ंसा पड़ा है। वेदों में ज़िक्र आया है कि जो अविद्या में हैं वे मर कर अंधकार लोकों में जाएंगे, जो विद्या में रह हैं, वे उन से भी ज्यादा अंधकार लोकों में जाएंगे। यह वेद भगवान कहता है। जितना बुद्धि का फैलाव उतनी अविद्या। तो ज्ञान का अनुभव तब होता है जब इंद्रियां दमन हों, मन खड़ा हो, बुद्धि भी स्थिर हो। तो माया का पता लग गया। माया से रहित होना है वैराग। सच्चे मायनों में ज्ञान की तारीफ (परिभाषा) समझ आ गई आप लोगों को। पिंड, अंड, ब्रह्मांड के पार, पिंडी मन, अंडी मन, ब्रह्मांडी मन के पार और इंद्रियों का घाट चाहे सूक्ष्म है, स्थूल है या कारण है— इन सब से पार जाना माया से अतीत होना है, समझे। बाकी रह गया माया, बैराग और ज्ञान—ज्ञान का वही वह जहां मेरे—तेर का सवाल है वहां माया है। जब एकता पीछे होगी तो ‘एह जग सच्चे की है कोठड़ी सच्चे का विच वास। एह संसार जो तूं देरवदा हर का रूप है हर रूप नदरी आया’, समझे। यह अनुभव जागता है, इस का नाम है ज्ञान। तो आगे कहेंगे कुछ और खोल कर इसी मज़मून को। जी—

(17) कहिअ तात सो परम वैरागी। तृन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी॥

तो भगवान राम फरमा रहे हैं कि ऐ प्यारे! वही परम वैरागी है जो तीन गुणों को तृण (घास) की तरह उड़ा कर फेंक देता है। मैंने वैसे अर्ज़ किया न, वही तुलसीदास जी कह रहे हैं। परम—वैरागी कौन है? जो तीन गुणों से पार चला गया वही परम—वैरागी है, बाकी कोई वैरागी

नहीं। वह बड़ा बैराग वाला है जो तीनों गुणों को, सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण को तिनके की तरह तोड़ देता है, यह बैराग है। बताओ जो बाहर बैराग कर रहे हैं उन के लिए रामायण क्या कह रही है। माया के बगैर जीना मुश्किल है, समझ आई।

यह जितना सिलसिला नज़र आ रहा है, सब माया का ही पसारा है।

(18) दोहा - माया ईस न आपु कहुं जान कहिअ सो जीव।

बंध मोच्छ प्रद सर्वपर माया प्रेरक सीव॥

कहते हैं जीव और ईश्वर किस को कहते हैं? अब सवाल करते हैं। जो माया के अंतर है वह तो यही देखता है कि माया का पति कोई और है, इस मोह-माया का नाम जीव है। कितनी खूबसूरती से तारीफ (परिभाषा) की, समझे। जो माया - पति को थोड़ा अनुभव कर लेता है, क्योंकि माया भी सत्या लेती है न कहीं और ही से। जिस ने इस का अनुभव नहीं किया, इसी में लगा पड़ा है वह है जीव और जिस ने बंधन और मोह के देने वाला, सब से उच्च उस के पार जो है ताकत देने वाला है उस को जान लिया, वह है ईश्वर। जो इस मोह-माया के अंतर है वह है जीव और जो ऊपर है वह है ईश्वर। यही गुरबाणी में आया है—

एह सरीर मूल है माया॥

इस जिस्म से ही माया का मूल चलता है। स्थूल शरीर, मेरा जिस्म, मेरा घर, मेरा - तेरा सब माया ही माया है। इस से आगे और, मेरा सूक्ष्म शरीर, मेरा कारण शरीर यह भी माया है। तो मूल माया का, भूल का यहां से है, जो इस भूल से निकल गया वह ईश्वर, जो नहीं निकला वह जीव, चलो बड़ी साफ बात। तुम कौन हो?

तू थी सत्तनाम की गोती।

तुम सत्तनाम की गोत वाले हो, भई। तुम ईश्वर हो। Great is man, भूल में फसे हुए जीव बन रहे हैं। वह ज़माना निहायत खुशकिस्मत होता है जब वह ताकत किसी इन्सानी पोल पर इज़हार (प्रकटावा) करती है। वह ईश्वर भेजता है, मालिक भेजता है।

गुर में आप समोए शब्द वरताया॥

वह भूल से निकला है, हमें निकाल सकता है —

खैंचे सुरत गुरु बलवान।

जो गुरु भक्ति से खाली हैं वे कैसे चढ़ेंगे, यह बताओ? तो यह बड़े प्यार से कहते हैं कि जीव और ईश्वर किस को कहते हैं। अब आगे तीसरी बात रह गई — भक्ति। वह कौन सी भक्ति है जिसके करने से तुम खुश होते हो भगवान और फिर तुम खुश हो कर दया करते हो? अगली चौपाई में इस का व्यान होगा, गौर से सुनिए —

(19) धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बरवाना॥

अब कहते हैं कि वेद भगवान क्या कहता है। कि धर्म करने से बैराग होता है। और क्या होता है? योग से ज्ञान होता है और ज्ञान से मुक्ति होती है। कहते हैं यह वेद भगवान कहता है। अब सवाल यह है कि धर्म किस को कहते हैं। लफज़ तो आ गया 'धर्म।' 'धर्म' किस को कहते हैं? 'धर्म' धृ धातु से निकलता है जिस के मायने हैं 'धारण करना'। जो इस का आधार है उस का नाम है धर्म। जो सृष्टि का आधार है उसका नाम है धर्म। वह हस्ती जो इस का आधार बन कर जगत को कायम रखती है उस का नाम है 'धर्म', कट्टोलिंग पावर का। जवानी में परहेज़गार होना कहने की हिम्मत है। अगर जवानी में संयमी रहें तो बूढ़े हो कर भी जवान रहते हैं, सब काम कर सकते हैं नहीं तो

आंखें देखने से रह जाती हैं, कान सुनने से रह जाते हैं, सिर डगमगाता है, चल सकता नहीं, मुहताज हो जाता है। घर वाले इयोढ़ी में बिठा देते हैं, टूटी चारपाई दे देते हैं, कुत्ते हांकते जाओ, पोते खिलाते जाओ, बिट बिट उल्लुओं की तरह देखते हैं, किसी ने दे दिया तो खा लिया। सो यह भी धर्म है। जिस्म को पवित्र रखो, साफ - सुथरा रखो—बाहर से भी और अंतर से भी। अगर अंदर गलाज़त (गंदगी) भरी पड़ी है, बाहर सफाई भी करते हो तो—

मन मैले सब किछ मैला तन धोते मन हच्छा न होए॥

एह जगत भरम भुलाया विरला बूझे कोए॥

समझे, सारी दुनिया इसी में भूल रही है। इस के बाद आता है हिर्स (लोभ), सबसे बड़ा है, सब को आधार दे रहा है, सब को आधार देने वाली शक्ति है, संतों ने कहा है। सौ वाला हज़ार के पीछे है, हज़ार वाला लाख के पीछे है, लाख वाला करोड़ के पीछे है, इसी आग में सब दुनिया गिर रही है। जैसे बताया गया था इस आधार को जानने के लिए वह सब जो इस को कंट्रोल कर रहा है उसमें मुख्य चीज़ कौन कौन सी है—दया और दूसरे संतोख। ‘ज्ञान ध्यान दया का पूता।’ दया से उत्पन्न हुआ जो पुत्र है वह वह है जिस के सहारे दुनिया चल रही है। अब संतोष, फिर दुनिया का व्यवहार सब ठीक चल सकता है। फिर जीव उस को जो दुनिया का आधार है उस के जानने के काबिल हो सकता है। तो सब शरीयतों के अपने-अपने धर्म हैं, गुरबाणी सब से साईंटिक (वैज्ञानिक) है और जो मन के रास्ते चलते हैं उनका धर्म मन है भई। जो **Conscious Coworker Divine Plan** के (प्रभु के सहकार्यकर्ता) बन गए, परिपूर्ण परमात्मा का जिन को contact (संपर्क) हो गया, वे जो करते हैं वही धर्म है, समझे। तो धर्म जो है, यह

सुखों की खान है। प्यार से समझो, ये चीजें धार लोगे, सुखी रहोगे कि नहीं दुनिया में। इन चीज़ों के न होने कारण सब काम बंद पड़े हैं। तो इस लिए —

मन्मै धर्म सेती सबंध ॥

यह गुरबाणी में आता है। तो **Conscious Coworker Divine Plan** का, परिपूर्ण परमात्मा से जुड़ना, जो contact है, वह धर्म है। तो ऐसे पुरुष क्या किसी का खून निचोड़ सकते हैं, किसी का हक मार सकते हैं? नहीं। उन का कुदरती सबंध उस से हो जाता है। तो कहते हैं कि धर्म से क्या होगा? कहते हैं वैराग होगा। अगर संयम आ जाए तो वैराग सच्चे मायनों में हो जाएगा कि नहीं। इस लिए यह सब मर्यादा धर्म के अंतर है। वे लोग जो ऐसे बन गए वे धर्मवान हो गए। और और महात्माओं ने, सब ने यही कहा है।

रविदास जी कहते हैं सत्युग में सत था, धर्म था और यज्ञ, हवन, दान वगैरा त्रेता में थे और पूजा, आचार वगैरा—ये द्वापर में थे और ‘कलि केवल नाम आधारा’—कलियुग में केवल नाम का आधार है—नाम ही नाम। यही भाई मनी सिंह ने कहा है—नाम, दान, स्नान और ज्ञान। वही बातें आ गई थोड़े लफज़ों में। नाम परिपूर्ण परमात्मा का लेना, दान देना और स्नान—बाहरी जिस्मानी भी और इंद्रियों के घाट का भी और अंतरीय भी और ज्ञान का अनुभव। और धर्म का नतीजा क्या है? सुख। इस की कसौटी कैसे पता चले कि धर्म क्या चीज़ है? तो व्यास जी के पास (एक साहब) गए कि धर्म के मुतल्लिक बहुत कुछ व्यान किया है कि धर्म क्या है। ये सारी चीजें व्यान हुईं न। कि सीधे तरीके से समझाओ कि धर्म किस को कहते हैं। कहने लगे, “दूसरों से ऐसा सलूक करो जैसा तुम चाहते हो कि लोग तुम्हारे साथ सलूक

करें, यही धर्म है।” बड़ी मोटी बात है। क्या तुम चाहते हो तुम्हारा कोई हक मारे, क्या तुम चाहते हो, तुम्हारी कोई बेइज्जती करे, तुम्हें कोई गाली दे? तुम चाहते हो कि सब तुम से प्यार करें, तुम चाहते हो कि दूसरे आप का दुख - दर्द बाटें और कुछ और भी देते हैं धर्म की निशानी कि उसका नतीजा हमेशा सुख होता है। धृतराष्ट्र ने अर्जुन के गांडीव (धनुष) को गाली निकाली। अर्जुन तीर कमान ले कर गिर्द हो गया मारने को। भगवान कृष्ण खड़े थे, कहने लगे, “अरे अर्जुन! यह क्या करने लगे हो?” कहने लगा, “मेरा यह प्रण है कि जो मेरे गांडीव धनुष को गाली निकालेगा, (मैं उसे) उसी वक्त मार दूँगा।” बोले “ओ, धर्म का नतीजा सुख होता या दुख।” कहा, “सुख।” “यह क्या करने लगे हो?” समझे। तो धर्म की यह है निशानी। इन्सान का धर्म प्रेम है। वह इन्सान नहीं है जो उस का, प्रेम का पुतला न हो। इन सारी चीजों को पाने का एक ही बड़ा इलाज है कि सब चीजें अपने आप आ जाएं, वह है प्रेम। ‘जा घट प्रेम न संचरे’, कबीर साहब ने कहा, ‘सो घट जान मसान।’ ‘जैसे खाल लोहार की सांस लेत बिन प्राण।’

वह इन्सान, इन्सान नहीं है जिस के अंतर प्रेम नहीं है। परमात्मा प्रेम है, आत्मा उस की अंश है, यह भी प्रेम का स्वरूप है। तो प्रेम ही से बाहर के सारे गुण अपने आप आ जाते हैं। जो प्रेम करे सारी बरकतें उस में आ जाती हैं। सारी बरकतें, किसी से झगड़ा नहीं, सुख देना चाहोगे, दूसरों का दुख - दर्द बांटोगे, यह बड़ी बात है। क्यों? जिस से प्यार होगा उस की भलाई चाहोगे। तो इस लिए सारे महापुरुषों ने कहा, “जिन्होंने प्रेम किया, उन्होंने ही प्रभु को पाया है।” जहां प्रेम होगा किसी का दिल नहीं दुखाओगे। ‘अहिंसा परमोधर्मा।’ मुसलमान फकीरों ने कहा है— मैत्रवरो—शराब पी लो। यह बड़ा भारी पाप है। इस से और बड़ा पाप

है— कुरान सरीफ को, और धर्म - पुस्तकों को आग लगा दो, यह भी बड़ा पाप है। आतिश दर काबा ज़न - खुदा के घर में भी आग लगा दो, धर्म - स्थानों को जला दो (यह भी बड़ा पाप है) मगर किसी का दिल न दुखाना, यह सबसे बड़ा भारी पाप है। तो यही इन्होंने भी कहा। सब महापुरुष यही कहते हैं, समझे। एक महापुरुष कहते हैं कि जो हमेशा के सुख को पाना चाहे, वह क्या करे—

जित सख सुखां वर लोऽिए सो सच कमाए॥

जो सब तरह से सुख चाहते हैं, वे सच बोलो। झूठ आखिर ज़ाहिर हो जाता है। कब तक छुपा रह सकता है? झूठ बोलने वाला कहता है— देखो भई, बाहर नहीं कहना किसी को। अरे भई, आप ही कहते हैं बार - बार। परिपूर्ण परमात्मा को हाजिर - नाजिर समझो। जब हाजिर - नाजिर समझोगे तब पाप कैसे कर सकते हो।

होय सगल की रैणका हरि संग समाओ॥

संतजनों के चरणों की खाक (धूल) बन जाओ, नम्रताभाव धारण करो, हरि में समा जाओगे। किसी को दुख न दो, अपने घर में ही घर पहुंच जाओगे आराम से। सत को धारण करो, प्रभु को हाजिर - नाजिर समझो और उस के साथ लगो। किसी को दुख न दो, सब के चरणों की खाक बनो तो प्रभु के घर शोभा से जाओगे। सारे महापुरुष यही कहते हैं। सब धर्मों में यही असूल मुख्तलिफ तरीके से ब्यान किए गए हैं।

दया जाणे जीआ किछु पुन्न दान करे॥

जिस के अंतर दया है सब जीवों के लिए है, कुछ पुन्न दान करे, फिर क्या करे—

दया दिल में राखिए निर्दयी कभी न होय।
प्रभु के सब जीव हैं कीड़ी कुंजर सोय॥

सब पर दया करनी चाहिए। तुम जिस को दुखी करोगे वह तुम को करेगा भई। कीड़ियों (चींटियों) को भी कंगनी (दाना) डालो, दररक्तों की जड़ों में भी पानी दो, समझो। दया है न अंतर से। यह सब के लिए है। इस लिए तुलसीदास जी कहते हैं— सत वचन, संतोख और ज्ञान, ध्यान, स्नान रहे। ‘दया देवता खिमा जप मालिक ते मानस परवान।’ दया का भाव हो, उसकी याद हो, फिर ऐसा इन्सान यहां भी परवान, आगे भी परवान, सौ सियाने एक ही मत। तो इस लिए ‘दया कपाह, संतोख सूत, जत सत वट्ट॥। एह जनेऊ जिआ का, हइ तां पांधे घत्त॥।’ जब गुरु नानक साहब को जनेऊ पहनाने लगे न, कहने लगे, “इस को तो मल लग जाएगी, टूट जाएगा, अगर तेरे पास दया की कपास हो, संतोख का सूत हो और जत की गांठें हों,” अब वट्ट किसके हों— “सत के”, कहते हैं “ऐसा जनेऊ अगर पांधे है, तो पहना दे नहीं तो पहनने से क्या फायदा?” और इस एक चीज़—सत के पाने के लिए— ‘मिठ्ठत नींवी नानका गुण चंगियाइयां तत्त।’ मीठी ज़बान नम्रताभरी, बस। वही जो मैंने पहले अर्ज किया—प्रेम। ‘मिठ्ठत नींवीं नानका गुण चंगियाइयां तत्त—जीवन का तत्त’ - सार यही है। सारे महापुरुष यही कहते हैं।

तुलसी साहब कहते हैं—

दया धर्म का मूल है पाप मूल अभिमान।
तुलसी दया न छाड़िए जब लग घट में प्राण॥

पढ़ने से, याद रखो, किताबों में बहुत कुछ लिखा है। इससे तुम्हारा कोई कल्याण नहीं होगा जब तक तुम इन सब चीज़ों पर अमल नहीं

करते। सुन लिया आप ने, पहली बात। आप का कल्याण तब ही होगा जब ये जीवन का हिस्सा बनेंगी। इसलिए सारे महापुरुषों ने कहा—

सत संतोख दया मन धारो एह करनी सार॥

यह सब करनियों का सार है— सत, संतोख, दया मन धारो। तो यह है धर्म। अगर यह धर्म मिल जाए, इस धर्म से क्या होगा? बैराग। सब बरकतें दुनिया में मिलेंगी, तुम उस पर चल सकोगे। तो योग से ज्ञान होगा। योग कहते हैं— ‘युज’ से निकलता है— ‘योगसः चित्त वृत्ति निरोधा।’ चित्त वृत्तियों के निरोध करने का नाम योग है। इन चीज़ों के संयम में आओगे तब योग बनेगा। बैराग भी बनेगा और योग भी तब ही आएगा। जब योग होगा तब ही अनुभव जागेगा। अनुभव जागेगा तो मुक्ति होगी। तो बड़े प्यार से समझाते हैं—

धर्म तें बिरति जोग तें ग्याना। ग्यान मोच्छप्रद बेद बरवाना॥

समाजों के बदलने से मुक्ति नहीं भाई। हिन्दु हो तो भगवान राम, भगवान कृष्ण का कहना मानो। जो उपनिषद कहते हैं, वेद कहते हैं, वेद यही कहते हैं, उपनिषद यही कहते हैं। सिख हो तो गुरु नानक साहब का कहा मानो, गुरु साहबों का कहना मानो, मुसलमान हो तो मुहम्मद साहब का कहना मानो। ईसाई हो तो क्राईस्ट का कहना मानो। पारसी हो तो जरतुस्ट का कहना मानो। अरे भाई, जो वे कहते हैं वह मानो, वह धर्म पुस्तकों में मौजूद है। मगर धर्म—पुस्तकों के मौजूद होते हुए एक बात याद रहे— जब तक वह टीचर जो किताबों में बोल रहा है, ज़ाहिर (प्रत्यक्ष हो कर) तुम को न मिले, ये चीज़ें तुमको नहीं मिल सकतीं। रेडियेशन से मिलती हैं, life (जिंदगी) life ही से आती है। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं। हां जी—

20) जातें बेगि द्रवउं मैं भाई। सो मम भगति भगत सुखदाई॥

कहते हैं ऐ भाई! जिस चीज़ से मैं जल्दी खुश होता हूं, वह मेरी भक्ति है। कौन सी? यह भक्तों के लिए सुखदायी है यानी भक्त से भक्ति है। भक्ति से मैं खुश होता हूं। अब सवाल यह रहा—भक्ति किस को कहते हैं? तीसरा सवाल था न, वह कौन सी भक्ति है जिस से तुम खुश हो कर लोगों पर दया करते हो? कहते हैं वह भक्ति है। अब भक्ति किस को कहते हैं? आगे कुछ और भी व्याप्ति करते हैं, गौर से सुनिए। अगली तुक पढ़ दो—

21) सो सुतंत्र अवलंब न आना। तेहि आधीन ग्यान बिग्यान॥

कहते हैं वह भक्ति स्वतंत्र है, किसी के आधार पर नहीं। ज्ञान और विज्ञान ये उसी के मातहत (अधीन) हैं। भक्ति के बगैर ज्ञान और बैराग दोनों छोटे हैं। जहां भक्ति नहीं, न ज्ञान बनेगा न विज्ञान बनेगा। इसलिए, आगे—

22) भगति तात अनुपम सुखमूला। मिलइ जो संत होइ अनुकूला॥

कहते हैं ऐ प्यारे! भक्ति सुखों की जड़ है, सुखों की खान है। कब मिलती है इस की गति? जब संत मिलें, बड़ी मोटी बात। जब (तक) वह टीचर (शरीर) में न आए, जब live करता (जीता) है यह जीवन, उस के मंडल में बैठ कर असर मिलता है। ‘वेद ग्रंथ गुर हट्ट है’—वेद और ग्रंथ—ये गुरु की दुकान हैं, ‘जित लग भौजल पार उतारा’—जिस के साथ लग कर इस भवजल संसार से पार जा सकते हैं। ‘सत्यगुर बाझ न बुज्जिए जिच्चर धरे न गुर अवतारा॥’ जब तक सत्स्वरूप हस्ती अवतार धारण करके सामने न आए, असलियत खुलती नहीं और तुम को इंद्रियों के घाट से ऊपर, माया से अतीत हो कर, बाहरी माया,

अविद्या, और प्रकृति, प्रधान से ऊपर जा कर, और पिंड से ऊपर जाना—ज्ञान ध्यान सचमुच हो गया कि नहीं। इंद्रियों के घाट से ऊपर कैसे आओगे? जब कोई ज़िंदा पुरुष मिले। जो प्रभु से मिलना चाहते हो तो—

बिन गुरु भक्ति जो शब्द में पचते सो भी नर मूरख जान।

फिर क्या कहते हैं—

शब्द खुलेगा गुरु मेहर से खैचें सुरत गुरु बलवान॥

उस में दो ही हैं चीजें—एक ज्योति मार्ग, एक श्रुति मार्ग। कब मिलता है? जब इंद्रियों के घाट से हटो। सब इंद्रियों के घाट पर बैठे हैं—आलिम (विद्वान) भी और बेइल्म (अनपढ़) भी। **Self analysis** (आत्मानुभव) का मज़मून हुआ कि नहीं। जिसम्—जिस्मानियत से कैसे ऊपर आ सकते हैं, जीते—जी कैसे मर सकते हैं? **Learn to die so that you may begin to live** (मरना सीखो ताकि तुम हमेशा के जीवन को पा जाओ)। यह प्रैक्टीकल मज़मून है। किताबों, ग्रंथ—पाठ्यों में इस का ज़िक्र तो मिलेगा, (मगर) कैसे ऊपर जा सकते हैं? हम आगे ही मन—इंद्रियों के घाट पर जिस्म का रूप बने बैठे हैं। जितने साधन हम कर रहे हैं, इन सब का काम इंद्रियों के घाट से है। और भई, जो इंद्रियों के घाट का रूप बना बैठा है, वह इन से ऊपर कैसे जा सकता है? तो कहते हैं वह भक्ति किस को कहते हैं, सवाल यह है। कहते हैं वह स्वतंत्र है, ज्ञान और विज्ञान दोनों जिसके मातहत (अधीन) हैं। वह भक्ति क्या है? इसकी तारीफ (परिभाषा) की है। यह भक्ति सब से प्राचीन है, आज नया साधन नहीं शुरू हुआ, पुरातन से पुरातन है, यह रामायण कह रही है। वे कहते हैं यहीं वेद भगवान कहता है, यहीं सब महात्मा कहते हैं। तो यह पुराना साधन है जिस के

वेदों और उपनिषदों में इसके इशारे मिलते हैं। अरे! भगवत् गीता, पुराण, नारद और शांडिल्य के जितने सूत्र हैं उन में इसी का ज़िक्र हैं। इकीस सूत्र हैं नारद जी के, इसी बात को बड़ा खोल - खोल कर व्यान किया है। यह नई चीज़ नहीं, पुरातन से पुरातन है। भक्ति के लफज़ी (शब्दार्थक) मायने हैं— भजना, सेवा करना, आराधना, पूजना। तो जब ऐसा महापुरुष मिल जाए तो दिल से किसी महापुरुष में विश्वास रखना और दिली रजामंदी(सहमति) और रगबत (चाह) के साथ तवज्जो कायम रखने का नाम भक्ति है। और सच्ची भक्ति किस का नाम है? प्रीति का नाम। प्रीति का नाम भक्ति है। भक्ति, प्रीति और प्रेम—ये तीनों एक ही का नाम हैं। तो महापुरुषों ने इस का ज़िक्र किया—

साची प्रीत हम तुम संग जोड़ी। तुम स्यों जोड़ अवर स्यों तोड़ी॥

इस का नाम भक्ति है। जो कई जगह भटक रहा है, मुआफ करना, हलवाई की कुत्ती की तरह, कभी यहां चाटा, कभी वहां चाटा, कभी वहां चाटा—इसका नाम भक्ति नहीं। ‘भगती भगतन हूँ बन आई’— भक्तों ही को भक्ति बन आती है। ‘तन मन गलत भये ठाकुर स्यों आपन लए मिलाई’— न तन की सुध रहे, न मन की रहे, न धन की रहे। महवियत (मगनता) का नाम भक्ति है। हनुमान जी से पूछा गया, “आज क्या दिन है?” कहते हैं, “हे राम!” “आज क्या तिथि है?” कहते हैं, “हे राम!” इस का नाम भक्ति है। न तन की सुध रहे, न मन की, न धन की, न भीतर की, न बाहर की। इस दिली जज्बे का नाम भक्ति है—

मो लालन स्यों प्रीत बनी॥

तोड़ी न टूटे छोड़ी न छूटे ऐसी माधो प्रीत ठनी॥

यह इशारा दिया गुरु अर्जुन साहब ने। छोड़ना चाहते हैं तो भी नहीं छूट सकती। हाफिज़ साहब तो कहते हैं कि कलम को यह ताकत ही प्रभु ने नहीं दी कि इस भक्ति के इशारे भी व्यान कर सके। इस की झलक देखनी हो तो गोपियों की शक्ल में देखो, समझो। श्रीमद् भागवत पढ़िए, क्या नज़ारा दिया है? जाते हैं, भेजते हैं उधो को भगवान कृष्ण गोपियों के पास कि जाओ, जा कर ज्ञान-ध्यान की बातें सुना आओ कि वह तुम्हारी आत्मा की आत्मा है, यह है, वह है। सारा ज्ञान-ध्यान सुन कर कहने लगीं, “ऐ नारायण! जो बातें तुम कहते हो सब सच्ची हैं मगर तुम यह बताओ कि जो आरंभें उस मुरली मनोहर को देखने को तरस रही हैं उन का तुम्हारे पास क्या इलाज है?”

‘माना कि तू दिल के हर कलवत कला में है मकीं’— हे प्रभु! हम मानते हैं कि तू हमारे घट - घट में है मगर ‘ज़रा सामने आ के तू बैठ जा कि नज़र को कूए मजाज है’— ये आरंभें तुम को देखना चाहती हैं। उस का क्या इलाज है, समझो? तो प्रेमा - भक्ति की झलक किस से मिलती है? हनुमान के जीवन से, गुरु नानक साहब के जीवन से, दशम् गुरु साहब के जीवन से—प्रभु की याद में बैठे - ज़मीं तू ही, ज़मां तू ही, मकीं तू ही, मकां तू ही, जलक तू ही, थलक तू ही, सब वदत तू ही, वादित तू ही - व्यान करते करते कहते हैं— तू ही, तू ही, तू ही, तू ही। तू ही, तू ही करते करते तू ही में महब हो जाते हैं। माया से अतीत हो गए कि नहीं। ये हैं भक्ति के नज़ारे। भक्ति में एक ही लगन, एक ही का आसरा - सहारा रह जाता है, बाकी सब खत्म हो जाता है। यह बुद्धि का विचार नहीं, मुआफ करना। यहां बुद्धि क्या करेगी? यह है दिली मुहब्बत के जज्बे का नाम। तो भक्ति में एक आधार है बस और कोई नहीं। तो ऐसे पुरुष, कब आगे भक्ति आती है? जब सब और

चीजों से खाली हो जाए, एक ही एक का ख्याल रह जाता है, बस। तो भक्ति, लोग पूछते हैं, अरे भाई! एक ही का ख्याल रख लो, भक्ति आ जाएगी।

एक भरोसा एक बल एक आस विश्वास।

तुलसी साहब फरमाते हैं—

स्वांति सलिल गुरु चरण हैं चात्रिक तुलसीदास॥

बस। एक ही का बल, उसी का भरोसा, एक ही का सब कुछ। इस का नाम है भक्ति। कहते हैं इस भक्ति से, ऐसी भक्ति बन जाए तो, भगवान कहते हैं, मैं खुश होता हूं। जिसके अंतर और पूजाएं लगी पड़ी हैं, मुआफ करना, प्रभु के, बादशाह के पुजारी और साथ चपड़सियों के पुजारी तुम बन गए तो वहां भक्ति बादशाह की कहां रह गई। एक बादशाह था, अयाज़ उस का एक नौकर था। यह बात समझने की है। उस की वह (बादशाह) बड़ी इज्ज़त करता था। बड़े अमीर वज़ीर सोचते थे कि यह नौकर मामूली सा है, पता नहीं बादशाह उससे इतना प्यार क्यों करता है। उसका प्यार इतना ज़बरदस्त था कि अपने गुलाम का भी गुलाम बना रहता था, समझे। आखिर एक दिन कहने लगे, “बादशाह! तुम अपने गुलाम के गुलाम बने बैठे हो, जो वह कहता है वह तुम मानते हो, बात क्या है जो तुम को पसंद है? कहते हैं कि वह हमें बादशाह समझता है। कि बादशाह सलामत, हम आपको बादशाह नहीं समझते? कहता है, “नहीं।” बड़ी शसोपंज (असमंजस)में पड़ गए। सलामें भी करते हैं, रखड़े भी रहते हैं, सब कुछ करते हैं। दो - चार दिन के बाद क्या किया? एक प्याला था जो खेज़ाने में बड़ा कीमती था, रख दिया। उन को कहा, “तोड़ दो भई।” “बादशाह सलामत, बड़ा कीमती है, हीरे जवाहारत लगे हैं, इस को नहीं तोड़ना चाहिए।” दूसरे

को कहा, दूसरे ने भी यही कहा। तीसरे को कहा, उसने भी यही कहा, “बड़ा अजीबो - गरीब है, यह दुनिया का अजूबा है।” सब ने न कर दी। अयाज़ को बुलाया, “अयाज़!” “कि हां महाराज!” कहने लगे, “इस को तोड़ दो।” उसने डंडा मारा, तोड़ दिया। कहने लगे, “ऐ अयाज़! तुझे समझ नहीं, इतना कीमती प्याला तोड़ दिया।” “कि महाराज! यह प्याला कोई कीमत नहीं रखता तेरी ज़बान के सामने।” यह है बात। देखो हम कहां बैठे हैं। हलवा खुर्दन रुए बाज़ (हलुआ खाने के लिए मुंह चाहिए)। ऐसी भक्ति से मैं खुश होता हूं, भगवान कहते हैं। हम सब कहां बैठे हैं? भगवान को तो भक्ति प्यारी है। जहां भक्ति की रसाई है, न ज्ञान की रसाई है न बैराग की रसाई है। आगे इस मज़मून को और खोल कर समझाएंगे। बैराग और ज्ञान दोनों मर्द हैं, भक्ति स्त्री की तरह है। बादशाह महल में सो रहा है, आधी रात को भी वहां जा सकती है और बैराग और ज्ञान दोनों बाहर दरवाजा खटरखटाएंगे। तो भक्ति दोनों से बढ़ कर है, कहने का मतलब यही है। तो भक्ति के असूल क्या हैं? वह यह समझता है सारी दुनिया ही मालिक का रूप है। वह परमात्मा परिपूर्ण है, पूर्ण है, समझे और यह दुनिया मालिक की बनाई हुई है और बड़ी खूबसूरत है, इस में कोई दुर्घट का रूप नहीं है। आप को पता है, मीराबाई को जब राणा मारना चाहता था तो शेर को एक दिन भूखा रख के अगले दिन छोड़ दिया। उस को थोड़ी देर हो गई थी। शेर दहाड़ता हुआ आया, फूलों का हार (मीरा के) पास था कि भगवान मुझे देरी हो गई है, उस के गले में डाल दिया। उसको भगवान हर एक जगह नज़र आता है, यह भक्ति का असूल है। और किसी का दिल नहीं दुखाओ। प्रभु भक्ति, प्रभु को देखा नहीं, उस की भक्ति कैसे? जिस के अंतर प्रभु इज़हार कर रहा

है, उस की भक्ति का नाम गुर - भक्ति है थोड़े लफ़जों में। तो यह गुर - भक्ति क्या सिखाती है, और गुर - भक्ति की तरफ ले जाती है। कई किस्म की गुर - भक्ति है, समझे। नवधा भक्ति का आगे ज़िक्र आएगा। तो गुर - भक्ति का जिस के अंतर इज़हार है, वह क्या है?

गुरमुख भगत जित सहज धुन उपजै गत मित तद ही पाए॥

सहज की धुनि का उपजना, श्रुति मार्ग का चलना, यह है सच्ची गुर - भक्ति जो अश्रुति में पहुंचा देती है। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं—

भगति तात अनुपम सुख मूला। मिलइ जो संत होइ अनुकूला॥

तो यह भक्ति कहां से मिलती है? Life (जिंदगी) से life (जिंदगी) आती है। जब संत मिलें तब इस भक्ति का राज़ पता चलता है। एक तरफ लगन का लगना। कब लगोगे? (जब) उस का कोई रस आएगा। देने वाला कोई भिले, जोड़ने वाला भिले, तब वह रस भिले। जब रस भिले, दुनिया से अतीत हो जाता है। तो यह भक्ति कब मिलती है? जब संतों की सोहबत (संगति) भिले। संतों की महिमा कर रहे हैं भगवान राम। जी—

(23) भक्ति कि साधन कहउं बरवानी। सुगम पथं मोहि पावहि प्रानी॥

तो भक्ति के साधन मैं व्यान करता हूं जिस से सारी दुनिया में लोग मुझे पा रहे हैं। अब साधन व्यान करेंगे। यह भक्ति कहां से मिलती है? मैंने आगे जबाब दिया। अब फिर आगे खोल कर व्यान करेंगे। वह क्या है?

(24) प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती। निज निज कर्म निरत श्रुति रीती॥

पहली बात यह है कि जो ब्राह्मण ब्रह्म को पहचान गए, प्रभु को जान गए उन से प्रेम करो। यह संतों से मिलेगी जो अनुभवी पुरुष हैं।

कैसे रहो? कि जो बाहरी धर्म तुम्हारा है उसी में रहो, संतों की, ब्रह्म बिंधों की, जो ब्राह्मण बन चुके हैं—

ब्रह्म बिंधे सो ब्राह्मण होई॥

ब्रह्म को बिंध कर पारब्रह्म में जो गया, वह ब्राह्मण है। उन से प्यार करो, वह भक्ति का सरसार सोमा (स्रोत) है, समझे।

सुभर भरे प्रेम रस रंग॥ उपजे चाओ साध के संग॥

जो प्रभु के प्रेम और रस के उभर - उभर कर overflowing (डुलने वाले) प्याले हैं, उन से प्यार करो। यह किताबों के पढ़ने से नहीं, लाइट से लाइट आती है। जैसी सोहबत वैसा रंग। तो भक्ति किस को कहते हैं? किसी का बंदा हो रहे। जान को किसी के हवाले करे, हैरान हो कर फिरे। जहां दिल गया वहां सब कुछ गया। दिल गया, जिस्म गया, जान गई। जहां दिल चला जाता है, सब कुछ चला जाता है, नहीं। बादशाह तरक्त से उत्तर तरक्तों पर आ बैठते हैं, नीचे ज़मीन पर। अमीर गरीब का कोई सवाल नहीं रहता। सब को एक तरक्त पर बिठा देता है नीचे। तो इसलिए जिन के अंतर यह भक्ति है उन की सोहबत करो।

प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती।

उन को प्यार करो। प्यार करने से क्या होगा? यह कई तरह से है। इन्सान दिल रखता है, जिस्म रखता है, रूह रखता है। जिस्म में तत्त्व हैं - आकाश, हवा, आग, पानी और मिट्टी। इस की सूक्ष्म जो हैं हालतें वे शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध हैं। शब्द से क्या है - वचनों का सुनना। यह वचन सुनता है, जो वचन कहा, हां ऐसा ही है। उस के बाद उन को माथा टेकना, गुरु सेवा करनी, समझे। उन का सिर पर हाथ

रखना, आर्शीवाद देना—यह स्पर्श है। उसके बाद गुरु की भक्ति आ जाती है। मन की चार अवस्थाएं हैं— चित्त, मन, बुद्धि और अंहकार। उसी का चित्तवन, गुरु के वचनों का चित्तवन, क्या कहा—
जो वचन गुरु पूरे कहेयो सो मैं छीक गाठड़ी बांधा॥

यह है चित्त की भक्ति। उस का मनन करना—यह मन की भक्ति है। और बुद्धि से उस पर निश्चय करना (कि) यह ठीक है— यह बुद्धि की भक्ति है। उस पर कारबंद रहना (अमल करना) यह अंहकार की भक्ति है। तो यह भक्ति सारी आप को कहां पहुंचाएगी? प्रभु चरणों में लय करेगी। गुरु का सिमरन, उसकी याद, उसका आदर्श हर वक्त सामने रखना, तो कुदरती बात है As you think so you become. अगर गुरु गुरु है, सवाल तो यह है। बड़ा खतरा है यहां पर याद रखो। तब जिसका ख्याल रहेगा, सिमरन रहेगा, तसव्वुर रहेगा, याद रहेगी, उसी का रंग रूप आएगा, उसी का ख़मीर तुम्हें लग जाएगा। अगर वह कुछ और है तो तुम भी वैसे ही बनोगे। इसलिए ध्यान करना बड़ा खतरनाक है, भई। खुदा वही है जो खुद आप आए। जो अंतर में आएगा वह खुद आप किसी के स्वरूप पर होगा। ध्यान नहीं बनाना चाहिए। जो अपने आप प्रकट होगा वह ज़रूर सही होगा क्योंकि वह परमात्मा सब जगह इज़हार कर रहा है। तो जिस्म, दिल कहो, मन कहो, यह उसकी भक्ति है। यह सुनने से, सुन-सुन कर कानों की भक्ति हो गई। देख-देख कर आँखों की भक्ति, देखने की भक्ति हो गई। ज़बान से याद, तसव्वुर, ध्यान, यह ज़बान की भक्ति हो गई। इसके आगे कई दासाभाव भी है कि कई भावों से सेवा करना— ये सब आ जाती हैं। एक मोटी निशानी भक्ति क्या दी है?

जे तू पिया की प्यारनी, पिया को अपना कर ले री।

कला कल्पना भेट कर, चरणन चित्त दे री॥

सब झगड़े खत्म हो जाएं, एक ही एक रह जाए। तो यह है भक्ति। कहते हैं, “इस भक्ति से मैं खुश होता हूँ।” इसमें समाजों का कोई झगड़ा नहीं भाई। किसी समाज में रहो, समाज सब अच्छे हैं, बड़े अच्छे भाव से बनाए गए हैं और हरेक समाज में महापुरुष आए हैं और उन सबकी तालीम तकरीबन वही चली आती है। तर्जे बयान (बयान करने का ढंग) अपना है, ज़बाँदानी (भाषा) अपनी है, नफ्से मज़मून (बात) यही है। तो भगवान कह रहे हैं कि मैं ऐसी भक्ति के साधन खोल कर बतलाता हूँ। यह कैसे मिलती है? महापुरुषों से प्रीति पैदा करने से। और जिस-जिस धर्म में हो, उसमें रह कर सुरत और निरत को उसमें बसाओ। As you think so you become. जी—

प्रथमहिं बिप्र चरन अति प्रीती । निज निज कर्म निरत श्रुति रीती॥

जो - जो जिस वर्ण में है, रहे, यह भक्ति - भाव धारण करे। आपको पता है भगवान राम ने बेर खाए जूठे। किस के? भीलनी के। ब्राह्मणों के नहीं, मुआफ करना। अपने - अपने धर्म रहो और रहते हुए यह धर्म धारण करो, तुम्हारा कल्याण। वह क्या करती थी, आपको पता है? दिखावे की बात नहीं। रास्ते सफा करती थी, काँटे कहीं चुभ न जाएं भगवान को। देखा तो नहीं था न। तब भगवान राम किस के यहाँ गए? ऋषि - मुनि इसी ख्याल में थे कि हमारी कुटिया में (आएगे, क्योंकि) हम बड़े योगी, हम बड़े तपस्वी(हैं)। गए भीलनी के यहाँ, बस। क्या रखा? जूठे बेर। वे क्यों रखे थे चरव कर? कि कोई खट्टा बेर न हो। तो प्रेम में कोई नियम नहीं होता। प्रभु अगर वश में आता है तो प्रेम के वश में। यही भगवान राम कह रहे हैं कि मैं प्रसन्न होता हूँ भक्ति से। तो ऐसी भक्ति जो निराधार है, जिसमें और कोई ख्याल न हो,

प्रेमा - भक्ति कहो, यह ऐसा साधन है जो अनुभवी पुरुषों की सोहबत से मिलता है। आगे—

(25) एहि कर फल पुनि विषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा॥

इसका फल क्या होगा? जिस सुरत में प्रभु समा रहा है या महापुरुषों की, जिनके अंतर प्रभु प्रकट है, उनकी तालीम समा रही है, वहां इंद्रियों के भोगों-रसों की चाह कहां रह जाती है? इसका फल यही होगा, विषयों की चाह अपने आप मिट जाएगी।

जब ओह रस आवा एह रस नहीं भावा॥

और क्या होगा? कहते हैं तब मेरे चरणों में प्रेम पैदा होगा। गुरु - भक्ति की गुरु को कोई ज़रूरत नहीं। एक नाली है, उस में नौ सुराख हैं। पानी बह रहा है और हरेक सुराख से एक - एक कतरा पानी का निकल रहा है। अगर सारे सुराख बंद कर दें और एक सुराख रह जाए, उस में धार मार कर पानी निकलेगा। अरे, सब तरफ से हटा कर, प्रभु के चरणों में समा कर या प्रभु जिनमें प्रकट है, उनके चरणों में समा कर, वहां से वह सब तरफ से हट कर जब एक जगह हुआ वह फूट कर निकलेगा, प्रभु प्रकट हो जाएगा, बात तो इतनी है। इस लिए सब महापुरुषों ने यही कहा कि प्रीति के बगैर वह भगवान रीझता नहीं।

साच कहूं सुन लेहो सभै जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभ पायो।

कि ऐ भाइयो! तुम को सच सच की बात सुनाते हैं, जिन्होंने प्रभु से प्रेम किया वही उस को पा गये। परमात्मा प्रेम है, आत्मा उस की अंश है, यह भी प्रेम का स्वरूप है। जब इस के अंतर एक ही एक की लगन रह जाए, वह इस को पा जाता है, बस।

एहि कर फल प्रति विषय बिरागा। तब मम धर्म उपज अनुरागा॥

कहते हैं कि फिर मेरा प्यार बनेगा। हां जी—

(26) श्रवनादिक नव भक्ति दृढ़ाहीं। मम लीला रति अति मन माहीं॥

कहते हैं सब श्रवण बगैरा का साधन करो। श्रवण, मनन, अध्ययन वह करते हुए नौ प्रकार की भक्ति पूर्ण होगी। नौ प्रकार की भक्ति मैंने अभी सुनाई थी। सुनने से, गुणानुवाद गाने से, सिमरन करने से, अर्चा, पूजा, वंदना, दासा - भाव या मित्र - भाव या सरवंश हवाले कर देने से—यह नौ प्रकार की भक्ति है—नवधा भक्ति। कि इस भक्ति से क्या होगा? इस को मज़बूत दिल में कर ले और मेरी लीलाओं को प्यार से दिल में याद करे, फलानी जगह भगवान गए, फलानी जगह गुरु गया—इन बातों की याद करना भी भक्ति में ही शामिल है। जिसका प्यार है, उस की लीलाओं का दिल में रख्याल है, उस का प्यार बनेगा कि नहीं—

रखो किसी को दिल में, बसो किसी के दिल में।

अनुभवी पुरुषों की सोहबत, पूर्ण पुरुषों की, उन का हर वक्त मनन, उनकी शिक्षा का धारण करना, हर वक्त उसी का रख्याल रहना। As you think so you become.

(27) संत चरन पंकज अति प्रेमा। मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा॥

कि साधुओं के चरण - कमलों से प्रेम हो। साधू किस को कहते हैं?

साध प्रभु भिन्न भेद न भाई॥

समझो।

अलकर्ख पुरुष की आरसी साधों की है देह।

लखा जो चाहे अलकर्ख को इन ही में लख लेह॥

यही और फकीरों ने भी कहा। उस में रसूल और खुदा दोनों आ गए।

कहते हैं मन, वचन, कर्म से भजन में लगे रहो। ऐसी गति से भगवान खुश होते हैं।

(28) गुरु पितु मातु बंधु पति देवा । सब मोहि कहं जानै दृढ़ सेवा॥

कितनी साफगोई (स्पष्ट) आखिर कर दी। कहते हैं मुझ ही को गुरु, मां, बाप, भाई और मालिक समझा कर मेरी दृढ़ सेवा करे। यह भगवान राम कह रहे हैं, रामायण में कह रहे हैं। यह है भक्ति, सब कुछ उसी को मानो—मां भी, बाप भी, फिर भाई भी, देवता भी, मालिक भी, सब कुछ। कहते हैं ऐसी भक्ति से मैं खुश होता हूँ।

(29) मम गुन गावत पुलक सरीरा। गद गद गिरा नयन बह नीरा॥

एक निशानी दी है। जिस के अंतर मेरी भक्ति है उस की क्या अवस्था होगी? कि मेरे गुणों के गाते हुए दिल भर आएगा, समझे, ज़बान गद गद हो जाएगी, आरंवों से आंसू बहेंगे। यह निशानी है भक्ति की। देखो, हम कहां बैठे हैं? हम कहते हैं हम भक्त हैं। उसका रव्याल आने से दिल भर आएगा, दो आंसू बहने लगेंगे। अरे, तुम पूजा करते हो, पाठ करते हो, साधन करते हो, कभी दिल भरा नहीं, दो आंसू नहीं बहे तो यह काहे की भक्ति है? हां, दुनिया की भक्ति तो ज़रूर है। बच्चा बीमार हो जाए, बच्चा याद आए, दिल भर आता है। मर जाए, चीखते हैं, चिल्लाते हैं। ये इंसू आंसू नहीं हैं जो उस तरफ के लिए हैं, ये सब इंसू हैं दुनिया के लिए। यह निशानी दी है कि मेरे गुणों को गाते हुए उस का दिल भर आए, ज़बान गदगद हो जाए, ज़बान से पूरा लफज़ भी न निकले और आरंवों से डब - डब आंसू जारी हो जाए, बस यह निशानी दी है।

मम गुन गावत पुलक सरीरा। गद गद गिरा नयन बह नीरा॥

आगे एक जगह बड़ा **absolve** करते हैं। यहां पर बड़े गौर से सुनिए जो आगे कहते हैं। दुनिया याद रखो, मौलाना रूम साहब कहते हैं—यह वह भक्ति नहीं जो खाने पीने के, जिस्म जिस्मानियत के फसाद से पैदा होती है। न भई, यह आत्मा की भक्ति है। जिस की याद करने से तन - बदन की होश न रहे। जो तन - बदन में फंस गया वह रह गया, वह भक्ति नहीं, वह काम है। आगे बड़ी ताकीद करते हैं। सारे महापुरुष होश में बात करते हैं। गौर से सुनिए। इस का मतलब यह न समझना। दुनिया में भी तो भक्ति है, मुआफ करना, एक - दूसरे के पीछे नाचते फिरते हैं। इस का नाम भक्ति नहीं भाई। आगे कहते हैं, गौर से सुनो—

(30) काम आदि मद दंभ न जाकें। तात निरंतर बस मैं ताकें॥

कि ऐ प्यारे! जिस में काम वगैरा पारखंड नहीं होते, हमेशा मैं उसी में रहता हूँ। काम - भावना न हो, इंद्रियों के भोगों - रसों का रव्याल न हो। जहां ये हों, कहते हैं, वहां मैं नहीं रहता, जहां जिस्म - जिस्मानियत का रव्याल है, वहां मैं नहीं होता। आप को पता है, भगवान कृष्ण जी थे। विदुर के घर गए, उसकी घरवाली नहा रही थी। भक्ति का एक नमूना है। उस को सुध - बुध न रही अपने जिस्म की कि मैं नंगी हूँ या नहा रही हूँ। केले लिए, छील कर खिलाने लगी। क्या? छिलके भगवान को देती जाए और गुदा बाहर फेंकती जाए। यह भक्ति का नमूना है। उस के पतिदेव आ गए, “अरे पागल! क्या कर रही हो?” “हां, क्या हुआ?” कपड़ा पहना, भगवान को केले खिलाने लगी, गुदा उन को खिलाने लगी, छिलके फेंकने लगी। कहने लगे, “अब इस में वह रस नहीं जो पहले था।”

हमारे इतिहासों में इस बात के नजारे हैं। अरे, काम के मायने भक्ति नहीं, याद रखो। अगर कोई भूल में है तो इस को दिल से निकाल दे। जो खुद तन नहीं, वह कहता है मैं भी ऊपर हूं, तुम भी ऊपर आओ, वह जिस्म - जिस्मानियत में तुम को क्यों रखेगा? यही गलती है जिस में आम दुनिया भूल जाती है। बड़ी अच्छी तरह से ताकीद की कि ऐ प्यारे! जिस में काम वगैरा, गर्लर (अंहकार) और पारवंड है— प्रेम में गर्लर कहा, प्रेम में दिखावा कहा, वह तो मरा पड़ा है दुनिया से। दिखावे में यह लेना है, यह लेना है— ऐसी बातें होती हैं— पारवंड कैसे कर सकता है ऐसा पुरुष। कहते हैं जिसके अंतर दिखावा है, जिस के अंतर पारवंड है, गर्लर (अंहकार) है और काम भावना है वहां फिर मैं नहीं रहता, समझो! फिर पढ़िए—

काम आदि मद दंभ न जाकों। तात निरंतर बस मैं ताकों॥

केवल ऐसी जगह मैं हमेशा रहता हूं। आगे फिर दोहा कहते हैं—

(31) दोहा - बचन कर्म मन मोरि गति भजन करहिं निःकाम।
तिन्ह के हृदय कमल महुं करउं सदा बिश्राम॥

कि जो मन, वचन और कर्म से मेरी शरण में आते हैं और निष्काम मेरा भजन करते हैं मैं उन्हीं के हृदय में वास करता हूं।

यह था रामायण, पंचवटी में जहां ज्ञान का लक्ष्मण जी से ज़िक्र हुआ। भक्ति सब के लिए आधार देने वाली चीज़ है। किताबें पढ़ने से नहीं मिलेगी। देखो, हमारी गति क्या है? वे कहते हैं। तो उस गति का एहसास, उस गति का पाना कब मिलेगा? जब कोई महापुरुष मिलेगा, बड़ी साफ बात। यह रामायण से था जो आज आप के सामने रखा गया।

एक से एक बढ़ कर मज़मून हैं मगर हम पढ़ छोड़ते हैं। खाली एक ही पढ़ो, बार - बार पढ़ो, फिर पढ़ो, फिर पढ़ो, फिर पढ़ो। हिदायत वही है जो सब महापुरुषों ने दी है अपने - अपने ज़माने में जब - जब भी वे आए मगर इस को बढ़ाने के लिए आधार क्या होना चाहिए? जब कोई आमिल पुरुष मिले, उसमें रेडियेशन होती है, बेअरिक्टियार खमीर और खुराक मिलती है, समझो। क्राइस्ट (ईसा मसीह) ने एक दफा कहा —Word was made flesh and dwelt amongst us - शब्द मुजस्सम (देहधारी) हो गया और हमारे दरभियान रहा। फिर कहने लगे — Eat me and drink me— मुझे खाओ और मुझे पियो। जिस्म का तो सवाल नहीं। जिस्म को कौन खाए, भई। भाप जो बर्फ बन चुकी है, जो उस में इज़्हार कर रही है उस को खाओ, उस को पियो।

संत्सग प्रवचन – 3

रामायण का सार

सत्संग, 7 अक्तूबर 1962
रामलीला मैदान दिल्ली

6 अक्तूबर, 1962 ई० को रामलीला कमेटी, दिल्ली की ओर से रामलीला मैदान में हजूर सन्त कृपाल सिंह जी महाराज को भारत का राष्ट्र सन्त घोषित करते हुए उन्हें रामायण की एक प्रति भेट की गई जिसे हजूर महाराज ने बड़े आदर के साथ अपने सिर पर रख लिया। रामलीला शुरू होने से पहले हजूर महाराज जी ने भगवान राम और भगवती सीता को तिलक लगाया। रामलीला कमेटी के अनुरोध पर हजूर सन्त कृपाल सिंह जी महाराज पुनः 7 और 8 अक्तूबर को रामलीला मैदान तशरीफ ले गए जहाँ प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू और गृह मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के साथ रामलीला कमेटी की ओर से उनका ग्रुप फोटो लिया गया। तत्पश्चात् राजसत्ता के प्रतीक प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू और अध्यात्म सत्ता के प्रतीक राष्ट्र सन्त हजूर सन्त कृपाल सिंह जी महाराज ने बारी-बारी भगवान राम और भगवती सीता को तिलक दिया और मुकुट पहनाया। उस समय रामलीला नाटक के पात्रों के साथ हजूर महाराज, प्रधान मंत्री और गृह मंत्री के ग्रुप फोटो लिए गए। यह रिपोर्ट नवंबर, 1962 के सत्सदेश से ली गई है।

यह एक सुखद संयोग था कि रामलीला मैदान में भारतीय सांस्कृतिक परंपरा एवं सनातन धर्म की प्रतिनिधि सभा की ओर से ‘राष्ट्र संत’ की उपाधि से सम्मानित किए जाने से महीना भर पहले हजूर सन्त कृपाल सिंह जी महाराज को ईसाई जगत की डेढ़ हजार वर्ष

रामचरितमानस : एक अंतरीय झलक

पुरानी सर्वोच्च धर्म संस्था Sovereign Order of St. John, Knights of Malta की ओर से Grand Commander (धर्मवीर) की उपाधि से अलंकृत किया गया था जिसका ज़िक्र श्री प्रेमचन्द गुप्ता ने, जो उस अलंकरण समारोह में शामिल थे, अपने स्वागतीय भाषण में किया। इस सन्दर्भ में यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि ईसाई जगत की इस प्राचीनतम सर्वमान्य संस्था को पहली बार किसी गैर ईसाई को ईसाई धर्म के रक्षक, Grand Commander की उपाधि देने के लिए अपने पन्द्रह सौ वर्ष पुराने संविधान में मूलभूत परिवर्तन करना पड़ा और सैद्धांतिक तौर पर इस बात को स्वीकार करना पड़ा कि धर्म और आस्तिकता ईसाई धर्म का एकाधिकार नहीं है, गैर-ईसाई समाजों में भी महापुरुष हो सकते हैं। श्री प्रेमचन्द गुप्ता ने हजूर सन्त कृपाल सिंह जी महाराज का परिचय कराते हुए उन के द्वारा सारे संसार को मिल रही आत्मज्ञान की रोशनी का भी ज़िक्र किया।

रामायण में सन्त मत

हजूर सन्त कृपाल सिंह जी महाराज का प्रवचन

यह महान ग्रन्थ जो पेश किया गया है, परम सन्त गुरुसाई तुलसीदास जी की वाणी है, यह हमारे सिर-माथे पर है क्योंकि यह एक अनुभवी महापुरुष की वाणी है। इस ग्रन्थ में जो कथा बयान की गई है उसके दो पहलू (पक्ष) हैं, एक बाह्य, एक अन्तरीय। गुरुसाई तुलसीदास जी ने इन दोनों पहलुओं को ‘रामायण’ की कथा में बड़ी खूबसूरती और सफाई से सहज-सरल भाषा में व्यान किया है। बाहर श्री रामचन्द जी की कथा के माध्यम से नैतिकता और सदाचार के हर पहलू पर भरपूर रोशनी उन्होंने डाली है। स्त्री का पुरुष के प्रति और पुरुष का स्त्री के प्रति क्या

धर्म है? पुत्र का आदर्श क्या है? राजा की प्रजा के प्रति क्या जिम्मेदारी है? सदाचारी जीवन के हरेक पहलू को लेकर नीति की व्याख्या की है, सन्त और असन्त के लक्षण बताए हैं और राम की महिमा बरवान की है। यह तो बाहरी नैतिक जीवन के बारे में है।

‘रामायण’ की असल शिक्षा, जो कहानी के पर्दे में बयान की गई है, आध्यात्मिक है अर्थात् आत्म - तत्त्व बोध के बारे में है। इस में पराविद्या या आत्म - ज्ञान की पुरातन और सनातन से सनातन शिक्षा की व्याख्या की गई है। हिन्दुओं के इस प्रमाणिक धर्म - ग्रन्थ में अन्तरीय आध्यात्मिक संग्राम का वर्णन है, जो हरेक इंसान के अन्दर निरन्तर हो रहा है। यह देवासुर संग्राम मन की सतोगुणी और रजोगुणी वृत्तियों की लड़ाई या नेकी और बदी की जंग हर इन्सान के अन्दर हो रही है। ‘रामायण’ के मुख्य पात्रों से लेकर कथावस्तु के घटनाक्रम तक सारा वर्णन अलंकार में है। ‘रामायण’ की कहानी को लीजिए। दशरथ यह मानव शरीर है, यह एक रथ है जिस में पाँच ज्ञान - इन्द्रियों और पाँच कर्म - इन्द्रियों के दस घोड़े जुते हुए हैं जो इसे चला रहे हैं। सीता रुह या आत्मा है। सीता के जन्म के बारे में ज़िक्र आता है कि वह धरती से, घट से निकली। अलंकार रूप में शरीर के घट में कैद रुह की तरफ इशारा है जो शरीर के घट में मन - इन्द्रियों का रूप बन कर मिट्टी का रूप बन कर रह गई है।

दशरथ की तीन रानियाँ— कौशल्या, सुमित्रा और कैकेई हैं। तीन गुण हैं— सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण। कौशल्या सतोगुण है, सुमित्रा रजोगुण है। इनके बेटे भी इसी तरह हैं, राम सतोगुण हैं और लक्ष्मण रजोगुण। मन की ये दो अवस्थाएँ हैं— सात्त्विक और राजसिक— जिन में निरन्तर संग्राम चलता है। रामायण की कहानी में लक्ष्मण को देखिए, हर वक्त लड़ने - मरने को तैयार है। भरत राम से मिलने वन में

आते हैं तो लक्ष्मण उनसे लड़ने को तैयार, परशुराम से वाद - विवाद हुआ तो वहाँ भी लक्ष्मण लड़ने - मरने को तत्पर। सूर्पनखा के साथ भी यही मामला पेश आया। और राम को देखिए, हर जगह नीति से काम लेते हैं।

रावण अहंकार है। आत्मा (सीता) जो शरीर के घट में मन - इन्द्रियों का रूप होने के कारण शरीर और शारीरिक सम्बन्धों से लम्पट होने करके, इन्द्रियों के घाट से बाहर के संस्कार लेने करके ज़मीनी हो गई है, रावण (अहंकार) उसे हर लेता है और अपने साथ ले जाता है। राम और रावण का युद्ध होता है। राम सतोगुण है, सात्त्विक वृत्ति, जो कि मन का निज स्वरूप है, निज - मन कह लो उसे और लक्ष्मण इन चमड़े की आँखों से दिखने वाले स्थूल, दृष्य जगत में विचरने वाला, स्थूल, शारीरिक या पिण्डी मन है। युद्ध में राम की सात्त्विक वृत्ति की जीत होती है और वह सीता (रुह या आत्मा) को रावण (अहंकार) के पंजे से छुड़ा कर वापस ले आता है। राम को राज्य मिलता है तो सीता उसे छोड़ कर चली जाती है अर्थात् मन अपने असल स्वरूप, सतोगुणी वृत्ति को पा गया, सात्त्विक वृत्ति से, right understanding, सन्मति से उसका संयोग हो गया, विवाह हो गया, सीता (रुह) अपने निजधाम को प्रस्थान कर गई। राम अर्थात् सतोगुण की विजय से आत्मा, सीता, अपने असल रंग में आ गई, सब जिस्म - जिस्मानियत से हट गई कहो, शारीरिक बन्धनों से आजाद हो गई। राम ने राज्य सँभाल लिया, रुह (सीता) अपने निज रूप में आकर अपने स्रोत महाचेतन प्रभु में समा गई जिसकी वह अंश है।

तो यह है अन्तर की कहानी, जिस में आत्म - तत्त्व बोध की, परमार्थ प्राप्ति की सनातन से सनातन, पुरातन से पुरातन विद्या की व्याख्या गुसाई तुलसीदास जी ने की है और कहानी के साथ जीवन के

हर पहलू की भी व्याख्या वे करते चले गये हैं। बाहरी सदाचारी जीवन के संबंध में भी सर्वांग संपूर्ण तालीम दी है 'रामायण' में और अंतरीय आध्यत्मिक पक्ष को भी पूरी तरह खोल कर बयान किया है। सन्त - असन्त के लक्षण बताए हैं, राम और नाम की महिमा खोल कर बयान की है। संत तुलसीदास जी की यह वाणी, जो पेश की गई है, मेरे सिर माथे पर है। इसमें सन्तों की तालीम पेश की गई है जो आज दिन तक दुनिया में आए और आज दिन तक लिखे गए धर्म ग्रन्थों की तालीम का सार है।

+++

सत्यगुरु महिमा

(उत्तरकांड में गरुड़ - काकभुशुंडि संवाद)

सत्संदेश, नवंबर 1962 में प्रकाशित

जिस नज़र से सन्त - महात्मा दुनिया को देखते हैं वह नज़र कोई और है। उनकी आत्मा मन - इन्द्रियों से आज़ाद होकर अपने आपको जान चुकी है और अपने आप को जान कर प्रभु में अभेद हो चुकी है। वे **mouthpiece of God** (गुरुमुख) बन गये।

जैसी मैं आवै खसम की वाणी, तैसड़ा करि ज्ञानु वे लालो।

कि जैसा मुझे मालिक अन्तर से कहाता है मैं कहता हूँ, मैं अपने आप कुछ नहीं कह रहा।

गुफतए ओ गुफतए अल्लाह बवद
गरचे अज हल्कूमे अद्बुल्लाह बवद

उनका कहा हुआ प्रभु का कहा हुआ होता है, गो (चाहे) ज़ाहिरा शक्ल में वह इन्सानी गले से आवाज़ निकलती मालूम होती है। तो ऐसे पुरुष कहते हैं, ऐ इन्सान! तू भूल में जा रहा है, तू गलफत में सो रहा है।

माया मोहि सभो जगु सोइया, इहु भरमु कहो किउ जाई॥

दुनिया सारी सो रही है, भूल में जा रही है। माया कहते हैं भूल को। वह भूल क्या है?

एहु सरीरु मूल है माया॥

जिस्म से शुरू होती है। हम आत्मा देहधारी हैं, जिस्म का रूप बन

गये। यही बड़ी भारी भूल है। आत्मा देहधारी बनने पर हम आत्मा के level (स्तर) से दुनिया को देखेंगे न। मगर हम जिस्म का रूप बन गये, जिस्म के लैवल से दुनिया को देख रहे हैं। चीज़ है कुछ और, नज़र कुछ और आ रही है। सारे वेद - शास्त्र कहते हैं कि जगत् असत्य है, आत्मा सत्य है। असत्य से मुराद है बदलने वाला, एकरस न रहने वाला। मगर हमें क्या मालूम होता है? कि जगत् सत्य है। यह जिस्म और जगत् सारा ही matter का (भौतिक तत्त्वों का, मादे का) बना हुआ है। **Matter is changing** (मादा बदल रहा है) हर लम्हा लम्हा (प्रति पल) मगर क्योंकि हमारी आत्मा मन - इन्द्रियों के घाट पर जिस्म का रूप बनी बैठी है, इतनी इसके साथ **identify** (लंपट) हो चुकी है कि यह अपने आपको, गो (यद्यपि) है आत्मा देहधारी, देह ही समझ रही है। यही भूल है और फिर देह के लैवल से सारी दुनिया को देख रहा है। पहले भूल किस बात से शुरू होती है? कि यह जगत्, यह जिस्म हमें सत्य भासता है। गो (चाहे) हम देखते हैं कि ऐसे ही जिस्म हमने कई बार अपने कंधों पर उठाये हैं, श्मशान भूमि में पहुँचा कर अपने हाथों से दाग (जला) दिये हैं मगर फिर भी हमें यकीन नहीं आता कि यह जिस्म छोड़ना है। समझे? यही भूल है।

देखते हैं आँखों से, कंधों पर उठा कर हाथों से दाग भी देते हैं ऐसे ही जिस्मों को, मगर हमें यकीन नहीं होता कि मैं जिस्म हूँ या आत्मा हूँ। बड़ी भारी भूल यहीं से शुरू होती है। इस लिए क्योंकि जिस्म बदल रहा है, सारे जगत् के जर्रे - जर्रे (कण - कण) बदल रहे हैं। इसलिए जब दोनों चीजें एक ही रफ्तार से बदल रही हों तो यही मालूम होता है कि ये खड़ी हैं, हालाँकि वे बदल रही हैं। अब इस भूल से जो निकल चुके हैं, वे देखते हैं कि सब आत्मा देहधारी हैं, आत्मा की ज़ात (जाति) वही है जो परमात्मा की ज़ात है। कुछ दिनों के लिए यह जिस्म हमको, मनुष्य

जीवन का, भाग्य से मिला है। इसमें हमने जागना था। हम अन्तर से सो रहे थे बाहर फैलाव के कारण। तो महापुरुष जो जाग उठे हैं, वे कहते हैं, अरे भाइयो! तुम सो रहे हो। समझे? आत्मा मन के अधीन है, मन आगे इन्द्रियों के अधीन है, इन्द्रियों को आगे भोग खैंच रहे हैं। यह बाहर का रूप बना बैठा है, अन्तर से बेशुद और बेखबर है, यही रोना है। जब - जब महापुरुष आते हैं तो कहते हैं अरे भाइयो! तुम जागो। यही वेद भगवान ने कहा, **Awake, arise and stop not till the goal is reached.** जागो, खड़े हो जाओ और उस वक्त तक न ठहरो जब तक तुम मंज़िल पर न पहुँच जाओ। यही कबीर साहब ने कहा—

जाग प्यारी अब काहे सोवै, रैन गई दिवस काहे को खोवै॥

कि ऐ सुरत! ऐ रुह! तू जाग। अब मनुष्य जीवन का दिन चढ़ा है, यह तेरे जागने का वक्त है, तू अब भी सो रही है? जागेगी कब? तो यह है नज़रिया (दृष्टिकोण) उन पुरुषों का जो जाग उठे हैं। वे देखते हैं हमारे सब भाई सो रहे हैं। इसलिए जगह - जगह पर इस बात पर ज़ोर दिया कि—

जागि लेहु रे मना जागि लेहु, काहे गाफिल सोया॥

अरे भाई! तू ग़फलत में क्यों जा रहा है? आखिर जिस्म को छोड़ना तो पड़ेगा। इसका नाम, छोड़ने का नाम है, इन्तकाल करना, मुन्तकिल होना, मरना। यह कोई हव्वा नहीं, एक तबदीली का नाम है, **physical plane** से ऊपर आ जाना। अगर अभी हम ऊपर आना सीख जायें, जिस्म से **analyse** (अपने आपको अलग) कर सकें, जिस्म - जिस्मानियत से ऊपर आ सकें, यह देखने वाली नज़र दुनिया की बदल जायेगी। तो ऐसे महापुरुष कहते हैं कि भाइयो! जागो। जागते

पुरुषों की बड़ी भारी आवश्यकता है क्योंकि हम सब मन - इन्द्रियों के घाट पर जिस्म का रूप बने बैठे हैं। वह जागता पुरुष एक ऐसी हस्ती है जिसने अपनी आत्मा को जिस्म से अलग कर अपने आपको जाना है, प्रभु अनुभव को पा रहा है। जो जागा है, वही तुम को जगा सकेगा न। आलिम भी मन - इन्द्रियों के घाट पर अन्तर से सो रहे हैं बाहर फैलाव के कारण, ग्रन्थाकार भी, चातुर भी। अमीर और गरीब सब एक ही भूल में जा रहे हैं। जो जाग उठता है पुरुष, वह कहता है अरे भाई, मैं भी तुम्हारी तरह इन्सान हूँ। तुम भूल में जा रहे हो, आखिर जिस्म छोड़ना पड़ेगा। जीते - जी इससे ऊपर आना सीखो। तो ऐसे पुरुष की अति आवश्यकता है। वे (जागते पुरुष) क्या समझाते हैं? वे कहते हैं, हम तुम्हारी तरह इन्सान हैं मगर अपनी आत्मा को मन - इन्द्रियों से ऊपर लाकर अपने आपका अनुभव कर रहे हैं, प्रभु - अनुभव को पा रहे हैं। तुम भी जागो, मनुष्य जीवन ही एक जागने का वक्त है। अगर इसमें हम जाग उठे, हमारी आत्मा मन - इन्द्रियों से ऊपर आना सीख गई, जहाँ मर कर जाना है, अभी जीते - जी वहाँ जाना सीख गये तो मौत का खौफ (डर) न रहा। मौत में क्या होता है? जिस्म को आत्मा छोड़ती है। अब जीते - जी जिस्म छोड़ना सीख जाएँ तो मौत के भय से आज़ाद हो जाएँगे न। इसी लिए महापुरुषों ने कहा, **Learn to die so that you may begin to live**, जीते - जी मरना सीखो ताकि तुम हमेशा की ज़िन्दगी को पा जाओ। मौलाना रूम ने कहा—

बमीर ऐ दोस्त पेश अज़ मर्ग, अगर मी ज़िन्दगी खाही।

ऐ दोस्त! अगर तू हमेशा की ज़िन्दगी चाहता है तो मरने से पहले मरना सीख। यही सब महापुरुष कहते हैं—

नानक जीवतिआ मरि रहीऐ ऐसा जोगु कमाईए॥

और,

दादू पहले मर रहो पाढे मरे सब कोय।

तो जीते - जी अगर इस राज़ (भेद) को हम हल कर लें तो हमारे दोनों हाथ लड़ू रहें, दुनिया में भी सुखी और मर कर भी।

एह लोक सुखीए परलोक सुहेले॥

हम क्योंकि भूल में जा रहे हैं, जिस मकान की बुनियाद टेढ़ी रख दी जाये, कितनी भी मंज़िलें उसके ऊपर चढ़ाओ वे टेढ़ी ही जायेंगी। तो हम जिस्म रखने वाले, शरीरधारी थे, आत्मा देहधारी थे, आत्मा देह धारण किये हुये थे मगर देह का रूप बन गये। यहीं से भूल शुरू हुई और यहीं से मोह में फँस कर दुनिया में लम्पट हो रहे हैं। बार - बार दुनिया में आने का कारण यही है।

जहाँ आसा तहाँ वासा॥

अगर थोड़ी बहुत हम प्रभु की याद करते नज़र भी आते हैं वह किस लिये? कि हमारे दुनिया के सामान बने रहें, हमारी रोज़ी बनी रहे, हमारे बच्चे राज़ी रहें, फलाना बीमार है ठीक हो जाये, फलानी मुश्किल है आसान हो जाये। परमात्मा को एक मददगार चीज़ समझ हम उसको याद कर रहे हैं। तो सच्चे मायनों में हम पुजारी किस के हैं? दुनिया को। दुनिया को पाने के लिए प्रभु को याद कर रहे हैं। ऐसे पुरुष मर कर कहाँ जायेंगे? बार - बार दुनिया में ही आएँगे। सच्चे पुजारी तो दुनिया के हैं न। जो अनुभवी पुरुष जाग उठे हैं, वे कहते हैं, हम तुम्हारी ही तरह इन्सान हैं और वाकई सब इन्सान इन्सान एक हैं। जिस तरफ किसी ने **development** की, तरक्की की, उस तरफ के राज़ (भेद) के जानने वाला हो गया। जो लोग उस तरफ जाना चाहते हैं, उनके लिए

वह मददगार हो जाता है। एक डाक्टर है, वह तुम को डाक्टरी सिखायेगा, जो डाक्टरी सीखना चाहते हैं। वह जिस्म की साईंस से माहिर है, वह तुम को जिस्म की साईंस सिखला देगा। मगर है इन्सान, फिर डाक्टर होगा। इसी तरह एक वकील है, वह कानून को समझता है। है इन्सान वह भी मगर क्योंकि कानून से वाकिफ है, उसको समझ भी सकता है, **apply** भी कर सकता है, हम उसको **engage** करते हैं, “महाराज! हमारा मुकद्दमा लड़ दो।” इसी तरह जो आत्म-विद्या के माहिर हैं, अपने आपका अनुभव जिन्होंने किया है और प्रभु-अनुभव को पा रहे हैं, जीते - जी मन - इन्द्रियों के घाट से ऊपर जाते हैं और जाग उठे हैं और दूसरों को जगाने के काबिल हैं, ऐसी हस्ती का नाम गुरु, साधु, सन्त और महात्मा है। और ऐसे महापुरुषों की बड़ी भारी महिमा गाई है। आगे हमेशा मुख्यतया (विभिन्न) महापुरुषों की बाणी रखती जाती है, आज रामायण का कुछ हिस्सा आपके सामने रखा जायेगा। रामायण एक बड़ा भारी अद्भुत ग्रन्थ है। समझे? तो उसमें काकभुशुंडि का ज़िक्र आता है। वे अपनी कथा सुनाते हैं कि भाई मैं क्या था, मैंने क्या किया, क्यों मैंने इस जन्म को पाया? वहां गुरु की बड़ी भारी महिमा बतलाई है, गुरु, **so-called** (तथाकथित) गुरु से मुराद नहीं, आज **so-called** गुरुओं से दुनिया भरी पड़ी है। बट्टा उठाओ, गुरु मिलता है। गुरु उसी का नाम है जो अँधेरे में प्रकाश करे। ‘गिरि root (धातु) से निकलता है यह लफ़्ज, जो अन्तर में प्रणव की ध्वनि को सुना सके।

धुन आवे गगन ते सो भेरा गुरुदेव।

जो जिस्म को **analyse** करके ऊपर जाता है, दूसरों को ले जा सकता है, जिस की अन्तर की आँख खुली है, परमात्मा की ज्योति को देखता है, दूसरों को दिखा सकता है। वह अखण्ड-कीर्तन, जो

उद्गीत हो रहा है, श्रुति हो रही है, उसको वह खुद सुनता है, दूसरों को सुना सकता है। अरे भई, जो जीते - जी पिण्ड से ऊपर आकर अपने आप सफर करता है, दूसरों को ऊपर जाने के मार्ग का **experience** (अनुभव) दे सकता है, ऐसे पुरुष का नाम साधु, सन्त और महात्मा है।

आपको पता हो, राजा जनक को सारे हिन्दुस्तान भर में दो सम्मेलन करने के बाद एक अष्टावक्र मिले जो जीते जी इस राज़ को समझा सके, **experience** (अनुभव) दे सके। राजा जनक से पूछा अष्टावक्र ने, “क्यों भई ज्ञान हो गया?” कहते हैं, “हाँ महाराज! हो गया।” लेने वाला कहे कि मुझे कुछ मिला है। तो वह महापुरुष भी हमारी तरह इन्सान ही है मगर इन्सान होते हुए उन्होंने आत्मिक पहलू को, आध्यात्मिक सिलसिले को बढ़ाया है। हम में भी वैसे ही हक्कू (सुविधायें) मौजूद हैं, यह नहीं कि उसको खास रियायत, **special concession** रखा गया है। हमने जिस्म के तौर पर, बुद्धि के लिहाज़ से, बाहरी इल्मों के लिहाज़ से तरक्की की है। जो उस इल्म को सीखना चाहे, हम उसको सिखला सकते हैं। मगर हमारा आत्मिक पहलू बहुत कमज़ोर है। **We know little or nothing**, तो जो आत्मविद्या का माहिर, अध्यात्म पुरुष जो हो गया वह देख रहा है कि वह (प्रभु) मुझ में काम कर रहा है। **I and my father are one** और

जैसे में आवे खसम की बाणी तैसड़ा करि ज्ञान वे लालो॥

तो ऐसा पुरुष जो है, उसका नाम साधु, सन्त और महात्मा है। अगर हम इस सोई हुई हालत से उठना चाहते हैं, जागना चाहते हैं तो जागते हुए पुरुषों की सोहबत (संगति) करें।

हमा आलम खुफ्ता, तो हम खुफ्ता
खुफ्ता रा खुफ्ता कै कुनद बेदार

सारा जहान सो रहा है और तू भी इसके साथ सो रहा है। समझे? सोये हुये को सोया हुआ कैसे जगा सकता है? तो इस वक्त आपको काकभुशुंडि का वाकेया, कि कैसे उन्होंने काग की योनि पाई, है तो बहुत सारा सिलसिला लम्बा सा दिया हुआ, मगर थोड़ा सा आपके सामने रखा जायेगा इस बात को बतलाने के लिए कि हमारे वेद - शास्त्र, ग्रन्थ - पोथियाँ क्या कहते हैं। मनुष्य जीवन पाकर जिसको अनुभवी पुरुष मिल गया, उसका मनुष्य जीवन सफल हो गया। वह पहलू जो हमारा बड़ा **dark** (अंधकारमय) हो रहा है, जिस के मुत्तलिक (संबंधी) हम कुछ नहीं जानते सिवाय इस बात के कि ग्रन्थों - पोथियों में जो लिखा है, उसका उच्चारण कर दें, हमारे **experience** (अनुभव) में उसमें से कोई बात नहीं आई, तो ऐसे पुरुष की सोहबत में हम उस गति को पा सकते हैं जिसको उन्होंने पाया है।

सन्त और पारस में बड़े अन्तरो जान।
ओह लोहा कंचन करे ओह करले आप समान।।

पारस लोहे को सोना बनाता है, पारस नहीं बनाता। सन्त आपको सन्त बना देता है। इस वक्त काकभुशुंडि का, जो वे गुरु के पास गये इसी चीज़ को हल करने के लिये और फिर उनकी गति को न जान कर उनका निरादर सा किया, उसका **result** (नतीजा) जो हुआ, उसका ज़िक्र करेंगे, गौर से सुनिये। काकभुशुंडि ज़िक्र करते हैं अपने जीवन का पहले थोड़ा सा। वह यह है कि उन्हें बहुत सारी गरीबी आ गई थी। दुखी होकर, कहते हैं, हम उज्जैन शहर में गये। वहाँ अकाल का ज़माना था, उस के गुज़र जाने पर कुछ रूपया मिला गुज़रे मात्र। कहते हैं, फिर मैंने शिव भगवान की पूजा करनी शुरू की। वहाँ पर जब मन्दिर में मैं जाया करता था तो वहाँ एक ब्राह्मण था जो शिव की पूजा किया करता था। आज के ब्राह्मण और पुराने ज़माने के ब्राह्मण में बड़ा भारी

फर्क है। पहले ज़माने में पैदायशी (जन्मजात) लिहाज से ये समाज नहीं चलते थे। हर इन्सान जिस गति को वह पाता था, उस के मुताबिक वह कहलाता था। ब्राह्मण वही था, 'ब्रह्म बिन्धे सो ब्राह्मण होई', जो ब्रह्म को बिन्ध ले, ब्रह्म का अनुभव करके पारब्रह्म बिन्ध कर पार हो जाये उसका नाम ब्राह्मण था। पढ़ने लिखने वाले का नाम भी ब्राह्मण नहीं था। वह वेदों - शास्त्रों का जो सार है, जो उसको जानने वाला था और तरक्की करके ब्रह्म से पारब्रह्म में जाने वाला था, ऐसे पुरुष का नाम था ब्राह्मण। आजकल तो है न ब्राह्मण का बेटा ब्राह्मण, उस वक्त ऐसा नहीं था। वाल्मीकि डाकू थे, महर्षि वाल्मीकि बन गये। इस बात की तमीज़ उन ज़मानों में नहीं थी। तो वह ब्राह्मण वहाँ शिव भगवान की पूजा किया करता था। वह बड़ा साधु था, परमार्थ के जानने वाला था और महादेव की पूजा करने वाला था। ये ताकतें (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) भी परमात्मा ने बनाई हैं खास - खास काम करने के लिये, उसी की तीन इज़्ज़हार की सूरतें हैं कहो। जो जिस शक्ति से भी उस की आराधना करता है, उसको कुछ न कुछ फल मिलता है। और कहते हैं, "मैं उसके पास गया, साधारण तरीके से गुरु धारण कर लिया। मैं उसकी खिदमत (सेवा) तो करता था मगर कपट के साथ करता था, ऊपर - ऊपर से करता था।" याद रखो, हम लोगों को गुरु मिल भी जाये तो हम उसको सचमुच दिल से तसलीम (स्वीकार) नहीं करते, दिखावे के लिए कर लेते हैं। कहते हैं, "मैं कपट से उसकी पूजा किया करता था मगर वह ब्राह्मण बड़ा नीति के जानने वाला था और बड़ा दयालु पुरुष था।" ब्राह्मण ने तो दयालु होना ही है, जो ब्रह्म को बिन्ध कर पार हो जाये। परमात्मा प्रेम है, **compassion** है, दया का स्वरूप है, दया का पुंज है। जो उसको पा गये, अवश्य उनके अन्तर भी वह दया का पुंज होता है। **Love beautifies everything.** उसके

पास कोई जाकर उसका निरादर भी करे तो भी वह प्यार से धोता है। बच्चा अगर हमारी दाढ़ी में हाथ डाल दे तो हम उसको बुरा समझते हैं? प्यार और दया होने के सबब से बच्चे को उस निरादरी पर भी कुछ नहीं कहते, प्यार से और समझाने का यत्न करते हैं। तो इसी तरह कहने लगे कि मैं उस की सेवा किया करता था, कपट से, ऊपर - ऊपर से।

गुरु को ऊपर ऊपर गाता। गुरु को मन भीतर नहीं लाता॥

स्वामी जी महाराज फरमाते हैं, गुरु को ऊपर ऊपर से हम गाते हैं, दिल के अन्तर, जो वह कहता है, उसको धारण नहीं करते। इसलिए हमको अनुभवी पुरुष के मिलने का पूर्ण फायदा नहीं होता। तो इसलिए कहते हैं, एक दिन उन्होंने मुझे बुला कर बड़े नरम दिल होकर बड़े प्यार से समझाया कि देख भाई, मनुष्य जीवन भाग्य से मिला है, तू कुछ किया कर। वह करना क्या है? उपदेश दे दिया और कहा कि इस तरह से तू भी उस मालिक की पूजा किया कर। कहते हैं मैं तो बहुत नीची ज़ात का था, बहुत बड़ा पाप करने वाला था, कमीनी कौम से था, अज्ञान में ऐसा चूर था कि ब्राह्मण और हरि-भक्तों को देख कर, बजाय इसके कि उनकी तारीफ करूँ, अपने दिल में देख कर जला करता था कि इनकी महिमा क्यों होती है? उलटा उन से दुश्मनी करने लगा। गुरु रोज़ प्यार से समझाया करता था मगर मेरे तर्जे अमल (कार्य व्यवहार) को देख कर दुखी होता था। मुझे ज्यादा गुस्सा आता था क्योंकि पारखण्डी को नीति अच्छी नहीं लगती। कुदरती बात है, जो पारखण्डी हो, उसको नीति का सवाल ही नहीं रहता।

तो आगे वे फिर अब ज़िक्र करेंगे कि मेरा गुरु से क्या ताल्लुक हुआ, मैंने क्या किया और कैसे मैंने इस गति को पाया? यह उसकी

पहली history (इतिहास) है थोड़ी सी। हम भी इससे क्या सबक सीख सकते हैं? अरे भाई, अगर हम भी कपट से गुरु की सेवा करते हैं, ऊपर ऊपर से दिखावे से ही तो क्या लेंगे हम? गुरु और शिष्य में दिल से दिल की राह बनता है, receptivity बनती है, समझे? 'गुरु गोर अन्दर समाये।' शिष्य ऐसा हो जो गुरु के अन्तर में समा जाये, गुरु उसमें बोले। गुरुमुख बने, mouthpiece of Guru बने, गुरु God man है, God plus man. यह Guru-man (गुरुमुख) बन जाये। जो Guru-man बन गये तो परमात्मा उन के अन्तर आ गया कि नहीं? यह भक्ति का राज़ (भेद) है। सेट पॉल कहता है, It is I, not now I. यह मैं हूँ। कहता है, यह मैं नहीं हूँ, It is not I, but Christ that lives in me, यह Christ (ईसा) मुझ में बोल रहा है। यही हाफिज़ साहब ने कहा—

चुनां पुर शुद फ़िजाये सीना अज़ दोस्त
कि ख्याले खेश गुमशुद अज़ ज़मीरम

कि मेरे सीने (अन्तःकरण) की फ़िजा उस प्रीतम से इतनी भर गई है कि मुझे यह ख्याल नहीं रहा कि यह मैं हूँ या वह है, अपना आपा ही भूल गया। इसका नाम है, गुरु भक्ति।

हरि सच्चा गुरु भगती पाइए सहजे मन्नि वसावणि॥

अगर गुरु मिल जाये, अगर का सवाल इसलिये पेश किया जा रहा है कि गुरु तो बहुत हैं मगर सच्चा गुरु कहीं - कहीं मिलता है। जो सचमुच में यह समर्था रखता है जिस का आप को ज़िक्र किया जा चुका है, वह बाहर से तो,

तन म्याने ख़ल्को जां नज्दे खुदावन्दे जहां

तन तो उसका लोगों के दरमियान होता है और उसकी आत्मा प्रभु के साथ जुड़ी पड़ी है।

तन गिरफ़्तारे ज़मीं औ रुह हफ़्ताद आसमां

तन तो ज़मीन पर चलता - फिरता नज़र आता है, खाता - पीता भी नज़र आता है मगर रुह आसमानों का सफर करती है—

सुरत सैल असमान की लख पावे कोई सन्त।

तुलसी साहब फरमाते हैं, आसमानों का सफर हमारी रुह कर सकती है। किस की? किसी सन्त की।

तुलसी जग जाने नहीं अति उतंग पिया पथ॥

कि ऐ तुलसी! दुनिया के लोग इस राज़ (भेद) से नावाकिफ (अनजान) हैं, कैसे रुह पिण्ड को छोड़ कर ऊपर आसमानों का सफर कर सकती है, कैसे ज़ड़ और चेतन को अलेहदा करके आत्मा ऊपर जा सकती है? कहते हैं, इस राज़ से लोग बेखबर हैं। तो इस राज़ को जानने वाली जो हस्ती है, हमारी तरह ज़ाहिरा इन्सान नज़र आता है मगर अन्तर में वह कुछ और भी है।

वली अल्लाह रा बर क़यासे खुद मगीर
कि वली - अल्लाह (प्रभु-प्राप्त महात्मा) को अपने क्यास पर, ज़ाहिरी शक्ल पर मत लो।

कि दर नविश्तन यकसां आयद शेर - ओ - शीर

शेर और शीर दोनों ही लफ़ज़ (उर्दू में) एक ही तरह से लिखे जाते हैं। एक (शेर) फाड़ कर खा जाने वाला जानवर है, एक (शीर) आधार देने वाला दूध है। इन्सान - इन्सान सब एक हैं। हमारे अन्तर और उनके

अन्तर में एक ही जैसे हक परमात्मा ने रखे हैं मगर उन्होंने उस दबी हुई चीज़ को मन - इन्द्रियों के घाट से ऊपर आकर निकाल लिया है और हमने अभी नहीं निकाला है।

सबो घट मेरे साईयां सुनी सेज न कोय॥

बलिहारी तिस घट के जा घट परगट होय॥

कि सब के अन्तर में वह परमात्मा बस रहा है। कहते हैं, वह हृदय मुबारिक है, बलिहार जाने के काबिल है जिसमें वह प्रकट हो गया। तो ऐसे प्रकट हुए (प्रभु को पाये हुए) हृदयों की महिमा के मुतल्लिक (संबंधी) इसमें ज़िक्र आयेगा। गौर से सुनिए वे क्या फरमाते हैं?

(1) एक बार गुर लीन्ह बोलाई। मोहि नीति बहु भाति सिखाई॥

कहते हैं, एक मरतबा (बार) गुरु ने मुझे बुला कर बहुत सी नीति की बातें सिखलाई, कई तरीकों से समझाने लगे। आखिर गुरु का काम है समझाना, शिष्य समझे चाहे न समझे। बार - बार समझाना होता है। बच्चा अगर बहुत बिगड़ भी जाये तो भी पिता उसको प्यार से समझाता है। वह समझता है, मेरी शरण में आया है, मैंने ही इसको बनाना है। किसी तरीके से भी, कई तरीकों से उसको खैंचता है। तो कहते हैं काकभुशुंडि, मुझे कई तरीकों से समझाया, देख बच्चा, जीवन का आदर्श यह है। हम ने दुनिया में इस तरह से रहना है। ऐसा जीवन बसर करो कि यहाँ भी सुख मिले और आगे भी सुख मिले, दोनों लोकों में तुम्हारी महिमा रहे।

(2) सिव सेवा कर फल सुत सोई। अबिरल भगति राम पद होई॥

कहते हैं, ऐ बेटे! शिव भगवान की सेवा का फल यही है कि राम जी के चरणों में अटल भक्ति पैदा हो। अब राम का लफ़ज़ कबीर साहब

ने कई तरह से बरता है।

एक राम दशरथ का बेटा, एक राम घट घट में बैठा।

एक राम का सकल पसारा, एक राम इन सब ते न्यारा॥

एक राम वे थे जो राजा दशरथ के बेटे थे, चौदह कला सम्पूर्ण अवतार थे, दुनिया के दुख हरण करने को आये। एक राम जो घट - घट में बैठा है (मन)। एक त्रिलोकीनाथ, तीनों लोकों को जो नथ रही ताकत है। एक राम जो इन सब का जीवनाधार है, वह राम है। तो राम के, किसी के पास भी जाओ, ये खुद ही बयान करते हैं आगे जा कर कि लोगों से मैंने कहा कि राम वह है जो सब में रम रहा है। कहते हैं, यह ठीक है रम तो रहा है, मुझे तो चाहिए वह शक्ल जो प्रकट होकर सामने आए।

माना कि तू दिल के खलवत कदा में है मकीं,

हम मानते हैं कि तू हमारे घट में है प्रभु, रम रहा है मगर —

ज़रा सामने आ के तू बैठ जा कि नज़र को खूए मजाज है।

भक्त चाहता है भगवान को प्रकट देखना। तो कहते हैं वह भगवान जो रम रहा है, वह तो ठीक है। कहीं पर अगर वह प्रकट है तो उसके दर्शन कराओ। यही भगवान कृष्ण जी, जब एक बार गोपियों से दूर चले गये, कुछ मुद्दत (समय) वहाँ रहे। गोपियां बड़ी विरह और सोज़ (संताप) में जल रही थीं, तो ऊधो को भेजा कि जाओ, उनको थोड़ी ज्ञान - ध्यान की बातें सुना आओ। ऊधो गये, बड़ी ज्ञान की बातें कीं। “देखो कृष्ण के लफज़ी मायने हैं, यह लफज़ ‘कृ’ धातु से निकलता है, जो आत्मा के नज़दीक है। कौन? परमात्मा। कि वह तो तुम्हारे अन्तर में है। अरे, तुम क्यों सोज़ - गुदाज़ (विरह) में बिहबल

(व्याकुल) हो। भगवान कहाँ नहीं है? ” खैर, बातें बहुत सुनाई। वे सुनती रहीं। आखिर पूछने लगीं, “ऐ नारायण! जो कुछ तुम कहते हो वे बातें तो ठीक हैं मगर तुम यह बताओ कि जो आँखें उस मुरली मनोहर को किसी जिस्म में इज़हार करते हुए देखना चाहती हैं, उनके लिए तुम्हारे पास क्या इलाज है?” ज्ञान - ध्यान सब ठीक हैं, वह सब के अन्तर है, जब तक वह आँख न बने, वह नज़र न आए। इसलिए भक्त का दिली जज्बा उसको materialise (प्रकट) कर लेता है कह दो। काकभुशुंडि ने आखिर जा कर यह अपना किस्सा बयान किया। तो कहते हैं कि मेरा गुरु मुझे समझाने लगा, तो क्या कहा कि देख भई, शिव भगवान की पूजा का फल यही है कि हमारा दिल उस राम के चरणों में लग जाये।

उस राम, रमी हुई ताकत के इज़हार (अभिव्यक्ति) की दो सूरतें होती हैं। एक, जो दुनिया के अधर्म को दूर करने के लिये, धर्म को स्थापित करने के लिए, अधर्मियों को दण्ड देने के लिए, धर्मियों को उबारने के लिए और दुनिया की स्थिति को कायम रखने के लिए, यह एक पहलू उसके इज़हार का है। इस को Negative Power (काल पावर) कहते हैं। दूसरा पहलू इज़हार का यह है कि वह आत्मा को, जो मन - इन्द्रियों के घाट पर धिरी पड़ी है, इस से आज़ाद करके प्रभु से जोड़ता है। ये उसी राम ताकत की दो इज़हार की सूरतें हैं। तो कहते हैं, किसी भी इज़हार में उस के दर्शन होने चाहिएँ। तो कहते हैं, उसने कहा, भई राम से मिलने के लिए यह सब यत्न है। यह जो पूजा है, पूजा एक ज़रिया है न उस रमे हुए राम के साथ जुड़ने के लिए? दो किस्म की विद्यायें हैं— एक अपराविद्या है, दूसरी पराविद्या। अपराविद्या में ग्रन्थों - पोथियों का पढ़ना - पढ़ाना, रस्म - रिवाज, तीर्थ - यात्रा, हवन - दान, यह वह सब शामिल हैं। यह पहला कदम है। पढ़ने से रुचि

बनेगी, शौक बनेगा। अब हम काकभुशुंडि का वाकेया (वृत्तान्त) पढ़ रहे हैं। दिल में आ रहा है, क्या हुआ भई, कैसे हुआ? तो इससे रुचि बनेगी और पूजा-पाठ वगैरा करने से, हवन-दान, यह वह, रस्म-रिवाज के अदा करने से भाव-भक्ति बनती है। यह ज़रिया (साधन) है, एक preparation of the ground है, higher purpose के लिए (परमार्थ के लिये ज़मीन की तैयारी है)। तो कहते हैं, यह ज़रिया (साधन) है उस राम से मिलने का। समझे? यह शिव पूजा जो है, जो मैं कर रहा हूँ, तुम भी करो, तुम्हें भी आखिर राम मिल जायेगा।

(3) रामहि भजहिं तात सिव धाता। नर पांवर कै केतिक बाता॥

कि ऐ प्यारे! जितने ये शिव और ब्रह्मा वगैरा हैं, जितनी ताकतें हैं, ये भी उसी राम ही की पूजा कर रही हैं, समझे। जिनको हम भगवान कहते हैं, शिव भगवान, ब्रह्मा जी, विष्णु भगवान कहते हैं, वे भी उसी की पूजा कर रहे हैं। ये सब उसकी इज़हार की सूरतें हैं, उसी के आधार पर ये चल रहे हैं। तो कहते हैं, इन्सान बेचारे का क्या है? जब वे ताकतें भी उसकी पूजा करती हैं तो हमें भी उस की पूजा करनी चाहिये। यह जीव बेचारा क्या है? जो स्विच बन गये उसकी पावर के इज़हार के, जब वे उस का आधार ले रहे हैं तो हमें भी उसी से जुँना चाहिए। तो इस लिये यह जो पूजा का ज़रिया है, यह एक means to the end (एक चीज़ को पाने का साधन मात्र) है। ऐ बेटे! ऐ बच्चे! तू उसकी पूजा कर। Ultimate goal (अन्तिम आदर्श) क्या है? प्रभु को पाना, उस रमी हुई ताकत से मिलना। हमारी आत्मा उस में रम जाये। यह कब हो सकता है? यह मनुष्य जीवन में ही हो सकता है।

भई परापति मानुख देहुरीआ॥

गोबिन्द मिलण की एह तेरी बरीआ॥

उस प्रभु के पाने का यह वक्त है, मनुष्य जीवन ही।

अवरि काज तेरै कितै न काम॥

मिल साधु संगत भज केवल नाम॥

भई और जितने तू काम कर रहा है, ये प्रभु के पाने में मददगार नहीं। प्रभु के पाने में मददगार केवल दो चीजें हैं, एक उन की सोहबत जिन्होंने पाया है यानी साधु संग और दूसरे, वह परिपूर्ण परमात्मा, जिस के साथ आत्मा जुड़ कर हमेशा के लिये आना-जाना खत्म हो जाता है। कहते हैं, राम की पूजा कर भई, उसी को पाने के लिये, उस की जितनी भी हैं इज़हार की सूरतें, ब्रह्मा जी हैं, शिव भगवान हैं, विष्णु भगवान हैं, सब उसी की पूजा कर रहे हैं। तो इन्सान की क्या गति है? इन्सान की भी उसकी पूजा करने के बगैर गति नहीं होती।

(4) जासु चरन अज सिव अनुरागी। तासु द्रोहँ सुख चहसि अभागी॥

कहते हैं, जिसके चरणों के प्रेमी यह शिव और ब्रह्मा जी भी हैं, उस राम ही के इज़हार हैं न, उसी से ताकत ले रहे हैं। कहते हैं, उस के साथ दुश्मनी करके सिर्फ बदकिस्मत इन्सान ही सुख चाहता है। उसको न याद करना, उसके साथ न जुँना, फिर दुनिया में कैसे सुखी हो सकते हैं?

नानक दुखीआ सभु संसार॥

ऐ नानक, सारा जहान ही दुखी है, समझे। कौन सुखी है?

सो सुखिया जिस नाम आधार॥

नाम किस को कहते हैं? वह परिपूर्ण परमात्मा जो रम रहा है, सब रवणों-ब्रह्माण्डों को आधार दे रहा है, उस का नाम है 'नाम'। जिसकी

आत्मा राम - नाम से लग गई कहो, उसका कल्याण है, वह सुखी हो गया। इसको छोड़कर यह इन्सान कैसे सुखी हो सकता है? देखिये, आज दुनिया में दुर्ख व्याप्ति क्यों ज़्यादा है? हम ने जिस्मानी तौर पर बड़ी तरकीकी की है। **Socially** (सामाजिक तौर पर), **politically** (राजनैतिक तौर पर) भी, बुद्धि के लिहाज़ से भी बड़ी भारी तरकीकी की है जिसको देख कर अक्ल दंग रहती है। आज रॉकेट चांद से गुज़र कर सूर्य तक चक्कर लगा रहा है। सवा घंटे के अन्दर सारी दुनिया के गिर्द चक्कर लगाये हैं कुत्तों ने भी। फिर टेलीविज़न है। हजारों मीलों पर तुम देख रहे हो, कौन बोलता है, क्या बोल रहा है। रेडियो बन गये, हवाई जहाज़ बन गये। क्या कुछ बन गया? क्या हम सुखी हैं? नहीं। सारा ज़्यादा फिर भी दुखी है। इसका कारण क्या है? कि इस ने अपनी आत्मा को नहीं जाना है। भूल में जा रहा है मन - इन्द्रियों के घाट पर। अन्तर से सो रहा है बाहर फैलाव के कारण और अपने आप के न जानने के सबब से प्रभु का अनुभव नहीं पा रहा। इसलिये सब दुखी हैं। यही तुलसी साहब ने कहा कि सारी दुनिया ही, सारा जहान ही दुखी है, कोई तन करके, कोई धन करके, कोई मन करके।

इक न इक दुर्ख सबन को॥

तो फिर सुखी कौन है? कहते हैं—

सुखी संत का दास॥

जो संत का दास बना। संत किस का नाम है? जिस के अन्तर में मालिक प्रकट हो गया। दूसरों को प्रकट करा सकता है, थोड़े लफजों में। उनके पास क्या है?

तुरत मिलावें राम से उन्हें मिले जो कोय॥

उनके पास यह portfolio (विभाग) है। जो भी आये उस के साथ जोड़ देते हैं इन्द्रियों के घाट से ऊपर लाकर। तो हमारा ultimate goal (अन्तिम आदर्श) क्या है? प्रभु भक्ति। वह परमात्मा जो रम रहा है, उस के पाने के लिये, जिन्होंने पाया है उनकी सोहबत करो। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि देख भई! तू कुछ किया कर? फिर वे लोग बदकिस्मत हैं जो प्रभु को छोड़ कर, उसके साथ न जुड़ने पर भी सुख की आशा कर रहे हैं। वे कैसे सुखी हो सकते हैं?

(5) हर कहुं हरि सेवक गुरु कहेऽ। सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऽ॥

कि गुरु ने शिव जी को विष्णु का सेवक बतलाया। ऐ गरुड़! सुन, मेरा तो यह बात सुन कर दिल जल गया। गुरु ने यह बतलाया, शिव भगवान भी, विष्णु भगवान भी, ये सब ताकतें उसी एक राम के आधार पर चल रही हैं। बात असल तो यही है न। कहते हैं, यह बात उसने बतलाई, मेरी इस से तसल्ली नहीं हुई।

(6) अधम जाति मैं बिद्या पाएँ। भयउँ जथा अहि दूध पिआएँ॥

कहते हैं मैं नीची ज़ात का हूँ। नीच ज़ात के मायने, जो नीचे, इन्द्रियों के रसों - भोगों में फँसे हैं, वे सब नीच ज़ात के हैं। कहते हैं, मैं विद्या पा गया, बड़ा विद्वान बन गया विद्या पा कर। मेरी क्या गति हो गई कि जैसे साँप को दूध पिलाया जाये, और ज़हर बढ़ती है। आलिम (विद्वान) होना यह कोई ज़रूरी निशानी नहीं कि वह अनुभवी पुरुष है। इल्मियत कुछ और चीज़ है, अनुभव कुछ और चीज़ है। इल्म क्या चीज़ है? हमारी सुरत जब दिमाग के centre (केन्द्र) से जुड़ती है, brain (दिमाग) के, उस का नतीजा इल्म (विद्या) है। जब हमारी सुरत या आत्मा परिपूर्ण परमात्मा से जुड़ती है, उसका नाम अनुभव है, परमात्मा का पाना। बड़ा भारी फ़र्क है। आमिल (अनुभवी) के गले में

इल्म (विद्या) फूलों का हार है। अगर वह आमिल पुरुष है, अनुभवी पुरुष है तो एक चीज़ को कई तरीकों से आप के सामने पेश करेगा। अगर वह अनुभवी नहीं है, उसकी आत्मा प्रभु से जुड़कर उसका mouthpiece (मुख) नहीं बनी है तो ऐसे पुरुष के सिर पर इल्म कैसा है, यह मिसाल देते हैं, जैसे साँप को दूध पिलाया जाये तो और ज़हर बढ़ती है। कहते हैं मेरी गति यह हो रही थी। अपना हाल बयान कर रहे हैं, इकरार कर रहे हैं। जब गुरु मिलता है न, पहले तो आदमी अकड़ - अकड़ कर चलता है, ओ हम बहुत जानते हैं ग्रन्थों - पोथियों से, तुम कौन हो? पीछे जब अनुभव नहीं मिलता तो आखिर आकर चरणों में सिर नीचा करना पड़ता है। तो कहते हैं काकभुशुंडि कि मैं भूल में था, मैं नीच कर्मों वाला था, बन गया आलिम - फाजिल (विद्वान्)। यह ऐसा हो गया कि यह इल्म ही मुझे और ज़हर बढ़ाने का कारण बन गया।

(7) मानी कुटिल कुभाग्य कुजाती। गुर कर द्रोह करउं दिनु राती॥

कहते हैं मैं मगरुर था, मक्कार था, बदनसीब था और नीची कौम वालों में से था। गुरु के साथ दिन रात द्रोह करने लग गया। मैं आलिम (विद्वान्) हूँ, गुरु क्या जानता है? ऐसा आजकल भी होता है। गुरु से मिल गये आलिम - फाजिल (विद्वान्); ओहो! यह तो मैं भी जानता हूँ, फलानी जगह यह लिखा है, फलानी जगह यह लिखा है। अरे भई, जो चीज़ उस को मिली है, वह आपको नहीं मिली तो क्या मिला? वह तुम्हारी आत्मा को इन्द्रियों के घाट से ऊपर लाकर अन्तर की आँख खोल सकता है। तुम केवल इल्म (विद्या) ही दे सकते हो। Bookish knowledge is all wilderness, किताबों का ज्ञान - ध्यान एक जंगल है जिसमें इन्सान भटकता फिरता है, हकीकत मिलती नहीं।

मैं पश्चिम में अमेरिका गया। वहाँ लोगों ने कहा, “भई, आपने जो बयान किया परमार्थ, वह तो बड़ा simple (सादा - सरल) रास्ता है, आत्मा को आज़ाद किया, बिठाया और अन्तर में जुड़ गये, यह मुश्किल क्यों बन गया?” मैंने कहा, “जो विद्वान् थे, पढ़े - लिखे लोग, चीज़ का कुछ पता नहीं, देखा नहीं न। यह यह है, यह वह है, उनकी तफतीरें (व्याख्याएँ) उलटी मुश्किल बन गई लोगों के लिये।” अनुभवी बातें नहीं करता, बिठा कर ऊपर way up कर (उभार) देता है (रास्ता खोल देता है), तुम देखने वाले बन जाते हो। लेने वाला खुद कहता है, हाँ भई, है। आलिम सौ बात करे। आलिम (विद्वान्) क्या करते हैं? मैंने एक किताब पढ़ी। उसका नाम ‘गुरमत निर्णय’ है। बड़े आलिम - फाजिल ने लिखी है। वे क्या लिखते हैं कि जहाँ भी अन्तर में ज्योति का ज़िक्र आता है या किसी ध्वनि का ज़िक्र आता है, ज्योति - वोति अंतर कोई नहीं है, सिर्फ खुशी के इज़हार के लिये ही हम कहते हैं, भई बाजे बज पड़े, चिराग जल पड़े। अन्तर में कुछ नहीं है। अरे भई, जो आमिल (अनुभवी) है, वह हँसेगा कि नहीं? वह आमिल जब बिठाता है, बच्चा बैठता है वह भी देखता है कि परमात्मा ज्योति - स्वरूप है कि नहीं? God is light, खुदा नूर है। वह उसको दिखा सकता है। यहीं बड़ाई है उसमें। तो कहते हैं, मैं अपने इल्म के घमण्ड में, जैसे साँप को दूध पिलाया जाता है तो और उसकी ज़हर बढ़ती है, मैं उलटा गुरु के साथ मुख्यालिफत (विरोध) करने लग गया।

(8) अति दयाल गुर स्वल्प न क्रोधा। पुनि पुनि मोहि सिरवाव सुबोधा॥

मगर गुरु बड़े रहम - दिल थे, अति दयालु थे। थोड़ा भी इस बात पर गुस्सा नहीं किया। कोई बात नहीं, आज समझेगा, कल समझेगा, कल नहीं, परसों समझेगा। फिर समझाते रहे प्यार से, बार - बार मुझे

समझाते, देख बच्चा, बात यह है, बड़े ठण्डे दिल से। असल बात यह है एक बच्चा है, तुम हो बी. ए. पास। अब बच्चे से यह उम्मीद करो कि बी. ए. पास की बातें करे, कैसे हो सकता है? तो उस्ताद (अध्यापक) को गुस्सा नहीं करना चाहिये, उस्ताद को समझाना चाहिए। बच्चे का क्या कसूर है?

मैं आप को आज अर्ज करूँ, 1903 ई. की बात है। मैं तीसरी जमात मैं पढ़ा करता था। वहाँ एक आदमी आया, लेक्चर देने लग गया। मैं उसके मुँह की तरफ देखता था कि वह कहाँ से बोलता है क्योंकि तीसरी जमात में मेरी समझ यही थी कि किताबों ही से पढ़ा जा सकता है, समझे? मैं बड़ी हैरानी से (सोचता रहा), अब भी बड़ी अच्छी तरह याद है मुझे, और भई, यह कहाँ से बोलता है? अब मैं समझता हूँ कि यह बड़ी मामूली बात है। भई एक बच्चा जो इन्द्रियों के घाट पर बैठा है, उससे कहो अन्तर में रोशनी है, तो वह कहता है, रोशनी कहाँ है? कैसे हो सकता है? मर तो नहीं जायेंगे? हज़रत मुहम्मद साहब को सवाल किया गया कि महाराज! आप तो कहते हैं कि जीते जी मरना चाहिए, कहीं मर तो नहीं जायेंगे, कब्रिस्तान में तो नहीं पहुँच जायेंगे? कई भाई इससे भी डरते हैं, पिण्ड से जब रुह ऊपर जाती है, हाय मौत। वे अभ्यास ही छोड़ देते हैं। तो हज़रत मुहम्मद साहब ने कहा—

ई न मरगे आं कि दर गेरे रवी।

यह मौत वह नहीं कि तुम को कब्रिस्तान में पहुँचा दे बल्कि जो जुलमत से, अँधेरे से नूर (प्रकाश) की तरफ ले जाने वाली है, नूर प्रकट होता है। जब तक रुह हिसों (इन्द्रियों) से ऊपर न आये, उस को कैसे पा सकता है? वह अदृष्ट और अगोचर है, जब तक,

एवड ऊचा होवै कोइ॥ तिस ऊचे को जाणे सोइ॥

जब तक उसी लैवल पर तुम नहीं आते, उसको कैसे पा सकते हो? समझे। तो यह self-analysis (आत्मा को चीन्हने, शरीर से अलग करने) का मज़मून है। आलिम लोग इसको समझ नहीं सकते। वे कहते हैं, हाय मर जायेंगे।

तो कहने लगे (काकभुशुडि), इससे मैं गुरु की मुखालिफत (विरोध) करने लगा। मगर वे (गुरु) द्याल पुरुष थे। मैंने तो बहुत गुस्सा किया अपनी तरफ से, यह वह किया मगर वे गुस्से में नहीं आये। फिर प्यार से समझाया कि देख बच्चा असल बात यह है। याद रखो जब भी किसी महात्मा के पास जाओ तो एक चीज़ याद रखो, जो कुछ तुम जानते हो वह तो जानते ही हो, वह तो तुम्हारा कमो बेश (घटे/बढ़ेगा) नहीं होगा, जाओ, सुनो, वह क्या कहता है? उसको समझने का यत्न करो। हम लोग क्या करते हैं? अव्वल तो जाते ही नहीं। पहली चीज़ नम्रता है याद रखो। जब तक नम्रता न धारण करे इन्सान, वह किसी के पास नहीं जाता। मैं आलिम, मैं फाज़िल, मैं हाकिम, मैं अमीर, मैं बादशाह, मैं क्यों जाऊँ? इसी ज़ोम (अकड़) में रह जाता है। अनुभवी पुरुष आते हैं, average (साधारण) तबके (क्लास) के लोग फायदा उठा जाते हैं, आलिम (विद्वान) खाली रह जाते हैं। अगर चले भी गये तो वे अपने ज़ोम (घमण्ड) में बैठे रहते हैं, यह फलानी जगह लिखा है, हम भी जानते हैं, यह क्या जानता है, मैं ज्यादा बतला सकता हूँ। जो प्याला सुराही के नीचे रहेगा, वही भरा जायेगा, जो सुराही के ऊपर रहेगा प्याला, वह कैसे भरेगा? आकर भी खाली चला जाता है। तो अनुभवी पुरुष के पास जाकर अपने इल्म का ज़ोम (घमण्ड) नहीं करना चाहिए। हाँ, समझने का यत्न करना चाहिए। जो नेक नीयती (साफ - दिली) से सवाल हो, बेशक करो। भगवान कृष्ण ने गीता के चौथे अध्याय में इस बात का बड़ा निर्णय किया है,

“अगर तुम को ज्ञान पाने की ख्वाहिश है, जाओ ऐसे महात्मा के पास जो अन्तर में परमात्मा के दर्शन करते हैं।” फिर आगे कहते हैं, “नेक नीयती से सवाल करके हर एक सवाल का जवाब लो। वितण्डावाद (निरर्थक दलीलबाजी) की खातिर नहीं, **discussions** की खातिर नहीं। जब बात समझ में आ जाये, भरोसा बनेगा। भरोसा बने तो फिर जो वह कहे, वह तुम करो। तुम भी उस गति को पा जाओगे।” तो कहते हैं, मैं आलिम (विद्वान) बन गया, मैं इन्द्रियों के भोगों-रसों में था, मैं अहंकारी था, मक्कार था, सारे ऐब (नुक्स) मुझ में थे। मैंने कहा, ओह! मैं जानता हूँ, गुरु क्या है?

(9) जेहि ते नीच बड़ाई पावा। सो प्रथमहिं हति ताहि नसावा॥

उसकी जात से मिलने से low से low पुरुष, कमीने से कमीना पुरुष (अधम से अधम) भी उस higher (ऊँची) गति को पा जाता है। वह पहले इसी गति को समझाना चाहता है। अरे भई, बात क्या है? बात समझ में न आये उस का भी क्या कसूर है? उसका दिल - दिमाग रंगा पड़ा है बाहरी इल्मों से। जब तक ये नफी न करे, हाँ उस से मिसालें तो ले समझने के लिए मगर जब तक यह **experience** (अनुभव) न मिले तब तक काम नहीं बनता। जब सही चीज़ मिल जाती है, सब ग्रन्थ - पेथियाँ खुल जाती हैं, सारे महात्मा यही कह रहे हैं। जब तक वह **first hand experience** (अनुभव) नहीं मिलता, यह धूल में रहता है।

(10) धूम अनल सम्भव सुनु भाई। तेहि बुझाव घन पदवी पाई॥

अब कहते हैं, ऐ भाई सुनो! गुरु ने कहा, धुआँ आग ही से पैदा होता है, वह बादल बन कर उसी (आग) को बुझाने का कारण बन जाता है। कि जो पुरुष गुरु से मुखालिफत (विरोध) करते हैं, अनुभवी

पुरुषों से, उनको वही बादल बन कर फिर समझाते हैं। उन के दिल में दयामेहर आती है कि बच्चा समझा नहीं, फिर समझाओ इसको, फिर समझाओ, फिर समझाओ। आखिर कोई समय आता है, चीज़ समझ में आने लग जाती है कि बात क्या है।

(11) रज मग परी निरादर रहई। सब कर पद प्रहार नित सहई॥

मिसाल देते हैं कि ऐसे पुरुषों की क्या गति है? जैसे धूल होती है न धूल, रास्ते में ज़लील हो कर पड़ी रहती है, सबके पाँव की लताड़ सहती है। पांव के नीचे दबी जाती है न। है मिट्टी बिल्कुल, मगर क्या हश्म (परिणाम) होता है, उसका?

(12) मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भरई। पुनि नृप नयन किरीटन्हि परई॥

जब हवा उसे उड़ाती है तो क्या होता है? पहले हवा में भर जाती है, फिर बादशाहों के ताजों और सिरों पर पहुँचती है, समझे। आखिर खाक नम्रता धारण कर ले तो बादशाहों के ताजों और सिरों पर निवास करती है। नम्रता बड़ी भारी चीज़ है भई। सेंट आगस्टन से पूछा कि परमात्मा कैसे मिलता है? कहते हैं, नम्रता धारण करो। **First humility, second humility and third humility.** नम्रता हो तभी किसी के पास जाये, नम्रता हो तभी किसी की बात सुने। जब चीज़ मिल जाये, फिर भी समझे यह किसी की दात है। खजांची के पास एक लाख रुपया आ गया। उस का क्या है? अमानत है। तो सन्तों का शृंगार नम्रता है सच्चे मायनों में। तो कहते हैं, वे लोगों के सिरों के ताज बनते हैं नम्रता धारण करके। क्या किसी बादशाह के ताज पर तुम बैठ सकते हो जाकर? धूल बैठ सकती है। मिसाल देकर समझाने का यत्न किया है कि अगर तुम इतने नम्र बन जाओ जितनी कि धूल है तो इस गति को पा जाओगे। महापुरुषों ने और कई तरीकों से कहा है। कबीर साहब

से पूछा कि राम - भक्त को , प्रभु भक्त को कैसा होना चाहिए। कई मिसालें दीं, पहले कहा—

रोड़ा होए रहु बाट का, तज मन का अभिमान।

कि रास्ते के रोड़े बन जाओ, अभिमान को छोड़ दो। कहते हैं—

रोड़ा हुआ तो क्या हुआ, पन्थी को दुख देइ ।

रोड़ा भी दुख का कारण बनता है। यह भी मिसाल अच्छी नहीं भई। फिर कहते हैं, 'ज्यों धरनी में खेह।' यही धूल की मिसाल उन्होंने भी दी है। कहते हैं, खेह हुआ तो भी क्या हुआ। भई, वह 'उड़ उड़ लागे अंग।' वह भी कपड़ों के साथ जा कर लगती है। कहते हैं फिर क्या हो? कहते हैं, 'पानी जैसा हो।' कहते हैं पानी भी कभी गर्म, कभी सर्द, यह भी आदर्श ठीक नहीं है। फिर हरि- जन को कैसा होना चाहिये? 'हरि ही जैसा हो।' चाहिए कि भगवान भक्त के अन्दर ही प्रकट हो जाये, उसके गुण इस के अन्दर आ जायें तो लोगों के सिरों का ताज हो जाये, उसके गुण इस के अन्दर आ जायें। यह है आदर्श। कैसे? नम्रता के कारण। अगर नम्रता बन जाये तो लोगों के सिरों का ताज हो जाये। आज गुरु नानक साहब को सब नानक नानक हो रही है। क्यों? नम्रता भाव से। कहाँ नहीं गये? सब तीर्थों पर गये, मक्के - मदीने भी गये, फारस में भी गये, बंगाल भी गये, बर्मा तक, संगलाद्वीप (लंका) तक, चीन तक गए। पहाड़ों पर योगियों से मिले। नम्रता थी तो मिले न। यह अलेहदा बात थी कि वह चीज़ जिसको हम भूल रहे थे, उसको ताज़ा किया। तो नम्रता बड़ी भारी चीज़ है भई, नम्रता को धारण करो।

(13) सुनु खगपति अस समुन्नि प्रसंगा। बुध नहिं करहिं अधम कर संगा॥

कहते हैं, ऐ गरुड़! सुनो, इस बात को समझ कर अकलमन्द लोग कमीनों की सोहबत से परहेज़ करते हैं। पानी सब पानी है मगर गन्दे नाले के पानी को कोई नहीं पीता। परमात्मा सब में है मगर जिनमें ये बुराइयाँ इन्द्रियों के भोगों - रसों की, मान - बड़ाई, ईर्ष्या - द्वेष, यह वह बन रही हैं, और भई, वहाँ उनकी सोहबत में वैसा ही रंग मिलेगा न। जैसी सोहबत वैसा रंग। तो अनुभवी पुरुष कहते हैं कि भई, ऐसों से परहेज़ करो, संगत का असर सबसे बड़ा होता है, जैसी सोहबत, वैसा रंग।

सोहबते सालह तुरे सालह कुनदा।

सोहबते तालह तुरे तालह कुनदा॥

सोहबत का असर बड़ा भारी होता है। तो सोहबत के असर के लिए 'महाभारत' में ज़िक्र आया है, जिस तरह फूलों की खुशबू सब साथ की चीज़ों को, चाहे वह मिट्टी हो, पानी हो या कपड़े हों, सबको खुशबूदार कर देती है, इसी तरह नेक की सोहबत उस की सोहबत करने वाले को अपना असर देती है। मूढ़ों की सोहबत अविद्या का रंग देती है। सन्तों और महापुरुषों की सोहबत सत्य और धर्म का असर देती है। इसलिए चाहिए कि सन्त - महात्मा की संगत करे ताकि उनके शान्तिदायक असर को ग्रहण कर सके। यह 'महाभारत' कह रही है। तो सोहबत संगत का रंग बनता है। तुलसीदास बड़ी खूबसूरती से हर एक पहलू को थोड़ा touch (टच) करते जाते हैं। एक वाकेआ बयान करते हुए उसके कई पहलुओं का साथ ही साथ ज़िक्र करते जाते हैं। रामायण में एक बड़ी भारी खूबसूरती यही है कि कई पहलुओं से बयान करते चले जाते हैं साथ ही साथ कि जो परमार्थ, परम - अर्थ को पाना चाहता है, उसको क्या - क्या करना चाहिए और क्या - क्या नहीं करना चाहिए।

तो कहते हैं, सोहबत और संगत का बड़ा भारी असर होता है। जब तक यह नेकों की सोहबत धारण न करे, बदों (बुरों) से हटे नहीं, काम नहीं बनता, क्योंकि—

साकत का बोलिया ज्यों बिछुआ डसै॥

साकत, जो प्रभु से टूटा पड़ा है, उसके मिलने से जैसे बिछू डंक मारता है, मामूली काँटा सा चुभता है, पीछे कड़वल पड़ते हैं, ऐसे ही जो बुरी सोहबत, जो फैलाव में जा रहे हैं, अपने आप का अनुभव नहीं कर रहे, ऐसे पुरुषों की सोहबत बे - अखिल्यार तुम्हें उसी रंग में रंग देगी। तो कहते हैं, इसलिए अकलमन्द लोग, जो परमार्थ को पाना चाहते हैं, जन्म को बरबाद नहीं करना चाहते, वे टूटे हुओं की सोहबत से परहेज़ करते हैं।

(14) कबि कोविद गावहिं असि नीती। खल सन कलह न भल नहिं प्रीती॥

जो पण्डित लोग हैं, जो उस प्रभु के गुणानुवाद गाने वाले लोग हैं कहो, उसके राग के गाने वाले हैं, कहते हैं, वे ऐसी ही नीति गाते हैं। यही नीति बतलाते हैं कि बदों की सोहबत से हटो, नेकों की सोहबत अखिल्यार करो। **A man is known by the society he keeps.** किसी इन्सान को जानना हो तो उसकी सोसायटी से जानो कि उस की सोसायटी (संगत) कैसी है। कायदे की बात है, नेक जो होगा वह नेकों की सोहबत अखिल्यार करेगा। जो परमार्थी है, परमार्थी पुरुषों की सोहबत अखिल्यार करेगा। अरे भई, जो मन - इन्द्रियों के घाट पर इन्द्रियों के भोगों - रसों में लम्पट हैं, ऐसे पुरुषों की सोहबत अखिल्यार करेंगे जो उस में रंगे जा रहे हैं। तो कहते हैं, ऐसे आदमियों से दुश्मनी करना, नफरत रखना, उनको अच्छा नहीं लगता। तो ऐसे पुरुषों से हमेशा ही प्यार और सलीके से काम करो। वह नीति यही बतलाते हैं कि

नेकों की सोहबत करो, उनसे प्यार करो, उनसे दुश्मनी न करो।

(15) उदासीन नित राहिअ गुसाई। खल परिहरिअ स्वान की नाई॥

तो इसलिए कहते हैं, भई उन से अलग - थलग, उदासीन होकर रहो उन की सोहबत से। स्वामी जी महाराज ने कहा न—

हट रहो खास और आम से।

ऐसे पुरुषों से दूर रहो। किस तरह ? मिसाल देते हैं कि जैसे बदज़ात आदमी को, ज़ात उनकी अच्छी नहीं, वह ज़हरीयत में रंगी पड़ी है इन्द्रियों के भोगों - रसों में, कहते हैं, उनको इसी तरह छोड़ देना चाहिये कि जैसे कुत्तों की सोहबत तुम अखिल्यार नहीं करते। कुत्ते बड़े ज़लील (गदे) गिने जाते हैं न। कहते हैं, जैसे कुत्तों की सोहबत तुम नहीं पसन्द करते, इसी तरह वे उनको पसन्द नहीं करते, छोड़ देते हैं। मिसाल देते हैं, कुत्तों में भी गुण हैं मगर एक पहलू रहा कि इन्सान कहाँ और कुत्ता कहाँ ? ज़लील समझते हैं, इसलिये ऐसे पुरुषों से ऐसे ही परहेज़ करो जैसा तुम कुत्तों से करते हो।

(16) मैं खल हृदयं कपट कुटिलाई। गुर हित कहइ न मोहि सोहाई॥

कहते हैं मेरे अन्दर गलाज़त (मैल) भरी पड़ी थी, मैं दुष्ट था, मक्कार था, बड़े low (नीच) ख्याल वाला बंदा था। उनकी (गुरु की) यह समझाने वाली बात मुझे दिल से अच्छी न लगी। यह कायदे की बात है, जो रंगा पड़ा हो न एक खास रंग में, उसको कोई और बात कहे, वह कहता है अरे भई, क्या कहते हो, जाओ, हमें पसन्द नहीं हैं। कहते हैं, मेरी यही गति थी। गुरु बार - बार प्यार से समझाते थे, मैं समझता नहीं था।

(17) दोहा - एक बार हर मन्दिर जपत रहेउं सिव नाम।

गुर आयउ अभिमान तें उठि नहिं कीन्ह प्रनाम॥

कहते हैं, एक मरतबा (बार) मैं शिवालय में बैठा था, शिवजी का नाम जप रहा था। गुरु आये, मैं अहंकार में, ओह! क्या है, बैठा रहा, उठा नहीं। तो कहते हैं, उसका क्या हुआ आखिर? कहते हैं, मुझ में अंहकार आ गया, हुआ क्या, यह क्या जानता है? मैं अच्छी पूजा कर सकता हूँ।

(18) दोहा - सो दयाल नहिं कहेउ कछु उर न रोष लव लेस।
अति अघ गुरु अपमानता सहि नहिं सके महेस॥

कहते हैं, वे तो दयालु पुरुष थे, उन्होंने तो कुछ नहीं कहा, ज़रा भी गुस्सा उनके दिल में नहीं आया, लेकिन गुरु की बेइज़ज़ती (अपमान) देख कर शिव भगवान सहार न सके कि इसने बहुत उपद्रव किया है।

(19) मन्दिर माङ्ग भई नभ बानी। रे हतभाग्य अग्य अभिमानी॥

कि मन्दिर में बैठे हुए नभ से वाणी आई, क्या कहा, कि ऐ बदनसीब, अर्धर्मी और अभिमानी पुरुष! ये आवाज़ आई, तू बदनसीब है, तू अभिमानी पुरुष है, तू अर्धर्मी है, तुम को नीति का पता नहीं।

(20) जद्यपि तव गुर के नहीं क्रोधा। अति कृपाल चित सम्यक बोधा॥

कि इसमें शक नहीं कि देख ऐ बदनसीब इन्सान! गो (यद्यपि) तेरे गुर ने इस बात पर गुस्सा नहीं किया, वे समदर्शी हैं। समझे? वह कहता है यह बेचारा अनजान बच्चा है, उस को गुस्सा नहीं आया क्योंकि वह बड़ा दयालु है, समदर्शी है और मुकम्मल, पूर्ण ज्ञान रखता है, इसलिये उसने तो गुस्सा नहीं किया। उसका कारण यह है कि वह सबके अन्तर, पापियों और पुण्यवानों, दोनों के अन्तर वही (प्रभु को ही) देखता है। वह देखता है यह पापी जो है, आत्मा में तो कोई फर्क नहीं। आत्मा जैसी मन - इन्द्रियों के घाट से रंगी गई, वह देखता है, यह रंगा पड़ा है,

भई। है आत्मा, अजर और अमर है। इसलिये कहते हैं, इस को साफ करना है। उस को रहम आता है। इससे आज हम लोगों को सबक सीखना चाहिए, समझे।

(21) तदपि साप सठ दैहउ तोही। नीति विरोध सुहाइ न मोही॥

कहते हैं, गो (यद्यपि) उन्होंने इस बात को बुरा नहीं माना मगर मैं तुम को शाप दिये बगैर नहीं रहूँगा। क्यों? इसलिये कि नीति के बरखिलाफ (विरुद्ध) कोई हरकत मुझे पसन्द नहीं, यह नीति है।

राम कृष्ण ते को बड़ो, तिन भी तो गुरु कीन्ह।
तीन लोक के नायका, गुरु आगे आधीन॥

भगवान राम और कृष्ण से कौन बड़ा होगा? त्रिलोकीनाथ होते हुए भी गुरु के आगे नमस्कार है, नीति है न। कबीर साहब रामानन्द को गुरु धारण करते हैं नीति के धारण करने के लिए। तो कहते हैं, इस नीति के उलट मैं कोई बात सुनने तो तैयार नहीं। मैं ज़रूर तुम को शाप दूँगा ताकि तुझे यह सबक रहे। और वैसे भी आप देखें, सब महापुरुष यही कहते हैं —

भाई रे गुर बिनु ज्ञानु न होइ।
पूछहु ब्रह्मे नारदे बेद बिआसै कोइ॥

ब्यास से जा कर पूछो, नारद से पूछो, गुरु के बगैर किसी का कल्याण नहीं, गुरु के बगैर गति नहीं।

गुरु बिना गत नहीं। शाह बिना पत नहीं॥

गुरु गुरु हो तो। आज, इस में शक नहीं कि गुरु और साधु के नाम से हम मुत्तनफर (नफरत करते) हैं। उसका कारण क्या है? कि वे गुरु नहीं हैं, acting, posing करते हैं, स्वांग बना रहे हैं, समझे। इस

हकीकत को न खुद पाया है, न दूसरों को दे सकते हैं। उनको क्या करते हैं? बाहरमुखी साधन, अपराविद्या में लगा देते हैं। लगे रहो, भई कोई माँगे, “महाराज, बरिष्याश करो।” “ओ भई, हमने पचास साल में ली, तुम्हें अभी दे दें?” दे सकते नहीं, मन-इन्द्रियों के घाट पर बैठे हुए होने के कारण। वे (शिष्य) जब देखते हैं कि यह हमारी तरह मन-इन्द्रियों के घाट पर बैठा है, तो कहते हैं, **It is all Gurudom.** हमें ऐसे साधु-सन्तों की ज़रूरत नहीं। **Blind leads the blind both fall into the ditch,** अन्धा अन्धे को चला रहा है, दोनों ही गड्ढे में गिरेंगे, और क्या होगा? तो कहते हैं, मैं इस मर्यादा को तोड़ता नहीं, तुम्हें सज़ा दूँगा, शाप दूँगा। आगे और कुछ कहते हैं। समझिए गौर से—

(22) जौं नहिं दण्ड करौं खल तोरा। भ्रष्ट होइ श्रुति मारग मोरा॥

कहते हैं, अगर मैं तुम को ऐ बदज़ात! सज़ा नहीं देता, शाप नहीं देता तो जो श्रुति मार्ग है, वह भ्रष्ट हो जायेगा। श्रुति मार्ग किस को कहते हैं? श्रुति कहते हैं, ‘सुना गया’। समृति मार्ग नहीं, श्रुति मार्ग। वह श्रुति, उद्गीत जो प्रणव की ध्वनि हो रही है, वह मार्ग भ्रष्ट होता है क्योंकि श्रुति सुनी नहीं जा सकती जब तक इन्द्रियों के घाट पर बैठे हो। ऐसे अनुभवी पुरुष की अगर तुम ने निरादरी की है जो श्रुति के जानने वाला है, अरे भई, मैं यह बरदाश्त नहीं कर सकता नहीं तो लोग सारे ही भ्रष्ट हो जायेंगे।

(23) जे सठ गुर सन इरिणा करहीं। रौरव नरक कोटि जुग परहीं॥

कहते हैं, जो मूर्ख लोग गुरु से हसद (ईर्ष्या) करते हैं, वे सौ जन्म तक रौरव नर्क, जो सब से गया गुज़रा है, उसमें वास करते हैं। व्यान किया जाता है कि उसका सिरा छोटा है, बीच में गंदगी भरी है, उसके

बीच में डाल दिये जाते हैं। इशारे दिये हैं पुराणों में। तो कहते हैं, मूर्ख आदमी अगर कुछ कर नहीं सकता तो ईर्ष्या-द्वेष का तो कोई मतलब नहीं न? देखो, वह (गुरु) तो कुछ नहीं कहता, मगर वह जो नीति के जानने वाला है वह सज़ा देता है। तो काकभुशुंडि को शाप मिला। किसने दिया? गुरु ने नहीं दिया। गुरु तो दयाल पुरुष है, भई। दो किस्म की पावरें मैंने अर्ज़ कीं। एक वह पावर (काल की), जो अधर्मियों को दंड देती है, धर्मियों को उबारती है, जगत को स्थिति में कायम रखती है, वह एक पावर है, वह सज़ा देती है। जो दूसरी किस्म का इज़हार रखते हैं, वे संतजन होते हैं, वे तो प्रभु से जोड़ते हैं। पापी आये, पुन्नी (पुण्यवान) आये, कोई भी आये, चल भाई! प्रभु से जोड़ देते हैं, वे दूसरों को शाप नहीं देते। याद रखो, महात्मा कभी किसी को शाप नहीं देते, समझो। वे हमेशा दया करते हैं। जितना पापी हो कर जाओ, उतनी और दया करते हैं। हमारे हज़र (बाबा सावन सिंह जी महाराज) थे। कई बार बड़ी निन्दा करके आना, जब होश आनी कि महाराज दया करो, हमने आप की बड़ी निन्दा की है। कहते, मेरे तक नहीं पहुँची, नाम दे देते थे। यह सन्तों का और जो नीति में रखने वाली ताकत है, उनका आपस में संबंध है। वह (काल की ताकत) सज़ा देती है। वे (सन्त) तो हमेशा ही दया करते हैं।

(24) त्रिजग जोनि पुनि धरहिं सरीरा। अयुत जन्म भरि पावहिं पीरा॥

कहते हैं, ऐसे पुरुष परिन्दों (पक्षियों) वगैरा की योनियों में जाते हैं और दस हज़ार जन्म तक दुख भोगते हैं। यह किस का बयान है? तुलसीदास जी बयान कर रहे हैं, समझो। अनुभवी पुरुष थे। यही और महात्माओं ने बयान किया। यहाँ तक भी कहा—

गुर निन्दक नारायण होई। ताका मुख न देखो कोई॥

नारायण भी अगर गुरु की निन्दा करे तो उसका मुँह न देखो। तो आप देवेंगे, दो पहलू बयान कर रहे हैं बड़ी सूक्ष्म वृत्ति से। एक स्थिति में कायम करने वाली ताकत **Negative Power**, एक **Positive Power** है, काल और दयाल। **Positive Power** (दयाल) तो शाप नहीं देती। वह मुआफी ही जानती है। हाफिज़ साहब ने कहा—

आखिर ई अमर शबद मालूम

कि सलतनते दरवेश बवद बेहिसाबी

कहते हैं, आखिर में जाकर हमें यह मालूम हुआ—

कि सलतनते दरवेश बवद बेहिसाबी

कि दरवेशों की सलतनत बरिव्वश की है, हिसाब लेना नहीं। जो हिसाब लेने वाली ताकत है, वह उसको संयम में रखने के लिये शाप देती है।

(25) बैठि रहेसि अजगर इव पापी। सर्प होहि खल मल मति व्यापी॥

कहते हैं, ऐ पापी पुरुष! जा, तू साँप हो जा। तेरी अक्ल में पाप समा गया है, (तुने) गुरु की निरादरी की है, यह शाप दे दिया।

(26) महा बिटप कोटर महुं जाई। रहु अधमाधम अधगति पाई॥

कहते हैं, जा, किसी दररक्त की खोखली जगह जो है, वहाँ बैठा रह और इसी अधोगति में पड़ा रह। बस, यह मैं तुझे शाप देता हूँ। फिर इस पर—

(27)दोहा- हाहाकार कीन्ह गुर दारून सुनि सिव साप।
कम्पित मोहि बिलोकि अति उर उपजा परिताप॥

कहते हैं, इस बद-दुआ (शाप) को सुन कर गुरु काँप उठा।

आखिर गुरु के दिल में शिष्य का प्यार है, मेरा बच्चा है, कहीं चला न जाये। तो कहने लगे, गुरु ने हाय हाय की। कहते हैं, मुझे काँपता हुआ देख कर बड़ा उसे (गुरु को) रंज (दुख) हुआ। तो क्या कहने लगे, आगे फिर सिलसिला आता है, उसने दुआ की कि तुम इस को शाप न दो, तुम बड़े ऐसे हो, बड़ी महिमा की। फिर आखिर उन्होंने फिर उनके कहने पर काकभुशुंडि की योनि दी। लम्बा सा प्रसंग है। इसके साथ और सात सवाल आते हैं जो कि गरुड़ ने किये हैं काकभुशुंडि से। पीछे राम जी के उसको दर्शन हुए। तो काकभुशुंडि ने जब इस गति को पाया, जन्म दूसरा लिया तो उसमें इस योनि में था मगर दिल में शौक था, यही शौक था कि राम सामने दर्शन दें। राम - राम, लोग बहुत सारे कहते हैं— वह रम रहा है। अरे भई, रमे रहने से भक्त की तसल्ली नहीं होती। वह यह चाहता है कि वह सामने आकर बैठे। तो राम के दर्शनों को पाया आखिर, तो फिर उसकी गति हुई।

दीजिये।

संत्सग प्रवचन - 5

गरुड़ के सात सवाल

(उत्तरकांड में गरुड़ - काकभुशुंडि संवाद)

सत्संदेश नवंबर 1962 में प्रकाशित

तो इस वक्त एक जगह एक और थोड़ा सा portion (हिस्सा) है (रामायण का), वह आपके सामने रखा जाता है जहाँ गरुड़ ने सात सवाल काकभुशुंडि से किये हैं कि आप इन सात सवालों का जवाब दो। गौर से सुनिए, बड़े ज़रूरी सवाल हैं। आम लोगों के दिलों में यही सवाल आते हैं और उन सवालों का जवाब काकभुशुंडि जी ने क्या दिया, वह गौर से सुनिये। सब महात्मा यही जवाब देते हैं मगर ताहम (तो भी) जो जो जिस ग्रन्थ का भाव रखता है उसी में से कुछ चीज़ पेश कर दी जाए तो उस की पूरी तसल्ली हो जाती है। गौर से सुनें वे सात सवाल क्या हैं और उनका जवाब क्या दिया है?

(1) पुनि सप्रेम बोलेतु खगराऊ। जौं कृपाल मोहि ऊपर भाऊ॥

तो गरुड़ ने कहा कि तुम मुझ से बड़ा प्रेम करते हो, ऐ काकभुशुंडि जी! आप मुझ पर मेहरबान हो। मेरे दिल में कुछ शंकायें हैं, मैं वह आप से पूछना चाहता हूँ, आप दया करें। हमेशा याद रखो, जितना शिष्य के लिए प्यार गुरु के दिल में है, उतना शायद हज़ारों माताओं और पिताओं में नहीं होगा, समझो। माता - पिता भी यह ख्याल रखते हैं कि बड़ा हो कर हमें कमा कर देगा। और भाई! गुरु क्या चाहता है? कुछ भी नहीं। वह यह चाहता है कि इस की आत्मा प्रभु से जुड़ जाये, बस। यह उस का mission (काम) होता है। वे कहते हैं कि तुम मुझ से बड़ा प्यार करते हो, मेहरबान हो, इसलिये मैं अर्ज़ करता हूँ, आप इनका जवाब

(2) नाथ मोहि निज सेवक जानी। सप्त प्रस्न मम कहु बर्खानी॥

कहते हैं, मुझ को अपना सेवक जानो, मेरे दिल में सात सवाल हैं, उनका आप दया कर के जवाब दीजिये। वे कौन कौन से सवाल हैं, गौर से सुनिए।

(3) प्रथमहिं कहु नाथ मति धीरा। सब ते दुर्लभ कवन सरीरा॥

ऐ स्वामी! तुम बड़ी अकल वाले हो, बड़े दानिशमन्द हो। तो यह आप बतायें कि शरीरों में से सबसे दुर्लभ शरीर कौन सा है? पैदाइशें तो बड़ी हैं, बड़ी योनियाँ हैं, तो योनियों में से कौन सी योनि का शरीर धारण करना सबसे दुर्लभ है, यह पहला सवाल है।

(4) बड़ दुख कवन कवन सुख भारी। सोउ संधेपहिं कहु बिचारी॥

कहते हैं, सब से बड़ा दुख किस बात में है और सब से बड़ा सुख किस बात में है, यह ज़रा खोल कर, थोड़ा सा खुलासा करके मुझे समझाइये ताकि मुझे समझ आ जाये कि सब से बड़ा दुख किस बात में है और सबसे बड़ा सुख किस बात में है। दुख तो हम नहीं चाहते न, सुख चाहते हैं। तो बड़ा सुख किस बात में है? क्या इन्द्रियों के भोगों - रसों में है? हम इसमें भी सुख मानते हैं कि नहीं? इसका जवाब देगे और सबसे बड़ा दुख किस बात में है, यह दूसरा और तीसरा सवाल है।

(5) सन्त असन्त मरम तुम्ह जानहु। तिन्ह कर सहज सुभाव बर्खानहु॥

कहते हैं, आप सन्त और असन्त के भेद के जानने वाले हो, आप इन को सहज स्वभाव से बताओ कि इनका स्वभाव क्या होता है? सन्त का क्या होता है और असन्त का क्या होता है? इन दोनों के स्वभाव क्या होते हैं? यह बताइये। यह चौथा सवाल हुआ।

(6) कवन पुन्य श्रुति बिदित बिसाला। कहहु कबन अघ परम कराला॥

पाँचवाँ सवाल यह है कि वेदों में कौन सा पुण्य सबसे बड़ा गिना गया है। वेद श्रुति हैं न। ये श्रुति हैं, स्मृति और हैं। श्रुति वह है जिसका ताल्लुक (सम्बन्ध) सुनने से है। और, कौन सा पाप सबसे ज़बरदस्त है? यह छठा सवाल है।

(7) मानस रोग कहहु समझाई। तुम सर्वग्य कृपा अधिकाई॥

कि इन्सान को कौन - कौन से रोग लग रहे हैं? आप तो सर्वज्ञ हो, सब कुछ जानने वाले हो, यह ज़रा खोल कर समझाओ कि हम लोगों को कौन - कौन से रोग लग रहे हैं? कैसे हम उनसे आज़ाद हो सकते हैं, कैसे उन रोगों से बच सकते हैं? यह सातवाँ सवाल है।

(8) तात सुनहु सादर अति प्रीती। मैं संछेप कहउं यह नीती॥

इस पर काकभुशुंडि जी बोले कि ऐ प्यारे! तुम प्रेम से सुनो बात को, मैं तुम को अब इन सवालों का जवाब दे रहा हूँ। प्रेम से सुनो, सब तरफ से ख्याल को हटा कर सुनो, मैं इरक्तसार करके, थोड़ा digest करके, संक्षेप करके आपके सामने इस का जवाब देता हूँ।

(9) नर तन सम नहिं कवनिउ देही। जीव चराचर जाचत तेही॥

कहते हैं, इन्सान के जिस्म से ज्यादा कोई बढ़ कर नहीं है, मनुष्य जीवन सबसे ऊँचा है, highest rung in creation है मनुष्य जीवन।

सर्व जून तेरी पनिहारी॥ सर्व में तेरी सिकदारी॥

सर्व जूनों में तू सरदार जूनी (योनि) है और सब जूनों तेरी सेवा के लिये बनाई गई हैं। यहाँ तक बयान किया है—

भई प्राप्त मानुख देहुरिया॥

मनुष्य जीवन बड़े भाग्य से मिलता है। जितने चराचर जीव हैं, सब इसकी ख्वाहिश (इच्छा) करते हैं मनुष्य जीवन पाने की। यहाँ तक बयान किया है—

जिस देही को सिमरें देव॥ सो देही भज हरि की सेव॥

देवी और देवता भी जिस मनुष्य जीवन को पाना चाहते हैं, अरे भई, तुम को वह मनुष्य जीवन मिला है, अब उस प्रभु को पाने का वक्त है, उस को पा लो। मुक्ति को पाने के लिए मनुष्य जीवन सबसे ऊँचा गिना गया है। फिर आगे और इसका बयान करते हैं कि मनुष्य जीवन किस लिये हम को मिला? उस की गर्ज़ (मतलब) बयान करते हैं, क्यों ऊँचा गिना है।

(10) नरक स्वर्ग अपबर्ग निसेनी। ग्यान बिराग भगति सुभ देनी॥

कहते हैं, नर्क और स्वर्ग और मोक्ष के पाने की यह सीढ़ी है। नर्कों में जाने के सामान कर लो, स्वर्गों में जाने के सामान कर लो या मोक्ष के कर लो, मनुष्य जीवन में तुम ये तीनों काम कर सकते हो। पिछले प्रारब्ध कर्मों के अनुसार मौजूदा जन्म मिलता है। इसमें हमको थोड़ी आज़ादी है, जो क्रियमान कर्म हम करते हैं, जिस तरफ तुम डालना चाहो, लाईन डाल दो, आगे की हालत तुम बदल सकते हो। **Man is the maker of his own destiny.** इन्सान अपनी किस्मत आप बनाता है। पीछे जो किया, अब भोग रहे हैं। अब जो थोड़ी आज़ादी है, उसमें अगर अब ठीक कर लो। नर्कों की तरफ जाने के सामान हैं, इन्द्रियों के भोगों - रसों में, लोगों को दुख दो। स्वर्ग जाना है तो लोगों को सुख पहुँचाओ। अगर जन्म - मरण से रहित होना है तो अभी इन्द्रियों के घाट से ऊपर आ जाओ, उस रस को पा जाओ, ये रस (इन्द्रियों के भोगों के रस) फीके पड़ जायेगे, आना - जाना खत्म जो

जायेगा। तो तीन चीज़ें आप मनुष्य जीवन पाकर कर सकते हैं।

(11) सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर। होहिं बिष्य रत मन्द मन्द तर॥

कहते हैं, ऐसा मनुष्य जीवन पा कर जो हरि की पूजा नहीं करते, हरि का भजन नहीं करते—

भई परापति मानुख देहुरीआ॥। गोविंद मिलण की एह तेरी बरीआ॥।

सब महापुरुष यही कहते हैं, **It is thy turn to meet God.** मनुष्य जीवन पाकर अगर यह आत्मा को मन-इन्द्रियों से आज़ाद करके, आने-जाने के जो कारण हैं, उन से हटा करके प्रभु से नहीं जोड़ लेता, इस का मनुष्य जीवन सफल नहीं होता। तो कहते हैं कि वे लोग विषयों में मस्त होकर महामूर्ख और मूढ़ बन जाते हैं। गुरु अमर दास जी साहब ने एक जगह कहा—

धिगु धिगु खाइआ धिगु सोइआ॥।

धिगु धिगु कापड़ु अंग चढ़ाइआ॥।

हमारे खाने पर, सोने पर, जिस्म की बाहरी बनावटें, हार-शृंगार बनाने पर हज़ार-हज़ार बार लानत है। फिर कहा—

धिगु सरीर कुटुम्ब सहित सिऊ

इस मनुष्य जीवन को धारण करने पर भी हज़ार-हज़ार बार लानत है अगर बाल-बच्चों का ही काम करता रहा, इन कामों पर भी हज़ार बार लानत है,

जितु हुणि खसमु न पाइआ॥।

अगर मनुष्य जीवन पाकर उस प्रभु को नहीं पाया तो जितने काम किये उन सब पर हज़ार बार लानत है।

अवरि काज तेरै कितै न काम॥।

मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥।

साधु संग करो भई, मालिक के साथ जुड़ो, यह मनुष्य जीवन का आदर्श है। अगर मनुष्य जीवन पा कर यह काम नहीं किया तो जन्म बरबाद चला गया।

खसम न चीन्हे बावरी काहा करत बड़ाई॥।

कबीर साहब कहते हैं, मनुष्य जीवन पाकर तुम किस बात की बड़ाई करते हो, अगर मनुष्य जीवन पाकर उस मालिक को तुमने नहीं पाया।

बातन भगत ना होयेंगे छाड़ो चतुराई॥।

यह बातों का मज़मून नहीं है भई, चतुराई की बातें छोड़ो। देखो, तुम क्या कर रहे हो? नर्कों के जाने का सामान कर रहे हो या स्वर्गों का या मोक्ष का? यह सोचो। रेलवे लाइन डालने से पहले आपको अस्तियार है, जिस तरफ लाईन चाहो, डाल लो। एक बार डाल दी गई तो ट्रेन उसी पर चलेगी। मनुष्य जीवन में थोड़ी आज़ादी है, विवेक बुद्धि प्रभु ने दी है, एक लाईन **draw** करो (एक लकीर खैंच दो) इधर या उधर, यह **make** (बना) या **unmake** (बिगाड़) कर सकता है। देख लो, आप क्या कर रहे हो? बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि मनुष्य जीवन बड़े भाग्य से मिलता है, इस को पा कर ये तीनों चीजें तुम कर सकते हो। अगर मनुष्य जीवन पाकर आप ने हरि को नहीं पाया, उसका भजन नहीं किया, अपनी आत्मा को मन-इन्द्रियों से आज़ाद करके उसके साथ जुड़े नहीं, मनुष्य जीवन बरबाद चला गया।

पउड़ी छुटकी फिरि हाथि न आवै अहिला जनमु गवाइआ॥।

एक बार मनुष्य जीवन की पौड़ी हाथ से निकल गई, यह जन्म तो

बरबाद गया। फिर या नसीब मनुष्य जीवन आप को मिले और फिर तुम यह काम कर सको। तो मनुष्य जीवन का पाना बड़े भाग्य से होता है। इसको पाकर जो लोग प्रभु की भक्ति नहीं करते, मोक्ष को नहीं पाना चाहते, नक्कों और स्वर्गों का सामान कर रहे हैं, अरे भाई, वे जन्म को बरबाद कर रहे हैं। कुरान - शरीफ में ज़िक्र आता है कि जो इस दुनिया के आशिक (प्रेमी) लोग हैं, उन को परलोक हराम है और जो परलोक, आखरत के पुजारी हैं उनको यह दुनिया हराम है और प्रभु के पुजारियों को दोनों हराम हैं। बताओ आप क्या कर रहे हो? सोचो। महापुरुषों के कलाम (वचन) बड़े मतलब - खेज (गूढ़) होते हैं, पुर - मायनी (अर्थ - युक्त), पुरमग्न ज होते हैं। साथ - साथ समझाते चले जाते हैं। अरे भई, यह तीनों ही चीजों को पाने की सीढ़ी है। मनुष्य जीवन तुम क्यों चाहते हो? इसमें तुम ने प्रभु को पाना था। क्या कर रहे हो? ज़रा ठण्डे दिल से विचारो। कई भाई रोटियां दान करते हैं इस लिये कि आगे हमें रोटियाँ मिलेंगी। यहाँ जूती देते हैं कि आगे हमें जूतियाँ मिलेंगी। अरे भाई, फिर परलोक के पुजारी तो न हुए, आना - जाना तो खत्म न हुआ। मनुष्य जीवन की यह गर्ज़ न थी।

(12) काँच किरिच बदलें ते लेहीं। कर ते डारि परस मनि देहीं॥

कहते हैं, वे जाहिल लोग हैं, मूढ़ पुरुष हैं जो पारस पत्थर को फेंक देते हैं। पारस पत्थर मिल जाये, उसको जो फेंक दे, उस को अकलमन्द आप कहोगे? उससे तो सोना बनता है भई। मनुष्य जीवन बड़े भाग्य से मिला है, इसमें तुम अपनी आत्मा को प्रभु से जोड़ सकते हो। जो इस को पाकर इससे फायदा नहीं उठाते, वे ऐसे ही हैं जैसे सोने के इवज़ (बदले में) शीशा ले लो, काँच ले लो। तो मनुष्य जीवन पाने की यह कद्र बयान कर रहे हैं कि मनुष्य जीवन पाने की यह कद्र है। वे जाहिल लोग हैं, मूढ़ पुरुष हैं जो इससे फायदा नहीं उठा रहे हैं। देखो, साथ ही

साथ डिग्री दिये जा रहे हैं। यही और और महापुरुष भी कहते हैं। फरमाते हैं—

झलके उठि पपोलिए विणु बूझे मुगध अजाणि॥

सुबह उठ कर जिस्म के पालने और इसके ताल्लुकात के बनाने ही में सारा जीवन बसर कर रहे हैं, उस प्रभु को नहीं जाना, यह जानते हुए कि मनुष्य जीवन चंद रोज़ा है, आखिर छोड़ जाना है। तो कहते हैं, ऐसे लोग कौन हो सकते हैं? या मूढ़ों के मूढ़ या अनजान बच्चे, इन दोनों में एक ज़रूर हैं। सारे महापुरुष यही कहते हैं —

प्राणी तूं आइआ लाहा लैणि।

लगा कितु कुफकड़े सभ मुकदी चली रैणि॥

ऐ प्राणधारी इन्सान! तू दुनिया में आया था यह परम अर्थ हासिल करने के लिए, तू किन फजूल (व्यर्थ) कामों में लग गया? वे फजूल काम कौन से हैं? कबीर साहब ने ज़िक्र किया है रावण का। कहते हैं, सोने की लंका थी, समझे। कुदरत की ताकतों को अपने कबज़े में लाया था। फिर कहते हैं, 'मूर्ख रावण क्या ले गया?' वह मूर्ख था, क्या ले गया यहाँ से? जिस्म साथ आता है, चैदा होते हुए यह पहला संगी और साथी है, पर जाते हुए साथ नहीं जाता। अरे भई, वे चीजें जो इस जिस्म करके बनी हैं, वे कैसे साथ जायेंगी? जो इन्हीं में लग रहे हैं, अरे भई वे मूढ़ लोग हैं, नासमझ लोग या अनजान बच्चे हैं। बड़े प्यार से समझा रहे हैं।

(13) नहिं दरिद्रि सम दुरव जग माहीं। सन्त मिलन सम सुरव जग नाहीं॥

यह तो एक सवाल का जवाब दिया। समझे? क्या खूबसूरती से जवाब दिया है। अब दूसरा और तीसरा सवाल आ जाता है, कि दुनिया में

दुख सबसे बड़ा कौन सा है और सुख सबसे बड़ा कौन सा है और सुख किस बात में है? तो कहते हैं, मुफलिसी (गरीबी) से ज्यादा मुसीबत दुनिया में कोई नहीं है। गरीबी सब पापों की ज़मीन बन जाती है। Beg, borrow or steal (भीख मांगो, उधार लो या चुराओ), समझे? खरीद सकता नहीं, कर्ज़ कोई देता नहीं, वह चोरी पर गिर जाता है। अपने धर्म से, असूल से गिर जाता है। अरे भई, ज़र (धन) और ज़न (स्त्री) की पुजारी दुनिया बन रही है। देखिये, यह बीमारी सब जगह है। नादारी, मुफलिसी, गरीबी सबसे बड़ा दुख है। इसमें इन्सान क्या कुछ नहीं करता? वे काम करता है जो नहीं करना चाहता। बच्चे भूखे मरें तो क्या करे? चोरी करेगा। अपनी भूख तो शायद सहार जाये मगर बच्चों की नहीं सहार सकता है। कहते हैं, यह बड़ा भारी दुख है, समझे। आप देखिये, पैसे कमाने के लिए, मुफलिसी को दूर करने के लिए लब - लालच में गिर जाता है। तो संयम का जीवन होना चाहिये।

घालि खाइ किछु हथहु देइ॥ नानक राहु पछाणहि सेइ॥

जिसकी रोज़ी ही परागन्दा (कमाई खराब) है—

परागन्दा रोज़ी, परागन्दा दिल

यह सबसे बड़ा दुख है दुनिया में। इस को रोटी मिलती रहे, फिर वह संयम में रह सकता है। लब - लालच न करे, जीवन संयम का बनाये, प्रभु की भक्ति करे, पेट में रोटी पड़े तभी।

पेट न पइयां रोटियां ते सबे गल्लां खोटियां।

यह पंजाबी मिसाल है। तो बड़े प्यार से कहते हैं कि मुफलिसी (गरीबी) सब से बड़ा दुनिया में दुख है और सन्तों के मिलाप से ज्यादा कोई सुख नहीं है। सबसे बड़ा सुख कहाँ मिलता है? सन्तों की सोहबत में। सन्त मिलते कहाँ हैं? So-called (तथा - कथित) सन्त तो बड़े

मिलेंगे, सचमुच सन्त कहीं - कहीं मिलेगा। सन्त की तारीफ की गई—
हमरो भरता बड़ो बिबेकी आपे संतु कहावै॥

जब वह परमात्मा किसी पोल (मनुष्य देह) पर इज़हार करता है, उसका नाम सन्त है। उसके पास क्या है?

चारि पदारथ जे को मांगै। साध जना की सेवा लागै॥

चारों पदारथ उसके पास हैं— धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। बड़ी भारी बरकत है। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि सबसे बड़ा सुख दुनिया में सन्तों की सोहबत में है। परमात्मा के चरणों में जाने में सबसे बड़ा सुख है मगर जब तक उसको (परमात्मा) देखा नहीं, फिर? Guru precedes God. जिसमें वह (प्रभु) प्रकट है उसकी सोहबत में ठण्डक मिलती है, वह सबसे बड़ा सुख है। झुलसा हुआ इन्सान धूप से जब एक सायादार दररक्त के नीचे आ जाता है तो ठण्डक को पा जाता है, होश आ जाती है।

बड़ुआ अगन सगले तृण जाले कोई विरला बूटा हरयो री॥

बड़वा अग्न (अग्नि) ने सारे दररक्तों को जला रखा है। कहीं कहीं कोई सरसब्ज़ (हरा - भरा) दररक्त है। कौन? कोई अनुभवी पुरुष, जिसके अन्तर प्रभु प्रकट है। वहाँ जाकर ठण्डक और राहत मिलती है।

जित मिलिए मनि होए अनन्दा सो सतिगुरु कहीए॥

जिसके पास बैठने से थोड़ी ठण्डक मिले, टिकाव मिले, दुनिया भूल जाये, यह निशानी है, समझे?

दिला नजदे बिनशीं कि ओ अज़ दिल खबर दारद

ऐ दिल! किसी ऐसे की नज़दीकी अख्लयार कर जिसको हमारे हाल

का पता हो कि हम किस मुसीबत में गिरफ्तार हैं। क्या करो ?

बज़ेरे आं दरख्ते रौ बरो गुलहाये तर दारद

किसी ऐसे दरख्त के नीचे बैठो जिस पर तरो - ताज़ा फूल महक रहे हों। दुनिया में झुलसा हुआ इन्सान जब वहाँ बैठता है, थोड़ी ठण्डक उस मंडल में मिलती है, चार्जिंग है उसमें। कहते हैं, सन्तों की सोहबत जैसा कहीं सुख नहीं। वहाँ और क्या होता है ?

सुभर भरे प्रेम रस रंगि॥ उपजै चाउ साध कै संगि॥

वे प्रभु के प्रेम और रस और नशे के **overflowing cups**, (उभर - उभर के डुलने वाले प्याले) होते हैं। उनको देखने से प्रभु का चाव बनता है, पहली बात। फव्वारा चल रहा हो, उस के गिर्दा - गिर्द (चारों ओर) जो लोग बैठे हों, जो हवा पानी के फव्वारे से लग कर आये, ठण्डक देती है कि नहीं? उस के मण्डल में बैठने से टिकाव मिलता है। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं। फिर कहा—

महा पवित्र साध का संग॥ जिसु भेटत लागै हरि रंग॥

साधु की संगत महा - पवित्रता के देने वाली है जिसके साथ भेट करने से, मिलने से नहीं भाई, भेट करने से, दिल दिल को राह बनाने से प्रभु का नशा आ जाता है। **Spirituality cannot be taught but caught**, रुहानियत सिखाई नहीं जाती बल्कि छोह (छूत) की तरह पकड़ी जाती है, रंग आ जाता है, नशा आ जाता है। चैतन्य महाप्रभु का वाकेआ है। उनका बोला था 'हरि बोल।' महात्माओं के (अपने-अपने) बोले होते हैं, उसी प्रभु के नाम के बोले होते हैं। तो वे 'हरि बोल' कह करके बोला करते थे - 'हरि बोल, हरि बोल।' एक धोबी ने समझा कोई पैसा माँगने वाला आ गया, उस ने न बोला। एक बार भी न

बोला, दोबारा उन्होंने कहा— चार - छः बार कहा, नहीं बोला। उसने फिर सोचा, यह पीछा छोड़ता नहीं, चलो 'हरि बोल' कह दें, क्या है? जब 'हरि बोल' कहा, तबज्जो मिल गई, नाचने लग गया— 'हरि बोल, हरि बोल'। वह भी नाचने लग गया। साथ के भाइयों ने देखा भई, हमारे भाई को क्या हो गया? आ के कहे, 'हरि बोल' भई। वे भी 'हरि बोल' कहने लग गये। सारा धोबी घाट ही नाच उठा। यह रंग मिलता है अनुभवी पुरुषों की सोहबत से।

तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि सन्तों की सोहबत जैसा कोई सुख नहीं। सबसे बड़ा सुख सन्तों की सोहबत में है समझे। जब तुम (वहाँ) आ गये, समझो प्रभु की सोहबत में आ गये क्योंकि प्रभु उसमें प्रकट हो रहा है। बिजली हर जगह परिपूर्ण है, बताओ अब आपका क्या सँवारती है पर अगर किसी पोल पर वह पावर हाऊस से connect हो (जुड़) जाए तो वह तुम्हारे सारे काम करती है कि नहीं? तो प्रभु सारे हृदयों में है मगर जिस हृदय में वह प्रकट हो गया उससे तुम्हारे सारे काम बनते हैं, उसके चरणों में जाओ। मौलाना रूम साहब ने कहा कि अगर तुम किसी वली - अल्लाह के नज़्दीक आ गये तो समझो तुम प्रभु के नज़्दीक आ गये। क्यों? उसमें वह (प्रभु) है, वह पोल है जिसमें वह इज़्हार कर रहा है, समझे। अगर तुम किसी वली - अल्लाह (महात्मा) से दूर हो गये तो समझो तुम प्रभु से दूर हो गये। उससे दूरी प्रभु से दूरी है, उससे नज़्दीकी जो है, वह प्रभु की नज़्दीकी है। अब आप समझे? जो जवाब दे रहे हैं बड़ी ख़बूसूरती से दे रहे हैं कि सबसे बड़ा दुख मुफलिसी, नादारी, गरीबी, मुहताजी सबसे बड़ा गुनाह है और सब से बड़ा भारी सुख सन्तों की सोहबत में है।

(14) पर उपकार बचन मन काया। सन्त सहज सुभाउ खगराया॥

तीन हो गये सवाल। अब यह चौथा सवाल है कि सन्त और असन्त में क्या भेद है। क्या स्वभाव होता है उनका? कहते हैं, मन, वचन और कर्म से परोपकार करना, यह सन्तों का सहज स्वभाव है। मन से भी, वचन से भी और कर्म से भी। यह नहीं कि मन से बुरा सोचें। मन से भी भला सोचते हैं।

नानक नाम चढ़दी कला॥

तेरे भाणे सरबत का भला॥

Peace be unto all the world over. यह उन की भावना है, यह उन का मिशन है, समझे। उस से (प्रभु से) प्यार करो, वह सब में है, सबसे प्यार करो। आप जुड़े हैं, लोगों को जोड़ते फिरते हैं।

गुरुमुख कोटि उद्धारदा दे नावें इक कणी॥

यही उनका काम होता है। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि ऐ गरुः! यह सन्तों का सहज स्वभाव है, मन करके, वचन करके और कर्म करके उपकार करना। वचन करके भी वही काम कहेंगे जो परोपकार से ताल्लुक रखता हो और कर्म करके भी परोपकार करेंगे, दुर्खियों के दुर्ख दूर करेंगे, भूखों की भूख - प्यास दूर करेंगे, यह उनका काम रहता है। यह स्वभाव है उनका कुदरती। कोई नेक काम करे या बद करे, दूसरों के लिए परोपकार का कायदा, अपने सुखों को छोड़ कर दूसरों के सुखों के लिए अपने सुखों को कुर्बान कर देना, इस का नाम है परोपकार। सन्तों का परोपकार सबसे बड़ा है। आप देखिए।

हमारे हजूर (बाबा सावन सिंह जी महाराज) एक मिसाल दिया करते थे, फरमाया करते थे कि एक जेलखाना है, उस में कैदी लोग रहते हैं। एक आदमी वहाँ गया। उसको बड़ा रहम आया कि इन बेचारों

को रोटी अच्छी नहीं मिलती है। तो वहाँ कुछ रूपया दे दिया कि इन को आगे से अच्छा खाना मिला करे। वह परोपकार कर आया। उसके बाद एक और भाई गये, बड़े परोपकारी थे। उन्होंने देखा, इनको कपड़े अच्छे पहनने को नहीं मिल रहे, सर्दियों का मौसम है, नंग - धड़ंग हैं। उन्होंने रूपया **sanction** (मंजूर) कर दिया और आ गये, कपड़े अच्छे मिलने शुरू हो गये। एक और भाई गया कि ये काल कोठड़ियों में रहते हैं, अँधेरी कोठड़ियाँ हैं, कोई सफाई का सामान नहीं। कहने लगा, “इन को अच्छे मकान बना दो, **well ventilated** (रोशनदान) और सफाई का सामान कर दो,” रूपया **sanction** (मंजूर) कर दिया। वह भी परोपकार कर आया। तीनों गये, परोपकारी, परोपकार तो किया मगर कैदी, कैदी के कैदी ही रहे। खाना देना, कपड़े देना, रहने - सहने को अच्छी जगह दे देना, ये तो भाई सभी करते हैं। ये भी लोग बड़े दुर्लभ हैं। मगर इससे बड़ा एक और परोपकार है जो सन्त करते हैं। वह क्या है? एक आदमी आया। उस के पास जेलखाने की कुंजी थी। उसने दरवाज़ा खोला और कहा कि निकल जाओ सब। वे (सन्त) तन के पिंजरे से आज़ाद करते हैं, जन्म - मरण से छुड़ाते हैं, प्रभु से जोड़ते हैं। यह उनका सबसे बड़ा परोपकार है। तो कहते हैं, संतजन मन, वचन और कर्म से परोपकार करते हैं। यह उनका सहज स्वभाव होता है, स्वभाव में शामिल है। कोई बुरा करे तो भी वे अच्छा करेंगे। समझे? आगे इसी मज़मून को और खोलते हैं।

(15) संत सहहिं दुर्ख पर हित लागी। पर दुर्ख हेतु असन्त अभागी॥

कहते हैं, सन्त का एक यह स्वभाव हुआ। दूसरा यह है कि दूसरों को सुख पहुंचाने के लिए आप दुर्ख भी सह लेते हैं। आप को पता हो वाल्मीकि कैसे सन्त बने, महर्षि कैसे बने? डाकू थे। सन्त एक गुज़र रहे

थे। तो उसने देखा कि यह कोई शिकार है। वह उन को लूटने लगा और मारने लगा। कहने लगे, “‘मारे नहीं। किस लिए मारते हो? जो कुछ लोगे, घर वालों को दोगे। तुम यह पाप करते हो न?’” कहने लगा, “‘हाँ।’” “फिर तुम यह तो सोचो कि तुम्हारे इस पाप में कोई तुम्हारा हिस्सेदार भी है कि नहीं?” कहने लगा, “‘मेरे घर वाले सब हैं।’” कहने लगे, “‘भाई, तुम ऐसा करो, तुम जाओ, घर वालों से पूछ आओ कि क्या वे तुम्हारे इस पाप का हिस्सा बाँटेंगे?’” कहने लगा, “‘वाह! भई, यह अच्छा आदमी मिला, मैं जाऊँ घर, यह जाये भाग।’” महात्मा कहने लगा, “‘नहीं, मैं भागता नहीं, मुझे दरख्त से बाँध दो अच्छी तरह से। तुम घर से सिर्फ पूछ लो, फिर जैसे होगा, कर लेना।’” उसने कहा, भई बात तो ठीक है, चलो पूछ आते हैं। उसको बाँध गया दरख्त के साथ। घर गये, पूछने लगे, “‘अरे भाई, मैं इतना पाप जो करता हूँ, लोगों के गले काटता हूँ, मारता हूँ, लूट - खसूट करता हूँ, बताओ यह पाप है न, तुम मेरा हिस्सा बाँटोगे?’” कहने लगे, “‘हम क्यों हिस्सा बाँटें? हमें तो रोटी चाहिये, जहाँ से मर्जी है, लाकर दो।’” जवाब मिल गया, आ गये, खोला दरख्त से, “‘महाराज, मुआफ करो।’”

तो सन्त अपने आप को बँधवा भी लेते हैं इस लिये कि कोई सुखी हो जाए, यह स्वभाव है उनका। दूसरों के सुख की खातिर अपना आराम छोड़ते हैं। समझे? गुरु नानक साहब थे। घर से निकले, घर - बार छोड़ा, बच्चों को छोड़ा। अरे भई, कहाँ कहाँ नहीं गए? किस लिये? दूसरों के सुख के लिये। उन के दो लड़के थे, सास ने उन्हें खड़ा कर दिया। कहने लगी, “‘देख नानक! तूने अगर यही कुछ करना था तो ये बच्चे क्यों पैदा किये?’” दुनिया भी दो मुँही सर्पनी है, बड़ी बुरी तरह से पेश आती है। कहने लगे, “‘माता! जिन मोह के बन्धनों में तू मुझे फँसाना चाहती

है, मैं दुनिया को उन बन्धनों से आज़ाद करने आया हूँ।’”

जगत जलन्दा रख लै प्रभु आपन किरपा धारि॥

जगत में आग लग रही है, हे प्रभु! इसको बचा लो। इन्सान वही है जो दूसरों के लिये जीये। अपने लिये तो कुत्ता भी अपना पेट भर लेता है। तो सन्त का स्वभाव है परोपकार करना— मन, वचन और कर्म करके। मन कर के भी यह नहीं कि किसी का वे बुरा सोचते हैं। वे दूसरों को सुख पहुँचाने के लिए आप दुर्ख भी उठाते हैं। किस लिये? उनका प्रेम है प्रभु से। और प्रभु सब में है, इस लिए। और जो असन्त हैं, वे बदनसीब हैं। वे दूसरों को दुर्ख देने के लिए आप दुर्खी होते हैं। सौ मुसीबत उठायेंगे, दूसरे का घर जल जाये ज़रूर। फर्क हुआ कि नहीं? एक दूसरों को सुख पहुँचाने के लिए दुर्ख उठाते हैं, एक दूसरों को दुर्ख पहुँचाने के लिए दुर्ख उठाते हैं। कहते हैं, यह स्वभाव है भई सन्तों का और असन्तों का। आगे और मिसाल दे कर समझायेंगे। गौर से सुनो।

(16) भूर्ज तरु सम सन्त कृपाला। परहित निति सह विपति बिसाला॥

कहते हैं, सन्तजन दयालु पुरुष होते हैं भोजपत्र के दरख्त की तरह। वे औरों की भलाई के लिए रोज़ सरख्ती और मुसीबतें झेलते हैं। भोजपत्र, आप को पता हो, कैसे छालें उतारी जाती हैं, छीले जाते हैं, यानी अपने आप को छिलवा भी लेते हैं ताकि लोगों के सुख का कारण बनें। भोजपत्र के कपड़े पहना करते थे ऋषि, मुनि, महात्मा कभी। कहते हैं, वे ऐसे हैं सुख देने के लिए, और दूसरे लोग जो हैं—

(17) सन इव खल पर बन्धन करई। खाल कढ़ाइ विपति सहि मरई॥

और जो असन्त लोग हैं, वे सण की तरह हैं, खाल उत्तरवाते भी हैं मगर किस लिये? कि रस्सा बन कर लोगों को बाँधा जाये। बात वही है। मिसाल देकर समझाने का यत्न कर रहे हैं कि जो असन्त हैं लोगों को दुख देने के लिये अपने आपको छिलवा भी लेंगे, दूसरों को दुख पहुँचे सही, दूसरे के घर के साथ पहले अपने घर को जलाने के लिए तैयार हैं। मगर सन्तजन अपना घर तो जला लेते हैं दूसरों को आबाद कर देंगे। यह फर्क है। देखो, कहाँ मिलता है। समझे? ये सन्तों और असन्तों के लक्षण हैं, स्वभाव हैं। सन्तों की कोई गर्ज़ नहीं, वे लागर्ज़ हैं। सिर्फ प्रभु के हुक्म के अन्तर काम करते हैं। उनका काम ही है बिछुड़ी हुई आत्माओं को मन-इन्द्रियों से आज़ाद करके प्रभु से जोड़ना। यह उनका काम है। पापी से पापी लोग उनके चरणों में जा कर डाकुओं से महर्षि बन जाते हैं। मौलवी रूम साहब बड़े आलिम - फाज़िल थे। उन्होंने क्या किया? स्कूल में पढ़ाया करते थे। एक दफा शम्स तबरेज़ साहब, अनुभवी पुरुष थे, आ गये। वहाँ किताबें पढ़ी थीं। पूछा, “ई चीस्त?” “यह क्या कर रहे हो, भई?” तो जवाब दिया, “ई हाल अस्तो नमी फ़हमी।” कहने लगे, “अरे भई! यह ऐसा इल्म है, तुम को क्या पता यह क्या है?” खैर, वे चले गये। स्कूल की छुट्टी हुई तो उन्होंने (शम्स तबरेज़ ने) तत्त्वियां, जो धोने वाला चौबच्चा था पानी से भरा हुआ, सब किताबें, कलमें उसमें डाल दीं। जब आये (मौलवी रूम साहब), तो देखा, किताबें नहीं थीं। पूछा, “अरे भई, ये किताबें कहाँ हैं?” एक निकाली, सूखी किताब, दूसरी निकाली, तीसरी निकाली, तरब्ती वगैरा सब सूखी, और पानी से निकल रही हैं। कहने लगे (मौलवी रूम), “ई चीस्त?” “यह क्या है भई?” कहते हैं, “ई हाल अस्तो नमी फ़हमी।” “अरे भई, यह ऐसा इल्म है, जिसका तुम को पता नहीं।” तो आलिमों और अनुभवी पुरुषों में बड़ा

भारी फर्क है। अब आप देखेंगे कि मौलवी रूम को मौलाना रूम बनाने के लिये उन्होंने (शम्स तबरेज़ ने) कितने दुख सहे। लोगों की मुखालिफत (विरोध) भी सही, सब कुछ किया, आखिर जान भी दे दी। तो बड़े प्यार से समझाते हैं। आखिर क्या कहा मौलवी रूम ने?

मौलवी हरगिज़ न शुद मौलाये रूम

मौलवी हरगिज़ मौलाना रूम न बन सका,
ता गुलामे शम्स तबरेज़ी न शुद

जब तक शम्स तबरेज़ का गुलाम न बना। अरे भई, इसलिए हम संतों के पास जाते हैं कि जिस गति को उन्होंने पाया, हम भी पा जायें। असल मतलब तो यही है। तो यहाँ तक कहा—

बया साक़ी इनायत कुन तो मौलानाये रूमी रा

ऐ मुर्शिद (गुरु)! तू मुझ पर दया कर, मुझ पर रहम किया कर कि
मैं—

गुलामे शम्स तबरेज़म कलन्दर वार में गोयम

मैं सारी दुनिया से कहूँ, मैं भई शम्स तबरेज़ का गुलाम हूँ। सिरव (शिष्य) को मान होता है गुरु का, समझे। मैं फलाने गुरु का शिष्य हूँ। गुरु पूर्ण हो तो इसमें बड़ी शोभा है। देखिये, कोई भी हो, आम असूल यही है। शिष्य गुरु से पढ़ता है। कोई नई बात नहीं। वह इल्मे - रूहानी है, इल्मे - लुदनी है, पराविद्या है जो इन्द्रियों के घाट से ऊपर मिलती है और बाहरी इल्मों का ताल्लुक इन्द्रियों के घाट से है, **Where the world's philosophies end, there the religion starts.** जहाँ दुनिया के फिलसफे खत्म हो जाते हैं वहाँ से सच्चा परमार्थ शुरू होता है। वे उस राज़ के देने वाले हैं, इसलिये उनकी महिमा वेद, शास्त्र,

ग्रन्थ, पोथियाँ सभी गाते हैं। कहते हैं, ये सन्त और असन्त के लक्षण हैं, समझें।

(18) खल बिनु स्वारथ पर अपकारी। अहि मूषक इव सुनु उरगारी॥

अब कहते हैं कि ऐसे खोटे पुरुष, जैसे साँप और चूहा, जहाँ होंगे काटेंगे। चूहा कहीं भी हो, कुतर - कुतर करेगा, यह उसका स्वभाव है। ऐसे लोग दूसरों को नुकसान पहुँचाते रहते हैं। उनका क्या बनता है? बनता बनाता कुछ नहीं उनका, पर यह उनका स्वभाव है। चूहों का स्वभाव है कुतरना। चाहे कपड़ा मिल जाये, चमड़ा मिल जाये, लकड़ी मिल जाये, लोहा मिल जाये, काटेंगे। साँप का स्वभाव है काटना। कहते हैं, ऐसे ही खल पुरुषों का कायदा है। असन्त - जन जो हैं, वे दुख ही देना चाहते हैं। उन के स्वभाव में यह शामिल हो चुका है।

(19) पर संपदा बिनासि नसाहीं। जिमि ससि हति हिम उपल बिलाहीं॥

कहते हैं, दूसरों की दौलत को बरबाद करने के लिए आप भी तबाह हो जायेंगे मगर दूसरों को तबाह कर देंगे। ओले पढ़ते हैं खेत पर, खेत बरबाद हो जाता है और आप भी नाश हो जाते हैं। मिसाल दे कर समझाया है।

(20) दुष्ट उदय जग आरति हेतू। जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू॥

फरमाते हैं कि ऐसे पुरुषों का दुनिया में आना ऐसा ही है जैसे केतु तारा मशहूर है। केतु आ गया भई, खैर नहीं। उस से सुख किसी को नहीं पहुँच सकता, समझे। ऐसा स्वभाव उन का है। उन से दुख ही दुख निकलेगा।

(21) सन्त उदय सन्त सुखकारी। विस्व सुखद जिमि इन्दु तमारी॥

सन्तों का प्रकट होना सुख देने वाला है। जैसे, कहते हैं, काली रात

हो, चाँद की ठंडी - ठंडी रोशनी सुख देती है, लोगों को ठंडक पहुँचाती है ऐसे उसका जीवन दुनिया में है।

(22) परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा। पर निन्दा सम अघ न गरीसा॥

अब कहते हैं, वेदों के मुताबिक 'अहिंसा परमो धर्मः', दूसरों का दिल न दुखाना यह सब से बड़ा धर्म है। यह सन्तों का स्वभाव है। **None violence** 'अहिंसा परमो धर्मः', यह सबसे बड़ा सुख देने वाला है, अहिंसा, किसी का बुरा चित्तवन न करना, न मन करके, न वचन करके, न कर्म करके।

जे तउ पिया मिलन दी सिक तां हिआ न ठाही केहीदा॥

अगर तुम प्रभु को पाना चाहते हो तो किसी दिल को न दुखाओ। यहाँ तक बयान किया है। हाफिज़ साहब एक जगह ज़िक्र करते हैं कि क्या करो? 'मय खरो,' शराब पी लो। यह पाप है बड़ा, कहते हैं, यह भी पी लो। इस से बढ़ कर और भी कोई पाप है। 'मय खरो, मुसहिफ बिसोज,' सब धर्म पुस्तकों को जला दो। यह भी पाप है बड़ा, कहते हैं, यह भी कर लो। इस से भी बड़ा और पाप है? 'आतिश दर काबा ज़न,' खुदा के घर में आग लगा दो। यह सब से बड़ा पाप है मगर इससे बढ़ कर और भी पाप है। 'साकिने बुतखाना बाश। हरचे कुन वलेकिन मरदमाजारी मकुन,' (किसी का) दिल न दुखाओ, दिलाज़ारी न करो, भई यह सबसे बड़ा पाप है। सारे महापुरुष यही कहते हैं। कहते हैं, दिलाज़ारी न करना, यह सबसे बड़ा धर्म है। और दूसरों की बुराई करने के बराबर और कोई पाप नहीं है, बस। यही सवाल था न कि दुनिया में कौन सा पुण्य सबसे बड़ा है, कौन सा पाप ज़बरदस्त है। यह है पाँचवाँ और छठा सवाल, उस का जवाब दे रहे हैं कि अहिंसा धारण करो भई, यह सबसे बड़ा धर्म है। अहिंसा परम धर्म है, यह वेदों में, सब महात्माओं

की वाणियों में आता है।

देखिये, प्रेम और अहिंसा साथ साथ चलते हैं। जिस का प्रेम होगा, उसके लिए अहिंसा होगी। जिसके साथ प्रेम हो, तुम उसको कभी दुख दोगे? कभी दुख नहीं दोगे। यह निशानी है प्रेम की। ये दो **phases** (पहलू) हैं एक ही चीज़ के। तो सन्तों - महात्माओं ने, वेदों - शास्त्रों ने कहा, तुम परमात्मा से प्रेम करो। परमात्मा सब में है, सब से प्रेम करो। जब सब से प्रेम करोगे तो दुख किस को दोगे? तो अहिंसा सब से बड़ा पुण्य है और दूसरों की बुराई करना, यह सबसे बड़ा पाप है, बस। यह छठे सवाल का जवाब दिया है। एक और सातवाँ सवाल रह गया। उस का जवाब तो बहुत लम्बा है, मगर खैर, थोड़ा इसके साथ—

(23) हर गुरु निन्दक दादुर होई। जन्म सहस्र पाव तन सोई॥

अब कहते हैं कि विष्णु और गुरु की निन्दा करने वाले मेंडक का शरीर हज़ार जन्म तक धारण करते हैं। बयान है सन्तों का।

(24) द्विज निंदक बहु नरक भोग करि। जग जनमङ्ग बायस सरीर धरि॥

ब्राह्मण यानी अनुभवी पुरुषों की निंदा करने वाले, कहते हैं नर्क भोग कर फिर कौवे का जन्म लेते हैं। इसलिए इन को, काकभुर्णुडि को कौवे का जन्म दिया है। यह भी गुरु की सिफारिश करने पर, यह रियायत की, चलो भई, कौवे बन जाओ, नर्क में न जाओ।

(25) सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी। रौरव नरक परहिं ते प्रानी॥

कहते हैं, जो देवताओं और वेदों, धर्म - शास्त्रों की निन्दा करते हैं, कहते हैं, वे मगरुर (अभिमानी) पुरुष हैं, वे सब रौरव, जो सबसे बड़ा नर्क है, उस में जाते हैं।

(26) होहिं उलूक सन्त निन्दा रत। मोह निसा प्रिय ग्यान भानु गत।

कहते हैं, सन्तों की निन्दा करने वाले तो उल्लू बनते हैं। उल्लू का क्या कायदा है? अँधेरा उसको पसन्द है, दिन अच्छा नहीं लगता। ऐसे ही जो निंदक पुरुष हैं, वे सन्तों की हमेशा **dark side** लेते हैं। उन को अज्ञानता पसन्द है, ज्ञान पसन्द नहीं, इस लिए वे उल्लू की योनि में जायेंगे।

(27) सब कै निन्दा जे जड़ करहीं। ते चमगादुर होइ अवतरही॥

कहते हैं, सन्तों की निंदा करने वाले तो उल्लू की योनि में जाते हैं। जो सब की निंदा करते हैं वे चमगादड़ की योनि में जाते हैं। चमगादड़ आपको पता है, रात को लटकते हैं उलटे दररक्तों के साथ। चाँदनी में उनको कोई रास्ता नहीं मिलता, भटकते फिरते हैं, दीवारों से टक्करें खाते हैं। यह निंदकों का हाल है।

निन्दा भली किसै की नाहीं मनमुख मुगाध करनि॥

कहते हैं, मनमुख जो लोग हैं, वे निन्दा करते हैं। निन्दा किसी की भली नहीं, न तो नेक की, न ही बद (बुरे) की। बद की भी निन्दा करोगे, अगर कीचड़ पर पत्थर फेंकोगे तो छीटे तुम ही पर पड़ेंगे न। **As you think, so you become.** जिसका चिंतन करोगे वैसे तुम बन जाओगे।

मुँह काले तिनां निंदकां नरके घोरि पवनि॥

उनके मुँह काले होंगे, इस दुनिया में भी, अगली दुनिया में भी। घोर नर्क में वे जायेंगे। सारे महापुरुष एक ही बात कहते हैं।

(28) सुनहु तात अब मानस रोग। जिन्ह ते दुख पावहिं सब लोगा॥

अब सातवाँ सवाल रह गया कि मानस (मन के) रोग कौन - कौन से हैं जिन में सब दुनिया गलतान है। अज्ञानता सबसे बड़ा रोग है। इस से

हर एक किस्म के दुख बार-बार पैदा होते हैं, अज्ञानता से होते हैं। अगर right understanding हो जाये, सहीनज़री हो जाये, वह क्या है? हम आत्मा देहधारी हैं, देह का रूप बन गये, अज्ञानता में आ गये कि नहीं? 'एह शरीर मूल है माया।' भूल यहाँ से शुरू हुई, सारी उम्र जिस्म और इसके ताल्लुकात में ही लम्पट रहे, आना जाना बना रहा, यह सब दुर्खों का मूल है शरीर।

देह धर सुखिया कोई न देखा जो देखा सो दुखिया हो॥

देह धारण करके किसी को सुखी नहीं देखा, जो भी देखा, सब को दुखी देखा, यह कबीर साहब कहते हैं। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं कि अज्ञानता सब दुर्खों की जड़ है। इस से बार-बार दुख पैदा होते हैं।

(29) मोह सकल व्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला॥

कहते हैं, अज्ञान के सबब से जिस्म बन गया (अपने आप को आत्मा की बजाय जिस्म का रूप समझने लगा), जिस्म के साथ मोह बन गया, ताल्लुकात के साथ सब दुर्खों का मूल बन गया। यहाँ से जड़ शुरू है। अगर हम जिस्म के ऊपर आना सीख जायें, महापुरुष क्या कहते हैं, जिस्म को छोड़ो, चलो ऊपर, तुम आत्मा देहधारी हो, आखिर जिस्म को छोड़ना है, अभी छोड़ना सीख जाओ। वे उस अविद्या की जड़ को काट देते हैं पहले दिन ही। तुम आत्मा हो देहधारी, देह नहीं, आखिर छोड़नी पड़ेगी। तो यहाँ से, कहते हैं, जिस्म का मोह बन गया, सब पापों का सामान बन गया।

(30) काम बात कफ लोभ अपारा। क्रोध पित्त नित छाती जारा॥

इन्सान के अन्तर तीन चीज़ें बयान की हैं, सुफरा (वात), बलगम (कफ) और सौदा (पित्त)। इन तीनों के संयम के न होने से बीमारियाँ

बनती हैं। इन तीनों के सबब से सीने में हमेशा जलन होती रहती है, छाती जलती रहती है। वायु बढ़ जाये, कफ बढ़ जाये और सौदा या पित्त बढ़ जाये, कहते हैं, काम जो है यह सफरा (वायु) है, लालच जो है वह बलगम है, गुस्सा जो है यह पित्त या सौदा है। जहाँ काम होगा, (वहाँ) लालच होगा और क्रोध होगा। काम, क्रोध और लालच या लोभ, तीन चीज़ें जिस इन्सान के अन्तर हैं, वह दुखी है। यह सब से बड़ा रोग है। ये मानस रोग हैं तीन। बाकी उसके साथ आगे मोह का बनना कुदरती बात है। मिल जाए तो उस को रखना चाहता है, उस को फिर पा कर मस्त होना चाहता है, उस को अहंकार कहते हैं। तो एक कामना से सब कुछ बना। यह चीज़ एक ही है याद रखो। जैसे पानी का एक नाला बह रहा हो बड़े ज़ोर से, तो बीच में एक पत्थर रख दो, पानी उस से टकरा कर दो चीज़ें बनती हैं, एक आवाज़ होती है और दूसरे ज्ञाग बन जाती है। अरे भई, जितनी कामना है—

जेती मन की कल्पना काम कहावे सोए॥

जितनी मन की कल्पनाएं हैं ये सब काम हैं। इनमें जब कोई रुकावट, ज़ाहिरा या दरपर्दा बनती है, वह क्रोध बन जाता है। अब क्रोधी पुरुष के मुँह से ज्ञाग आती है और आहिस्ता बोल नहीं सकता, ऊँचा बोलेगा, ये दो बातें उस में बन जाती हैं। जहाँ क्रोध है, ज़र्र पाना चाहता है, यह लोभ है। कुछ भी हो, वह पायेगा, इस का नाम लोभ है। ये तीन चीज़ें हैं हर इन्सान के अन्तर में। वात है, कफ है और पित्त है। तीन ही से बीमारियाँ बढ़ती हैं। कहते हैं, ये तीन चीज़ें जिस इन्सान के अन्तर हैं वह बड़ा भारी दुखी है, बड़े भारी रोग यही तीन हैं।

(31) प्रीति करहिं जौं तीनिउ भाई॥ उपजइ सन्यपात दुखदाई॥

अगर ये तीनों भाई—सुफरा, बलगम और सौदा या पित्त— अगर एक साथ प्यार करें तो फिर दुखदाई सरसाम हो जाता है, दिल - दिमाग ठिकाने नहीं रहते। सरसाम में आपको पता है, क्या होता है? सिर पर बुखार चढ़ जाता है, न सो सकता है, न देख सकता है। यह हालत दुनिया की हो रही है। काम, क्रोध और लालच के सबब से उनका दिल - दिमाग सही नहीं। कहते हैं, ये सबसे बड़े रोग हैं। तो महात्मा बुद्ध ने क्या इलाज बतलाया? **Be desireless.** कामना - विहीन हो जाओ। चलो। न कामना रहे, न क्रोध, न लोभ लालच रहेगा। कामना ही नहीं तो किस बात का क्रोध हो। हो हो, न हो, न हो। ये सन्तों के लक्षण हैं और इन्हीं की बाकायदगी न होने के सबब से लोग दुखी हैं।

(32) विषय मनोरथ दुर्गमि नाना। ते सब सूल नाम को जाना॥

कहते हैं, ये मुखतलिफ (विभिन्न) किस्म के रोग हैं जो हर एक इन्सान के अन्तर में हैं मगर लोग जानते नहीं हैं। हम क्यों दुखी होते हैं। एक मिसाल दिया करते हैं, कि कहीं एक दुकान लगी थी। काल आया, कहने लगा, बड़ी अच्छी दुकान है। कहते हैं कि अभी मैं बतलाता हूँ। उसने शहद थोड़ा लगा दिया दीवार के साथ। (उस पर) मकरवी आ बैठी। मकरवी को छिपकली खाने आई, छिपकली को कुत्ता खाने आया, कुत्ते को मालिक ने डंडा मारा, सारी दुकान बरबाद हो गई। अगर चेष्टा न हो, किसी चीज़ की कामना न हो तो बाकी चीज़ें कहाँ आयेंगी? तो एक ख्वाहिश के पैदा होने से, कामना के पैदा होने से सारे मानस रोग आ जाते हैं।

(33) ममता दादु कण्डु इरषाई॥ हरष विषाद गरह बहुताई॥

ममता आ गई। नतीजा, कभी खुशी, कभी गमी। ममता में कोई चीज़ बनी रही तो सुख, टूटी तो दुख। और क्या? यह दुनिया के दुख

और सुख का कारण है।

(34) पर सुख देखि जरनि सोइ छई॥ कुष्ट दुष्टता मन कुटलई॥

यानी जब ममता आई तो खुदी आई, खुदी में खारिश पैदा होती है, समझे। रंज और दुख का कारण बन जाता है। और क्या कहते हैं? पराये सुख को देख कर जलना, यह भी बीमारी है, कहते हैं, यह तपेदिक की बीमारी है, समझे, जान ले मरेगी, और दिल की फितना - परदाजी, कुछ न कुछ शरारत पैदा करते रहना, यह कोढ़ की बीमारी है जो सब को लग रही है। देख लीजिए, ये कमज़ोरियाँ हैं हम में। कोढ़ का क्या कायदा है? उसमें बू आने लगती है, कोई नज़दीक नहीं आता, इससे किनारे हो जाओ, भई। कहते हैं, ये हैं मानस रोग जिनमें दुनिया फँस रही है।

(35) अहंकार अति दुखद डमरुआ॥ दम्भ कपट मद मान नेहरुआ॥

गरु (अहंकार) एक डमरु रोग होता है, उस की तरह है। अहंकार में मत्ता (डूबा) फिरता है। पार्खंड, कपट वगैरा ये भी रोग हैं। नेहरुआ रोग होता है, यह लम्बा सा कीड़ा बन जाता है। बस यह हाल है दुनिया का। ये मानस रोग हैं जिनमें सब दुनिया जा रही है।

(36) तृस्ना उदरबृद्धि अति भारी॥ त्रिविधि ईर्षना तरुन तिजारी॥

लालच जलन्दर रोग है। जलन्दर रोग पता है, पेट में पानी पड़ जाता है। जिस में पड़ जाये, पड़ता ही रहता है और बढ़ता है। इसी किस्म के ईर्षा, द्वेष, कई किस्म के रोग बन जाते हैं।

(37) जुग विधि ज्वर मत्सर अबिबेका॥ कहं लगि कहाँ कुरोग अनेका॥

कहते हैं, पराई भलाई को न देख सकना और अज्ञान, ये दो किस्म

के बड़े बुखार हैं और इन से कई रोग और पैदा हो जाते हैं। यह मानस रोगों का ज़िक्र कर रहे हैं कि ये रोग हैं जो मनुष्य को लग रहे हैं।

(38) दोहा - एक व्याधि बस नर मरहिं ए असाधि बहु व्याधि।

पीड़िहि संतत जीव कहुँ, सो किमि लहै समाधि॥

कहते हैं, आदमी को एक मर्ज़ (रोग) लग जाये तो मौत के घाट उत्तरता है। जिस को इतने रोग लग जायें, उसका क्या हश्च होगा? समझे। कहते हैं, फिर वे सुख कैसे पा सकते हैं? आगे इसका थोड़ा सा जवाब देते हैं दोहे में।

(39) नेम धर्म आचार तप ग्यान जग्य जप दान।

भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं, रोग जाहिं हरि जान॥

कहते हैं, इन सबका इलाज हरि का जानना है, आत्मा का मन - इन्द्रियों के घाट से ऊपर आ कर प्रभु से मिलना है। अगर वह (प्रभु) मिल जाये, जैसे आग के पास बैठने से सब सर्दियां दूर हो जाती हैं, सब ठंडक दूर हो जाती है, बर्फ के पास बैठने से गर्मी दूर हो जाती है, वैसे ही जब आत्मा मन - इन्द्रियों से आज़ाद होकर ऊपर आ गई तो आत्मा महाचेतन प्रभु से जुड़ कर इन सारे रोगों से आज़ाद हो जाती है। गुरबाणी में आता है -

रोग रहित मेरा सत्तगुरु जोगी॥

कहते हैं, मेरा सत्तगुरु ही सब रोगों से रहित है, बाकी सब रोगों से भे पड़े हैं। तो कहते हैं, दुनिया में जितने नियम हैं, धर्म हैं, आचार हैं, तप हैं, ज्ञान, यज्ञ, जप, दान वगैरा हैं जिनका ताल्लुक अपराविद्या से है, उनके करने से भी ये रोग नहीं जाते। इन रोगों से हटने का इलाज, छूटने का इलाज आत्मा का प्रभु से जुड़ना है, पराविद्या, आत्म - तत्त्व

का बोध। आगे, बहुत सारा खोल कर समझायेंगे। तो इतना यह सात सवालों का जवाब काकभुशुडि जी ने गरुड़ को दिया। इन में सब हमारी बीमारियों का ज़िक्र आ गया, उन का इलाज भी बताया। तो सन्तों के पास यही इलाज है कि आप को इन्द्रियों के घाट से ऊपर आने का रास्ता देते हैं। ये दुख कहाँ से आते हैं? कामनायें कहाँ से पैदा होती हैं? इन्द्रियों के घाट से। वे कहते हैं आँखों को बन्द कर लो, कानों को बन्द कर लो, मुँह बन्द कर लो, बाहर की कामनायें हिलोर देने वाली नहीं पैदा होंगी। देख - देख कर ख्वाहिशात (इच्छाएँ) पैदा होती हैं या सुन - सुन कर या भोग - भोग कर। कहते हैं, इन सब को इधर से हटाकर नाम के रस में जोड़ दो, ये सारे रस फीके पड़ जाएँगे, आना - जाना खत्म हो जाएगा। इन सब का इलाज हरि का भजन है, पराविद्या है, आत्म - तत्त्व का बोध है। जो सुरत का शब्द के साथ, नाम के साथ लगना है, यह इन सब दुखों का वाहिद (एक मात्र) इलाज है। यही स्वामी जी महाराज ने फरमाया -

जो जो चोर भजन के प्राणी, नित नित दुख सहें।

काम क्रोध सतावें उनको, लोभ नदी में डूब मरें॥

'सो सियाने एक ही मत।' रामायण यही कह रही है, काकभुशुडि जी यही कह रहे हैं, यही स्वामी जी महाराज कह रहे हैं। सब महापुरुषों के कलाम लो, यही बात कहते हैं। अरे भाई, कामनाओं से विहीन बनो, एक इलाज। कब होगे? जब इन्द्रियों का घाट छूटेगा। बाहर के रस हमें क्यों असर कर रहे हैं? हम इन्द्रियों के घाट पर बैठे हैं।

गुरि दिखलाई मोरी, जितु मिरग पड़त हैं चोरी॥

गुरु वह मोरियाँ दिखलाता है जिनसे हम लूटे जाते हैं।

मूर्दि लिए दरवाजे, बाजी अले अनहद बाजे॥

बाहर के दरवाजों को बन्द कर लिया, अन्दर वह अनहद ध्वनि, श्रुति जारी हो गई, उस ज्योति का विकास हो गया, उस महारस को पा कर दुनिया के रस फीके पढ़ गये, आना - जाना खत्म हो गया। यह है इलाज सब बीमारियों का, जिन में दुनिया जा रही है। तो सात सवालों का बड़ी खूबसूरती से जवाब दिया है। इन को समझो। ग्रन्थों - पोथियों के पढ़ने से नहीं, समझो उन्होंने क्या कहा है? हमारी ही इन बीमारियों का इलाज है? वह हरि भजन के बगैर कुछ नहीं। हरि भजन कब मिलता है? जो हरि को भजते हैं, उनकी सोहबत से। उनका नाम सन्तजन है। उनका स्वभाव क्या है? मन, वचन, कर्म से परोपकार करना, कोई बुरा करे तो भी उसके साथ उपकार करना। यह उन का खासा (गुण) है। तो यह रामायण का कुछ हिस्सा था जो आप के सामने रखा गया। हर एक महापुरुष ने यही बात कही है।

वेद कतेब कहहु मत झूठे, झूठा सो जो न बिचारै॥

ग्रन्थों - पोथियों में उन महापुरुषों के बयान हैं जिनको पढ़ कर समझना है। जो उपदेश मिले, उसको धारण करना है। उससे कल्याण होगा। जो गिज़ा (खुराक) खा कर हज़म हो जायेगी, वही ताकत देगी। जो हज़म नहीं होगी, वह बीमारियाँ पैदा करेगी। तो आमिल होना, अमल हो साथ, तब तो ठीक है, नहीं तो खारिश (खुजली) की बीमारी है। जितनी खाज ज्यादा करोगे, उतनी और बढ़ेगी।

दुनिया में रह कर इससे किनारे कैसे रह सकता है? सवाल यह है। एक फकीर ने कहा है -

दर मिआनि काअरे दरिया तरक्ता बन्दम करदई
बाद में गोई कि दामन तर मकुन हुशियारबाश।

कि दरिया में एक तरक्ते पर हमें बिठा दिया गया है, फिर कहते हैं देरवना, कपड़े भीग न जायें। हम दुनिया में हैं, इन्द्रियों के घाट पर बैठे हैं, अरे भाई, कैसे बचें?

काजल की कोठरी में कोई कैसो ही सियानो बने दाग लागत पर लागत है।

जब तक इन्द्रियों के घाट पर बैठे हो, बाहर की कामनायें आयेंगी। किसी महापुरुष के पास बैठो, कामनाओं को बन्द करना सीखो। ये सब संस्कार बाहर से आते हैं। औँख को बन्द कर लो, बाहरी संस्कार न लो। कान को बन्द करना सीखो, ज़बान को बन्द करना सीखो, अन्तर्मुख हो जाओ, तुम को हकीकत का राज़ (भेद) मिलेगा, वह चीज़ मिल जायेगी जिसको पाकर दुनिया की कामनायें खत्म हो जायेंगी।

तो कामना - विहीन होने से ही मुक्ति है। तभी दुनिया में सुखी रह सकते हो, नहीं तो दुर्खों का रूप बन जाओगे। इसलिए महापुरुषों ने यही कहा, **Be desireless** (कामना विहीन हो जाओ)। कामनायें ही नहीं तो दुख कहाँ? दुनिया में रहो, हरि से जुड़े रहो।

'हरगिज मगो।' कहते हैं, हम तुम को यह नहीं कहते कि 'अज दुनिया जुदा बाश,' दुनिया से जुदा रहो। मगर, 'कि हर कारे बाशी बा खुदा बाश,' 'किसी काम में रहो, प्रभु से जुड़े रहो।' इसकी (दुनिया का) कामनाओं से रहित रहो। फिर दुनिया में रहते हुए तुम्हारी मुक्ति है। यह साधन कहाँ से मिलता है?

नानक पूरा सतिगुरि भेटिए पूरी होवै जुगति॥

हसंदियाँ खेलंदियाँ पैनंदियाँ खावंदियाँ विचे होवै मुकति॥

घर - बार छोड़ने की ज़रूरत नहीं। ख्वाहिशात को कम करो।

जितनी कम कर लो उतने सुखी, जितनी ख्वाहिशात बढ़ाओगे, उतने ही दुखी। बड़े थोड़े लफज़ों में—

साई दा की पावणा, इब्दरों पटटणां ते उद्धर लावणा।

यह है इलाज इसका। तो आज का सत्संग, रामायण से दो हिस्से आपके सामने रखे गये। एक तो काकभुशुंडि जी ने अपनी कहानी बयान की कि मैं इस योनि में कैसे आया? किसी अनुभवी पुरुष की निरादरी करने से। गुरु की सिफारिश पर और योनियों से रिहाई हुई, काकभुशुंडि काग बने और सात सवाल, जो दुनिया में हर एक के दिल में उठ रहे हैं उनका बड़ी खूबसूरती से जबाब दिया है। इनको दिल में धारण करो। जितना धारण करोगे उतना ही हकीकत के नज़दीक हो जाओगे, जन्म सफल हो जायेगा।

नाम की महिमा

(बालकाण्ड में राम और नाम की तुलना)

सत्संदेश जून 1964 में प्रकाशित

सारे वेद और ग्रन्थ - पोथियाँ जितनी भी हैं, इस बात पर मुत्तफिक (सहमत) हैं कि इन्सान की मुक्ति नाम से है।

एक नाम जुग चार उद्धारे

किसी महात्मा की बाणी आप लो, उसमें इस बात पर ही ज़ोर दिया गया है। आज से पहले कई महात्माओं की बाणी आपके सामने रखी गई है, नप्से मज़मून (विषय) सबका एक ही रहा है। सबको इस बात पर इत्तेफाक (सहमति) है कि इन्सान की मुक्ति नाम से है।

‘नाम’ ‘नाम’ सब कोई कहता है। कहने को तो सारा जहान कहता है मगर ‘नाम’ की समझ किसी - किसी को है। सो इस ‘नाम’ की महिमा के मुतल्लिक (बारे में) आगे मुख्तलिफ (भिन्न - भिन्न) महात्माओं की बाणी आपके सामने रखी गई। आज हम ‘रामायण’ से नाम के मुतल्लिक एक शब्द लेते हैं कि तुलसीदास जी इस बारे में क्या विचार पेश करते हैं। ‘रामायण’ एक मुस्तनिद किताब, एक प्रमाणिक धर्म - ग्रन्थ है। इसे अमली वेद - शास्त्र कह लो। इसमें नाम का विशेष करके बहुत सारा ज़िक्र आया है बालकाण्ड और उत्तरकाण्ड में। सन्तों की तालीम परंपरा से चली आती है, आज कोई नई नहीं, सनातन से सनातन और पुरातन से पुरातन है यह तालीम मगर हम इसे भूलते रहे और महात्मा आकर इसे ताज़ा करते रहे। इसी ‘नाम’ की महिमा का सवाल है। शुरू से आज तक जितने महात्मा आए, इसी की फज़ीलत

(बड़ाई) बयान करते रहे। आज आप ‘रामायण’ में से देखेंगे कि ‘नाम’ की क्या महिमा गाई है।

‘रामायण’ के मुतल्लिक मैं अर्ज कर दूँ कि यह बड़ा गूढ़ ग्रन्थ है। पढ़ने को तो सारा जहान ही राजा रामचन्द्र और महारानी सीता की कहानी पढ़ता है मगर इसमें जो गोप्ता राजा (भेद छुपा हुआ) है, उसके जानने वाले लोग कम हैं। हो सकता है यहाँ ‘रामायण’ के माहिर भी बैठे हों, मैं ‘रामायण’ का ज्यादा माहिर नहीं। हमें तो नफ्से - मज़मून (विषय - वस्तु) से गर्ज़ है। ‘नाम’ के मुतल्लिक जो बालकाण्ड में थोड़ा ज़िक्र आया है, उसमें से थोड़ी सी चौपाईयाँ आपके सामने रखी जायेंगी जिनसे ‘नाम’ की महिमा, उसकी बड़ाई ज़ाहिर होती है। गौर से सुनिये।

(1) समुद्रत सरसि नाम अरु नामी। प्रीति परस्पर प्रभु अनुगामी॥

गुसाई तुलसीदास जी फरमाते हैं कि समझने में ‘नाम’ और ‘नामी’ यकसां (बराबर) हैं, ‘नाम’ और ‘नामी’ में कोई भेद नहीं। ‘नाम’ एक expression (अभिव्यक्ति) है और ‘नामी’ वह चीज़ है जिसे ज़ाहिर करने से लिए ये लफज़ बरते जा रहे हैं। सो ‘नाम’ और ‘नामी’ में कोई फर्क नहीं समझा जाता मगर इनके बीच ऐसा रिश्ता है, ताल्लुक है कहो, जैसा सेवक और स्वामी में होता है। स्वामी और सेवक में आपस में दिली भाव होता है न। सेवक के अन्दर स्वामी का भाव है। सेवक न हो तो स्वामी की खबर किस को होती है? सेवक से ही स्वामी की तमीज़ (पहचान) की जाती है। अगर सब स्वामी हों तो तमीज़ कहाँ रहेगी? ऐसे ही ‘नामी’ है मगर नामी का इज़हार नाम से है। ‘नाम’ और ‘नामी’, एक इज़हार है, एक वह चीज़ है जिसका इज़हार है। सो फरमा रहे हैं कि ‘नाम’ और ‘नामी’ में समझने के लिए तो कोई फर्क नहीं, आपस में इनका गूढ़ ताल्लुक है। ये एक दूसरे से connected (जुड़े

हुए) हैं। जैसे किसी आदमी का नाम राम सिंह है, नाम लेने से वह फौरन खिंच जाता है ऐसे ही ‘नाम’ और ‘नामी’ का भेद है। आपस में इनका गूढ़ ताल्लुक है, गहरा रिश्ता है। सो तुलसीदास जी फरमा रहे हैं कि समझने में ‘नाम’ और ‘नामी’ दोनों यकसां (समान) हैं मगर उनके दरमियान रिश्ता होता है। आगे इस मज़मून को खोलते चले जायेंगे, गौर से सुनने के काबिल है।

(2) नाम रूप दोइ ईस उपाधी। अकथ अनादि सुसामुग्नि साधी॥

कहते हैं, कहने को तो ‘नाम’ और ‘रूप’ दोनों ईश्वर की उपाधि हैं। उपाधि से मुराद (अभिप्राय) है माया। हैं तो ये दोनों माया पर दोनों अकथ और लायबान हैं। माया माया सारा जहान ही कहता है पर माया क्या चीज़ है, इस की समझ किसी - किसी को है। इसके तीन रूप हैं— प्रधान, प्रकृति और माया। प्रधान —पर के मायने हैं ‘परे’ और ‘धान’, जिससे लम्पटताई हो, जिस से जुड़ा हो, जिसके साथ जुड़ा हो उससे ताल्लुक होता है। यह higher stage (ऊँची स्टेज) है माया की। सिफ्त मौसूफ (गुण, गुणी) से जुड़ा नहीं। यह समझने वाली बात है। पानी की ठंडक पानी से जुड़ा नहीं, दोनों एक ही हैं मगर खाली गर्मी तो आग नहीं। आग जो जलाने वाली चीज़ है, वह कुछ और है। गर्मी उसका इज़हार (अभिव्यक्ति, गुण) ज़रूर है। इसी तरह नाम और रूप दोनों माया बयान किए जाते हैं। दोनों अनादि भी हैं और अकथ भी हैं। वैसे वेदान्त में माया के बारे में कहा है कि, ‘यह (माया) एक अनहोनी चीज़ है जो होई नज़र आती है।’ सन्त भी कहते हैं, यही ठीक है। एक बात ज़रूर है, सिफ्त मौसूफ (गुण, गुणी) से जुड़ा नहीं। यह (सिफ्त) उस का इज़हार है और वह (मौसूफ) खुद वह चीज़ है जिसका इज़हार है। तो जो मालिक है, उसका जो ईश्वर - पना है, वही माया है, उसको प्रधान कहते हैं। इस स्टेज से जब नीचे आता है तो उसे प्रकृति कहते

हैं—‘पर’ कहते हैं ‘परे’ को, ‘कृति’ जिसमें क्रिया, कर्म यानी काम करने का गुण या स्वभाव हो। उस को सूक्ष्म कह लो, और माया बाहर जो है—‘मा’ कहते हैं मापने वाला, ‘या’ कहते हैं यन्त्र को। वह कौन सा यन्त्र है? यही हमारी बुद्धि। यही माया है। माया ईश्वर से जुदा नहीं। इसकी अपनी कोई **existence** (हस्ती) नहीं। यह निर्भर है ईश्वर पर मगर ईश्वर—पना ईश्वर से जुदा नहीं। यह गोङ्गा (भेद) की बात है जो समझने के काबिल है। यह बात अगर समझ में आ जाये तो बात कुछ भी नहीं।

माया को अन्तर्वर्चनी करके बयान किया है, ऐसी चीज़ जो अपने आप में कुछ नहीं और फिर भी है। संतों ने इसको बड़ी खूबसूरती से बयान किया है। माया भूल का नाम है। जितनी **creation** (रचना) दुनिया में है, यह सब माया है। जब हम इसमें ही रह जाते हैं और इसको जो बनाने वाला है, जो **background** (आधार) है इसकी, उसको भूल जाते हैं तो यह माया है, नहीं तो यह भी माया नहीं। तो माया भूल का नाम है, यह कह लो।

माया होई नागणी जगत रही लपटाये॥
जो इसको सेवन्दे फिर तिस ही को खाये॥

माया नागिनी होकर जगत को लिपट रही है—स्थूल में भी, सूक्ष्म में भी, कारण में भी। माया, प्रकृति और प्रधान—तीनों में इसका यह गुण है, इज़हार है कहो। एक दूसरे से जुदा नहीं। इसकी (माया की) अलेहदा (**separate**) हस्ती कोई नहीं, मगर है। तुलसीदास जी बड़ी खूबसूरती से बयान कर रहे हैं कि कहने को तो नाम और रूप दोनों ही ईश्वर की उपाधि (माया) हैं मगर ‘नाम’ और ‘रूप’ दोनों ही अकथ और अनादि हैं। ‘नाम’ और ‘रूप’ दोनों किसी चीज़ के हैं। इस चीज़ से

उन्हें जुदा कैसे करोगे? एक आम है, उस पर लाली है, उस पर सब्ज़ी (हरियाली) है। उस पर जो लाली या उसके पक्केपन का इज़हार है, उसे आम से जुदा कैसे कर सकते हो? है कुछ भी नहीं। उसका (लाली का) इज़हार आम पर है मगर उसकी अपनी निजी, अलेहदा कोई हैसियत नहीं। सो कहते हैं, ‘नाम’ और ‘रूप’ दोनों ईश्वर की उपाधि हैं मगर दोनों ही अकथ और अनादि हैं। कहते हैं, जब तक कोई श्रेष्ठ बुद्धि वाला न हो, इस बात को समझ नहीं सकता। यह भी साथ कह दिया कि जब तक कोई अच्छी समझ वाला न हो, इसको समझ नहीं सकता। बात बड़ी साफ है मगर समझ नहीं आ रही। सारी दुनिया ‘माया, माया’ पुकार रही है मगर हकीकत की समझ नहीं आ रही। मैंने पहले अर्ज किया कि ईश्वर कर ईश्वरपना, सत्य की सत्यता, ‘सत्यता’ ही सत्य का इज़हार है न। जो इज़हार है, वह माया है मगर उससे (जिसका इज़हार हो रहा है) जुदा नहीं। इसलिए सन्तों ने कहा—

एह विस संसार जो तू देखदा, हर का रूप है, हर रूप नदरी आया॥

जिसकी वह आँख खुली, माया का जो आधार है, उसकी **background** (आधार) है जो, उस को जो देखने लग गया, वह देखता है कि सारा संसार उसी का रूप है। है भी और नहीं भी। नहीं तब है जब हम भूल में रहें। बाहर जो इज़हार है उसका, उसी में लम्पट रहें तो यह सारी रचना बड़ी भारी मशीनरी की आँख है फँसाने की। अगर अन्तर की आँख खुल जाये, जिस का इज़हार हो रहा है, उस को हम देखने लग जायें तो यह (रचना) गोङ्गा (भेद) नहीं रहती। वह (माया) है भी और नहीं भी, दोनों सूरतें हैं। बड़ी खूबसूरती से बयान कर रहे हैं। कहते हैं जो अच्छी समझ वाले हैं, वे इसको समझ सकेंगे, बाकी नहीं।

(३) को बड़े छोटे कहत अपराधू। सुनि गुन भेद समुद्दिहिं साधू॥

अब फरमाते हैं तुलसीदास जी कि इस में से किस को बड़ा कहें और किस को छोटा? ईश्वर - पने (ईश्वरत्व) को बड़ा कहें या ईश्वर को? किस को बड़ा कहें और किसको छोटा? दोनों एक हैं। एक इज़्हार है, एक वह चीज़ है। एक सिफ्ट है, एक मौसूफ है। सिफ्ट मौसूफ से अलेहदा नहीं। किसको छोटा कहें और किस को बड़ा कहें? छोटा बड़ा कहेंगे तो पाप करेंगे न। चीज़ तो एक ही है न? एक तो वह चीज़ है और एक उस का इज़्हार है। इस में छोटा कौन और बड़ा कौन? हाँ, माया उन लोगों को है जिनकी आरवें बन्द हैं। नहीं, तो यह संसार-

एह जग सच्चे की है कोठरी, सच्चे का विच वास॥

जिनकी आँख नहीं खुली, उन को यह सब 'माया' है। स्थूल के ऊपर आओ तो सूक्ष्म में फिर माया है, उसमें 'प्रकृति' है। सूक्ष्म से ऊपर, कारण में जाकर 'प्रधान' है। इन तीनों से अतीत हो जाओ तो हकीकत की समझ आये। मगर जिनकी आँख खुलती है, उन्हें यही उस का स्वरूप नज़र आता है। सो कहते हैं, इसमें छोटा किस को कहें, बड़ा किस को कहें? ऐसा कहने से पाप होगा। कहते हैं, उसके गुणों को सुन - सुन कर साधुओं को उसका भेद समझ में आता है। साधु, जो साधना करके उधर गये। साधु किस को कहते हैं? साधु उस को कहते हैं जो त्रिगुणातीत अवस्था को पा गये। जो तीन गुणों और माया, प्रकृति और प्रधान तीनों से पार हो गया, उस का नाम साधु है। कहते हैं, नाम को साधु समझते हैं, उसके गुणों को सुन - सुन कर साधु उस के भेद को समझते हैं, आम दुनिया उसे नहीं समझती। आम लोग बाहर फैलाव में जा रहे हैं, वे जिस्म का रूप बने बैठे हैं और भूल में जा रहे हैं।

माया होई नागणी जगत रही लपटाये॥
जो इसको सेवन्दे फिर तिस ही को खाये॥

नागिन जब बच्चे जनती है तो कुण्डली मार कर फिर उन्हीं को खाती है। कोई गुरमुख ही है जो गुरु के सन्मुख बैठा हो, कोई ऐसा गुरमुख हो, वह पाँव तले रौंद डालता है माया - रूपी नागिन को अर्थात् उसके ऊपर आ जाता है। उसकी आँखों पर यह माया पर्दा नहीं डाल सकती। सो कहते हैं कि कोई साधुजन ही इसके भेद को समझ सकता है।

(४) देखिअहिं रूप नाम आधीना। रूप ग्यान नहिं नाम बिहीना॥

फरमाते हैं, 'रूप' 'नाम' के मातहत है, अधीन है। उस के 'रूप' का ज्ञान 'नाम' के ज्ञान बिना कैसे होगा? वह उस से अलेहदा नहीं, उसी का इज़्हार है। गो (चाहे) 'माया' में शामिल है मगर उस से (ईश्वर से) जुदा नहीं। वह अनादि भी है और अकथ भी है जैसे वह मालिक है मगर उस की अपनी *existence* (हस्ती) कोई नहीं। वेदान्त भी यही कहता है। सन्त भी यही कहते हैं, यहाँ भेद नहीं, सिर्फ आगे समझने का फर्क है।

(५) रूप विसेष नाम बिनु जानें। करतल गत न परहिं पहिचानें॥

अगर नाम नहीं मालूम किसी चीज़ का, चीज़ देखी भी है, नाम नहीं मालूम, आँखों के सामने है, फिर भी नाम के बगैर हाथों पर धरी चीज़ पहचाने में नहीं आती। करोगे भी क्या? है कुछ एहसास तो कर रहा है मगर उसका इज़्हार *expression* (अभिव्यक्ति) कोई नहीं। सो 'माया' के बगैर उस 'नामी' का इज़्हार भी नहीं। 'नामी' 'माया' से जुदा नहीं, 'माया' उसका इज़्हार है। अब हम राम कहते हैं। वह ताकत जो रम रही है, वह 'राम' है। अब जो रमने का गुण है, वह

‘राम’ से जुदा नहीं। यही ‘माया’ और हकीकत (नामी) में कहो, असलियत में कहो, फर्क तो कोई नहीं, सिर्फ इज़्हार का तरीका है। इसीलिए सन्तों ने दुनिया के त्याग का ख्याल नहीं दिया। वे कहते हैं, दुनिया में रहो, यह जो ‘माया’ ‘माया’ तुम पुकारते हो, इसी में रह कर तुम्हारा कल्याण हो सकता है। सिर्फ जो आँख है देखने वाली, उसको बदलने का सवाल है, अन्तर की हकीकत के खुलने का सवाल है।

पूरा सत्गुरु भेटिये पूरी होवे जुगत॥
हसंदियां रवेवन्देयां पहनदेया विच्छे होवे मुक्त॥

दुनिया को छोड़ने की ज़रूरत नहीं। जंगलों में जाओगे, वहाँ भी तो माया है। वहाँ दररक्त (पेड़) हैं, गाय, भैंस, बकरी आदि जानवर हैं। रोटी है, पानी है, बिछौना है, वहाँ भी तो माया है। माया को छोड़ कर कहाँ जाओगे? एक **right angle of vision** (सही नज़री) होना चाहिये, देखने वाली आँख का बनना है। जब तक कोई अनुभवी पुरुष न मिले, वह आँख बनती नहीं। दुनिया हाय-हाय करती मर जाती है। कभी मालिक का रूप नज़र आता है? हरेक जगह उसका मन्दिर है। **Devotion** से, भाव भक्ति से, प्यार से जहाँ सजदा करो (माथा टेको), वहाँ उसका (प्रभु का) मन्दिर है। परमात्मा कहाँ नहीं? यह बताओ। परमात्मा हरजाई (सर्वव्यापक) है। ऐसे ही उसका इज़्हार भी हरजाई है। वह (प्रभु) उससे (इज़्हार से) जुदा नहीं। जो आधार कहो, **background** कहो, वह हकीकत है। हकीकत न हो तो यह भी (उसका इज़्हार भी) न हो।

(6) सुमिरिअ नाम रूप बिनु देखें। आवत हृदय सनेह बिसेषें॥

यहाँ थोड़ा सा बयान करते हैं। एक चीज़ को आपने देखा नहीं मगर अक्षरों में उसका बयान आया है। बयान करने से थोड़ी थोड़ी कशिश,

थोड़ा प्यार महसूस होता है। आपने कहा, आम मीठा होता है। अभी देखा नहीं उसे। फिर कहा, उसमें छिलका होता है, गूदा होता है उसमें। गूदा मीठा होता है। ऐसी ही नाम का, इस तरह बयान करने से उसका थोड़ा - थोड़ा एहसास होने लगता है, थोड़ा - थोड़ा प्यार जागने लगता है, गो (चाहे) उसको अभी देखा नहीं। इसी तरह अक्षरों का, जो हकीकत के इज़्हार के लिए बरते जाते हैं, उन का ताल्लुक हकीकत से है। इसी तरह पढ़ने से भी थोड़ा शौक पैदा होता है। पढ़ना शौक दिलाने के लिए ठीक है मगर हकीकत के खुलने के लिए अन्तरीय आँख का खुलना ज़रूरी है। इसी तरह सुमिरन या जप या प्रभु के नाम की याददाहानी (सुमिरन) उस तरफ हमारी तवज्जो दिलाने (ध्यान खींचने) के लिए बरती जाती है। तो यह याददाहानी अर्थात् नाम का ‘सुमिरन’ या ‘जप’ पहला कदम है इसके लिए।

(7) नाम रूप गति अकथ कहानी। समझत सुखद न परति बरवानी॥

कहते हैं ‘नाम’ और ‘रूप’ की जो महिमा की गई है, उस की अकथ कहानी है। अभी जो बयान किया गया है, उस को केवल समझने लग जाये इन्सान, केवल **theory** (सिद्धान्त) समझने लग जाये, तो कहते हैं यह चीज़ बड़ी खुशी पैदा करने वाली है। अब यह पता लग जाये कि ‘नाम’ और ‘रूप’ उससे (ब्रह्म से) जुदा नहीं। है यह माया मगर इज़्हार (प्रकटावा) हकीकत से परे नहीं। कहते हैं कि जो इस बात को समझ जाये उसके अन्दर बड़ी खुशी पैदा करने वाली है यह चीज़। यह ऐसी खुशी देती है जो बयान में नहीं आ सकती। खाली समझने में यह बात है तो देखने में क्या कुछ होगा!

(8) अगुन सगुन बिच नाम सुसारवी। उभय प्रबोधक चतुर दुभाषी॥

अब फरमाते हैं कि निर्गुण और सगुण के दरमियान यही नाम ही है

जो दोनों की तरजमानी करता है, दोनों की बात बयान करता है। हकीकत को समझाने के लिए 'नाम' और 'रूप' हैं। 'नाम' और 'रूप' न हों तो हकीकत कहाँ समझ आये? तो कहते हैं, 'नाम' दुभाषिये का काम करता है, तरजमा करता है दोनों का। यह ऐसी ज़बानों का जानने वाला है जो निर्गुण और सगुण दोनों की तशरीह (व्याख्या) कर देता है। अगर 'नाम' और 'रूप' न हों तो तशरीह कैसे हो? निर्गुण क्या है? सगुण क्या है? 'नाम' ही से इसका इज़्हार है। 'नाम' ही से हम समझ सकते हैं कि निर्गुण क्या है, सगुण क्या है? बुद्धि के आधार पर हम इसको मापते हैं। 'नाम' और 'रूप' से ही हम इसको समझ सकते हैं। इस लिए 'नाम' और 'रूप' दोनों लाज़िम मलजूल (एक दूसरे के लिये निहायत ज़रूरी) हैं।

(9) दोहा - राम नाम मनि दीप धरु जीह देहरीं द्वारा।
तुलसी भीतर बाहेरहुं जौं चाहसि उजिआर॥

पहले 'नाम' और 'रूप' कर के बयान किया। अब 'राम-नाम' कर के बयान कर रहे हैं। राम के मायने है 'रमा हुआ'। 'रमत ही ते रामा', जो रम रहा है उसे 'राम' कहते हैं। एक अक्षर राम है उसको बोध कराने के लिए। एक वह पावर है जो जर्झे जर्झे (कण-कण) में रमी हुई है और जिसका यह सब इज़्हार हो रहा है। तो कहते हैं कि अगर तुम चाहते हो कि तुम्हारे अन्दर और बाहर ज्योति का प्रकाश हो जाये तो क्या करो? 'राम नाम मनि दीप धरु', राम नाम का जो दीवा है, दीप है, उसे मन के द्वार पर रख दो। मन करके, अपने जी से, तवज्जो कहो, ख्याल कहो, सुरति कहो, उस से सुमिरन करो, मन करके राम नाम जपो, तुम्हारे अन्तर और बाहर प्रकाश हो जाएगा। एक नाम रूप कहा, एक राम नाम, ऐसा नाम जो रमा हुआ है। कहते हैं, इस नाम का दीवा इस मन के द्वार पर रख दो तो तुम्हारे अन्तर बाहर प्रकाश

हो जायेगा। रमे हुये नाम से ताल्लुक आयेगा तो क्या होगा? आँख बन्द करो तो अन्तर प्रकाश और बाहर प्रकाश हो जायेगा।

नाम जपत कोट सूर उजियारा॥

सो कहते हैं मन करके उसका सुमिरन करो। जब तक यह न करोगे, काम नहीं बनेगा। सुमिरन कई किस्म का है, एक ज़बान से सुमिरन, एक कंठ से सुमिरन, एक हृदय से सुमिरन, ये तीन प्रकार के सुमिरन हैं, बैखरी, मध्यमा और पश्यन्ति। इन तीनों में जब तक मन साथ न हो, काम नहीं बनता। सो कहते हैं, मन के द्वार पर रमे नाम को रख दो, आपके अन्तर और बाहर प्रकाश हो जायेगा। अक्षर से चलना है ज़रूर मगर अगर रमे हुए नाम का इज़्हार चाहते हो, उसका contact चाहते हो (उससे जुड़ना चाहते हो) तो मन करके उसका जाप करो। यह (मन) स्थिर होगा तब लाईट आ जायेगी। यही सब महात्मा कहते हैं।

गुरु ज्ञान अंजन सच नेत्रीं पाया॥

अन्तर चानण अज्ञान अन्धेर वंशाया॥

कहते हैं, हमारी आँखों में गुरु ने ज्ञान का सुरमा डाल दिया जिससे अज्ञान का अँधेरा दूर होकर हमारे अन्तर में प्रकाश ही प्रकाश हो गया। शायराना (कवितामयी) बयान है। इस का नतीजा क्या होता है? अन्तर प्रकाश ही प्रकाश हो जाता है। यह निशानी है नाम का contact मिलने की। St. Mathews कहते हैं, If thine eyes be single, thy whole being shall be full of light (तेरी दो आँखों की अगर एक आँख बन जाये तो तेरे अन्दर नूर ही नूर भर जायेगा)।

मुसलमान भाई कहते हैं, कोहेतूर (तूर पहाड़) पर खुदा का जलवा हज़रत मूसा ने देखा। यह कोहेतूर है दोनों आँखों के पीछे। चलो गगन

के ऊपर, सब महात्मा यही कहते हैं। तुलसीदास जी थोड़ा इशारा कर रहे हैं, नाम रूप सब बयान करके कि अगर तुम उस रम रही पावर का, अन्तर और बाहर इज़हार (अन्दर बाहर उसे प्रकट करना) चाहते हो तो मन को थोड़ा खड़ा करके मन से उसका जाप करो। उसका नतीजा यह होगा कि तुम्हारे अन्तर और बाहर प्रकाश हो जायेगा। यह निशानी है नाम का contact (संपर्क) मिलने की। परमात्मा ज्योति - स्वरूप है और नाम को परमात्मा परिपूर्ण पावर कह लो, God-in -Action Power (व्यक्ति प्रभु - सत्ता) कह लो।

(10) नाम जीह जपि जागहिं जोगी। बिरति बिरंचि प्रपञ्च बियोगी॥

‘नाम जीह जपि’ जी करके, ज़िन्दगी करके, जिन्द जान करके (अपनी ज़िन्दगी और जान करके) अगर इसको (नाम को) ऐसे जपोगे तो जैसे योगीजन सोई हुई हालत से अतीत हो जाते हैं, ला - ताल्लुक हो जाते हैं ऐसे ही तुम भी हो जाओगे। यह ‘नाम’ की महिमा है। गुरु नानक साहब से योगियों ने पूछा, ‘नाम’ के बारे में तो उन्होंने फरमाया—

जैसे जल में कमल निरालम मुर्गाई नीसाने ॥
सुरत शब्द भव सागर तरिए नानक नाम बरवाने॥

कि जैसे कमल जल में रहता हुआ भी अलेप रहता है, पानी का असर कबूल नहीं करता और मुर्गाबी जल में रहती हुई भी सूखे परों से उड़ जाती है ऐसे ही सुरति शब्द से लग जाये तो इन्सान भवसागर से अतीत हो जाता है (तर जाता है)। यह ‘नाम’ की महिमा है। इस वक्त सुरत और मन दोनों एकत्र हैं। हमने आगे इसको (सुरत को भी) मन से अलेहदा करना है। फिलहाल इन्द्रियों के घाट से ऊपर आ कर मन से और सुरत से दोनों करके जाप करना है। सो कहते हैं कि ‘नाम जीह

जपि’, कि ‘नाम’ को जी से, मन से जप कर योगीजन सोई हुई हालत से जाग उठते हैं। इस वक्त तो हम सोये पड़े हैं। सारी दुनिया की यही हालत है। मन - इन्द्रियों से जब हम ऊपर आएँ तभी हम जाग सकते हैं।

मोह माया सभे जग सोया एह भरम कहो किउ जाई॥

कि सारा जहान मोह - माया में सो रहा है। सो कहते हैं कि नाम को जी करके, उसे मन से जपने से योगीजन जाग उठते हैं और संसार के मोह - माया की वृत्ति छोड़ कर अतीत हो जाते हैं, ला - ताल्लुक हो जाते हैं, दुनिया में रहते हुए भी वे दुनिया के नहीं रहते। यह नाम की महिमा बयान की जा रही है।

(11) ब्रह्म सुखहि अनुभवहि अनूपा। अकथ अनामय नाम न रूपा॥

कहते हैं कि उसकी (नाम की) बरकत से इन्सान ब्रह्म के सुख को, जो अनूप है, बेनज़ीर (बेजोड़) है, अकथ है, ला बयान है, उसे अनुभव करने लग जाता है। वह बगैर नाम रूप है, वह अकथ और अनाम है। पहले नाम और रूप में उसका इज़हार बताया, पहले ‘नाम’ और ‘रूप’ का ज़िक्र किया। अब कहते हैं, ‘नाम’ और ‘रूप’ से अलग है वह। अकथ है वह, अनाम है। पहले इज़हार बताया, अब कहते हैं कि ‘नाम’ ‘रूप’ से परे है, ऊपर है वह। बड़ा तमीज़ी बयान है यह। Differentiate करके, अलग अलग करके बड़ी खूबसूरती से बयान कर रहे हैं। कहते हैं, ‘नाम’ और ‘रूप’ दोनों लाज़िम - मलजूम (एक दूसरे के लिए ज़रूरी) हैं। यह इज़हार के लिए है, वह जो रमा हुआ ‘नाम’ है, जर्रे - जर्रे में रम रहा है जिससे लाईट आती है, वह ‘नाम’ और ‘रूप’ से भी ऊपर है। यह (नाम - रूप) उस का इज़हार है, वह background (आधार) है इसका।

(12) जाना चहहिं गूढ़ गति जेऊ। नाम जीहं जपि जानहिं तेऊ॥

कहते हैं, जो नाम की गूढ़ गति को जानना चाहता है, इस पेचीदा राज़ को समझना चाहता है, वह क्या करे? वह जी कर के, मन कर के, नाम को जपे। सुमिरन कई किस्म का है— ज़बान का, कंठ का, हृदय का सुमिरन। सन्तों का सुमिरन रुह का सुमिरन है— मन कर के, जी कर के, रुह कर के नाम को जपना। मुसलमान फकीरों ने इसे ज़िक्रे - रुही कर के बयान किया है।

ज़िक्रे - रुही जुज़ फने दर्वेश नेस्त

कहते हैं, सुरत का, रुह का, जो सुमिरन है, जी कर के जो सुमिरन किया जाता है, वह आमिल फकीरों का मत है, वही इसका भेद जानते हैं। सारी दुनिया दूसरे सुमिरनों में है। सो कहते हैं कि अगर इस राज़ को समझना चाहते हो तो जी करके इसका सुमिरन करो।

(13) साधक नाम जपहिं लय लाय। होहिं सिद्ध अनिमादिक पाय॥

कहते हैं, जो साधक लोग हैं, जो उससे लौ (लिव) लगा कर 'नाम' जपते हैं, जो नाम पावर को ध्याने वाले हैं, जो उस से लगते हैं, contact करते (जुड़ते) हैं, वे अनिमा, गरिमा आदि जो सिद्धियाँ हैं, उन को पा कर सिद्ध हो जाते हैं।

रिद्धि - सिद्ध नावें की दासी॥

'नाम' को जपने से रिद्धियाँ - सिद्धियाँ भी आ जाती हैं। 'नाम' की दासियाँ हैं यह रिद्धियाँ - सिद्धियाँ मगर सन्तों ने इन को बरतने का हुक्म नहीं दिया क्योंकि इस से हम फिर इज़हार में (फैलाव में) चले जाते हैं और हकीकत से दूर हो जाते हैं। तो 'नाम' के जपने से बे - अखिल्यार रिद्धियाँ - सिद्धियाँ आ जाती हैं।

(14) जपहिं नामु जन आरत भारी। मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥

कहते हैं, जो बहुत दुखी लोग हैं, 'नाम' के जपने से उनके दुख दूर हो जाते हैं और उनको खुशी प्राप्त होती है। गुरु नानक साहब ने एक बार कहा—

नानक दुखिया सब संसार॥

उनसे पूछा कि महाराज! कोई सुखी भी है? तो फरमाने लगे, हाँ है—

सो सुखिया जिस नाम अधार॥

जिसको नाम का आधार मिल गया, जिसकी आत्मा पिंड को छोड़ कर नाम पावर से लगने लग गई, वह सुखी हो गया। सो बड़े - बड़े दुखी लोग जो हैं वे नाम को पाकर सुखी हो गये। उन के सब दुख दूर हो गये।

सरब रोग को औरवध नाम॥

सब दुखों का वाहिद (एकमात्र) इलाज 'नाम' है। फिर अर्ज़ कर दूँ कि नाम की समझ किसी - किसी को है। ये (तुलसीदास जी) अपने तरीके से बयान कर रहे हैं। 'नाम' दो किस्म का है, एक अक्षरी नाम, एक वह पावर, वह ताकत जिसका यह अक्षरी नाम बोध कराने वाला है, एक 'Name,' दूसरा 'Named', एक 'इस्म', दूसरा 'मुसम्मा', एक 'नाम,' दूसरा 'नामी।' अक्षरी नामों से चल कर, 'नाम' और 'रूप' से चल कर, वह नाम पावर, 'नाम' और 'रूप' जिसका इज़हार कर रहे हैं, हमें उस पावर को, ताकत को पकड़ना है, उसके साथ लगना है। उसके साथ लगने में शान्ति और सुख है। आप 'नाम' और 'रूप' में, ज़ाहिरदारी में लगे रहोगे बगैर हकीकत के पाने के, तो तुम दुखी रहोगे। यही सब महात्माओं ने कहा है। स्वामी जी महाराज ने इसी बात का ज़िक्र किया है।

सुरत तू दुखी रहे हम जानी।

फरमाते हैं, ऐ सुरत! ऐ आत्मा! तू दुखी है, यह हम देख रहे हैं। कब से दुखी है तू? आगे जवाब देते हैं।

जा दिन ते तै शब्द विसारा, मन संग यारी ठानी॥

कि ऐ भाई! जिस दिन से तूने ‘शब्द’ या ‘नाम’ को विसार दिया, नाम-पावर से तू दूर हो गया और मन से यारी लगा ली और मन-इद्रियों के घाट पर लम्पट हो रहा है, ‘नाम’ और ‘रूप’ में फंस रहा है, उस वक्त से तू दुखी है। अब अगर तू सुखी होना चाहता है तो क्या कर? As a natural corollary, यह करो कि मन की यारी छोड़ो और शब्द से लगो। तरीका है अपना अपना, बात वही है। ‘नाम’ मिल गया जिसको, वह निर्भय हो गया। मगर यहाँ ‘नाम-पावर’ से लगने का सवाल है। अक्षरी नामों से चल कर हमें उस पावर से लगना है।

(15) राम भगत जग चारि प्रकारा। सुकृती चारित अनघ उदारा॥

कहते हैं, दुनिया में चार प्रकार के भक्त हैं। पहले, जिज्ञासु लोग, जो तलाश कर रहे हैं हकीकत को। दूसरे, अर्थार्थी लोग जो किसी गर्ज से प्रभु को याद करते हैं— यह मिल जाये, वह मिल जाये। तीसरे, अति दुखी और चौथे, ज्ञानी जो ज्ञान को पा गये। चार किस्म के भक्त हैं। कहते हैं ये चारों ही ‘नाम’ के जपने से सुखी हो गये। ज्ञानी बने तो वे भी ‘नाम’ के साथ लगने से। जो तलाश कर रहे हैं हकीकत को, उनको यह चीज़ मिल गई। जो दुखी हैं, उनकी पुकार सुनी गई। जो अर्थार्थी लोग हैं, उनकी इच्छायें पूरी हो गई ‘नाम’ के जपने से। चार ही चीज़ें हैं —धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन चारों के देने वाला है ‘नाम’। ‘नाम’ बड़ी ऊँची चीज़ है जिसकी समझ आम दुनिया को नहीं

आ रही। सिर्फ अक्षरी नामों का ही उनको बोध है, इस से परे नहीं।

(16) चहूं चतुर कहुं नाम अधारा। यानी प्रभुहि विसेषि पिआरा॥

कहते हैं कि चारों प्रकार के भक्तों का प्यारा ‘नाम’ है। उन सब का उद्धार ‘नाम’ से हुआ। गो (चाहे) भगवान को, कहते हैं, ज्ञानी ज्यादा प्यारा है। जो अनुभव को पा गया, वह प्यारा हुआ। सो कहते हैं, इन चारों प्रकार के भक्तों में से जो ज्ञानी हैं, वे ज्यादा प्यारे हैं भगवान को। मगर चारों किस्म के भक्तों को नाम प्यारा है, ज्ञानी को भी ‘नाम’ प्यारा है, बाकियों को भी।

(17) चहुं जुग चहुं श्रुति नाम प्रभाऊ। कलि विसेषि नाहिं आन उपाऊ॥

कहते हैं, चार युगों में, चारों श्रुतियों (वेदों) में ‘नाम’ ही का प्रभाव है। चारों वेद और सारे धर्मशास्त्र ‘नाम’ की महिमा गा रहे हैं। चारों युगों में ‘नाम’ की महिमा होती चली आ रही है।

एक नाम जुग चार उधारे॥

कहते हैं, चारों युगों में ‘नाम’ का प्रभाव रहा है। कलियुग में र्खास कर ‘नाम’ के बगैर और कोई उपाय नहीं है। चारों युगों में ‘नाम’ के बगैर और कोई उपाय नहीं है। मगर कलियुग में र्खास तौर पर ‘नाम’ ही एक उपाय है। कलियुग में आयु कम है, लोगों की बुद्धि कम है। इन्सान हृष्ट-पुष्ट नहीं रहे, वे लम्बे साधन — प्राण-योग, हठ-योग आदि क्रियायें आयु के लिहाज़ से थीं। सतयुग में, कहते हैं, लाख वर्ष की आयु थी। थी या नहीं, इस से हमारी गर्ज़ (झगड़ा) नहीं, ऐसा बयान किया जाता है। यह भी बयान आता है, फलाने ऋषि ने अठासी हज़ार वर्ष तप किया, फलाने ने इतने हज़ार वर्ष तप किया। भई, यह हो सकता है लाख वर्ष की उम्र हो। त्रेता में कहते हैं, दस हज़ार वर्ष की रह गई। द्वापर में, कहते हैं, एक हज़ार वर्ष की उम्र रह गई। कलियुग में सौ

वर्ष की उम्र कहते हैं मगर पचास - साठ वर्ष से ज्यादा नहीं है। बताओ ऐसी हालत में हम ऐसे लम्बे साधन कहाँ कर सकते हैं? सो कहते हैं, कलियुग में नाम के सिवाय और कोई साधन नहीं। गुरवाणी में भी आया है -

अब कलु आयो रे, कलु आयो, नाम बोवो, नाम बोवो॥
आन रुत नाहीं नाहीं, मत भरम भूलो, नाम बोवो॥

कितना साफ़ बयान किया है। भई, कलियुग में सिवाय नाम के और कोई उपाय नहीं। यही तुलसी साहब फरमा गये। यही गुरु साहब फरमा गये।

(18) दोहा - सकल कामना हीन जे राम भगति रस लीन।
नाम सुप्रेम पियूष हृद तिन्हुं किए मन मीन॥

कहते हैं, गर्जे (इच्छाओं) से रहित होकर जो नाम जपते हैं चार गर्जे (कामनाएँ) हैं— कोई बीमारी के इलाज के लिए नाम जपता है, कोई रूपये के लिए, कोई मान-बड़ाई के लिए और कोई मोक्ष की प्राप्ति के लिए। तो कहते हैं, जो चारों गर्जे से रहित हो कर नाम जपते हैं, वही सच्चे मायनों में उस की भक्ति का रस लेते हैं। जैसे मछली पानी के बिना नहीं रह सकती, पानी उसका जीवनाधार है, ऐसे ही नाम उसका जीवनाधार बन जाता है, वह उसके बिना रह नहीं सकता। गुरु नानक साहब ने कहा है:

आखण औरवा साचा नाउ॥

कि जब जब मैं उस को याद करता हूँ, मुझे ज़िन्दगी मिलती है। मगर नाम लाबयान है, यह अनुभव की चीज़ है। जब इसका contact (संपर्क) मिले, वह चीज़ मिलती है। इस से पहले नहीं मिल सकती।

(19) अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा। अकथ अगाध अनादि अनूपा॥

आगे, अब बयान करते हैं कि निर्गुण और सगुण दोनों ब्रह्म के स्वरूप हैं। दोनों अकथ हैं, कहने में नहीं आ सकते। लाबयान हैं, गम्भीर हैं, अनूप हैं, अनादि हैं, ला-मिसाल हैं। अब उन से कोई पूछे कि आप की क्या राय है? 'नाम' की महिमा गा रहे थे आप! आप की राय में सगुण और निर्गुण में से कौन सी चीज़ बढ़ कर है? आगे फरमाते हैं -

(20) मेरें मत बढ़ नाम दुहू तें। किए जेहिं जुग निज बस निज बूतें॥

कहते हैं, मेरी समझ में 'नाम' दोनों से बढ़ कर है। मेरी मति अनुसार, जिस चीज़ को मैंने समझा है, उसके अनुसार निर्गुण और सगुण इन दोनों से 'नाम' ऊँचा है क्योंकि दोनों की कट्टोलिंग पावर है यह। निर्गुण और सगुण में इज़हार किस का है? यही, 'नाम' का है।

नानक नावें के सब कुछ वस है पूरे भाग को पाये॥

नाम कट्टोलिंग पावर है। बड़े ऊँचे भाग्य हों तो इस से ताल्लुक हो। 'नाम - पावर' निर्गुण और सगुण दोनों का इज़हार करने वाली है। 'नाम - पावर' निर्गुण और सगुण दोनों को कट्टोल करने वाली ताकत है। इस लिए 'नाम' दोनों से बढ़ कर है। मज़मून बड़ा बारीक है मगर बड़ी खूबसूरती से बयान कर रहे हैं।

(21) प्रौढ़ि सुजन जनि जानहिं जन की। कहउं प्रतीति प्रीति रुचि मन की॥

कहते हैं, प्रौढ़ि सज्जन जो हैं, जो दूसरों के दिल की बात को जान लेते हैं, 'जाने जन जन की,' जो लोगों के दिल की बात जानने वाले हैं, उनकी बात वे जानें। मेरे मन को प्रीति और प्रतीति है, जो प्रतीति मुझे हुई है, मैं तो उसके अनुसार बयान कर रहा हूँ।

(22) एकु दारुगत देरिविअ एकू। पावक सम जुग ब्रह्म बिबेकू॥

कहते हैं, जैसे आग लकड़ी में छुपी है। आग ज़ाहिर है मगर लकड़ी में छुपी हुई आग लकड़ी से अलग नहीं। आग और लकड़ी हैं दोनों एक ही, ऐसे ही सगुण और निर्गुण दोनों ब्रह्म के स्वरूप हैं। सगुण भी वह है, 'सोही सूक्ष्म, सोही स्थूल।' वही सगुण है, वही निर्गुण है। दोनों ही औसाफ (गुण) हैं। दोनों की जो **background** है, जो आधार है दोनों का, उस से हमारी मुराद (अभिप्राय) है। सो कहते हैं, इन्सान उस को जान जाये तो उस की गति हो सकती है नहीं तो यह सिफ्टों में लगा रहेगा और जन्म-मरण में आता रहेगा, इसका आना-जाना बना रहेगा।

(23) उभय अगम जुग सुगम नाम तें। कहेतं नामु बङ् ब्रह्म राम तें॥

अब कहते हैं, निर्गुण और सगुण दोनों का साधन कठिन है। 'नाम' का साधन आसान है, क्यों? 'नाम' के ज़रिये से ही निर्गुण और सगुण दोनों की समझ आती है। 'नाम' की समझ न हो तो निर्गुण और सगुण की हकीकत समझ नहीं आती कि वह क्या चीज़ है? एक मशीनरी चल रही है, कहीं पेवे बना रही है यानी रूई को अलेहदा कर रही है, कहीं धागे बँट रही है। यह तो बाहरी सिलसिला हुआ न! अब इस की समझ तब आती है जब **background** समझ में आये। उसकी समझ न हो तो कुछ समझ नहीं आता कि वह क्या है, क्यों चल रहा है, क्यों बन्द हो जाता है? सो कहते हैं, ये जो बाहर चीज़ें हैं, उनके समझने के लिए भी नाम जब तक न हो, ठीक समझ नहीं आती। इन्द्रियों के घाट से ऊपर ला कर कोई महात्मा अन्तर 'नाम' का ताल्लुक (अनुभव) दे देता है तो इसको (निर्गुण और सगुण की) समझ आने लगती है। जैसे पावर हाऊस से इन्सान लग जाये तो सारी मशीनरी की, कि वह कैसे चलती है, कैसे काम करती है, उसकी सारी

समझ उसे आने लगती है। ऐसे ही नाम से निर्गुण और सगुण दोनों की समझ आने लगती है।

(24) व्यापकु एकु ब्रह्म अविनाशी। सत चेतन घन आनन्द रासी॥

कहते हैं, वह मालिक व्यापक है। वह घट-घट में, ज़र्रे-ज़र्रे में समाया हुआ है। वह अविनाशी है, सच्चिदानन्द है, आनन्द का खजाना है, वह सब में व्याप रहा है। कोई ऐसी जगह नहीं, जहाँ 'नाम' न हो।

जेता कीता तेता नाऊं। बिन नावें नाहीं को थाऊं॥

कि यह जितना किया हुआ पसारा है, सब 'नाम' का है, कोई जगह इससे खाली नहीं। कोई ऐसी जगह नहीं जहाँ 'नाम' न हो।

(25) अस प्रभु हृदयं अछत अबिकारी। सकल जीव जग दीन दुखारी॥

हैरानी की बात है, वह परमात्मा सब में व्याप रहा है, फिर भी दुनिया के लोग दुखी हैं। जब वह प्रभु सब में है तो लोग दुखी क्यों हैं? आगे बतलाएंगे कि वे दुखी क्यों हैं? वह (प्रभु) है तो सब में, घट-घट में व्याप्त है, वह ज़र्रे-ज़र्रे में समा रहा है। हम उस में इस तरह तैर रहे हैं जैसे मछलियाँ पानी में मगर पानी में रहते हुए सब प्यासे मर रहे हैं, इसका कारण क्या है? आगे जवाब देते हैं—

(26) नाम निरूपन नाम जतन तें। सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें॥

कहते हैं, इसका सबब (कारण) यह है कि नाम का जो असल रूप है, उसे यत्न कर के प्रकट किया जाये। वह प्रकट करने वाली चीज़ है। लकड़ी में आग है, अगर प्रकट कर लो उसे तो वह जलाती है और दूसरे काम भी करती है। तो है तो सही नाम मगर उसे प्रकट करना होगा। वह गुप्त रूप में है सब में, 'गुप्त नाम परगाजा,' यह गुरवाणी कहती है—

गुप्ती बाणी प्रकट होवै॥

वह गुप्त है, उसको प्रकट करने के लिए थोड़ा यत्न करना पड़ता है, थोड़ा काम करना पड़ता है। जब प्रकट हो जाए तो उस की कीमत बढ़ जाती है वरना वह पत्थरों में शामिल है। बड़ी खूबसूरती से ज़िक्र कर रहे हैं कि वह नाम सब में परिपूर्ण है। फिर दुनिया हाय - हाय क्यों कर रही है? कहते हैं कि इसका कारण यह है कि उस नाम को प्रकट नहीं किया यत्न कर के। **Water, water everywhere but not a drop to drink.** पानी - पानी सारा जहान करता है, वह प्रभु सब जगह है, कहाँ नहीं? मगर हमें एक कतरा नसीब नहीं, हम प्यासे मर रहे हैं। तुलसी साहब फरमाते हैं—

है घट में सूखत नहीं लानत ऐसी जिन्द।
तुलसी या संसार को भया मोतियाबिन्द॥

यही भीखा साहब कहते हैं—

भीखा भूखा को नहीं, सब की गठरी लाल।
गिरह खोल नहीं जानते, ताते भये कंगाल॥

'नाम' रूपी लाल बँधा पड़ा है सब के पल्ले में पर उस में जड़ - चेतन की ग्रन्थी (गाँठ) बँधी पड़ी है। जब तक यह गाँठ न खुले हम भूखे के भूखे रह जाते हैं। दौलत के होते हुए भी हम भूखे हैं। नाम को पाकर हम सुखी हो जाते हैं। 'नाम' सब में परिपूर्ण है, फिर भी हम क्यों दुखी हैं? कहते हैं, इसका कारण यह है कि हम ने उसे प्रकट नहीं किया।

(27) दोहा - निरगुन तें एहि भाति बड़ नाम प्रभाउ अपार।
कहउं नामु बड़ राम तें निज बिचार अनुसार॥

कहते हैं, निर्गुण से 'नाम' का प्रभाव बड़ा है। नाम ऊँचा है उससे, यह सबब दिया। कहते हैं, सारी बात समझाने के बाद, कि मैं अपने

विचार के अनुसार, अपनी समझ के मुताबिक ऐसा कहता हूँ। लोगों को भी पूरा हक दिया है तर्क का। कहते हैं, मैं अपनी समझ के अनुसार 'नाम' को 'राम' से बड़ा कहता हूँ। 'राम' और 'नाम' का मुकाबला कर रहे हैं। एक अक्षरी नाम है, एक रम रही ताकत का नाम है। आगे फिर और कहते हैं, 'राम' और 'नाम' का मुकाबला करेंगे आगे। 'नाम' को 'राम' से बड़ा करके बतलाया है अपनी समझ के अनुसार। अब मुकाबला करते हैं। कहते हैं, भक्तों के फायदे के लिए कहो, उन्हें सुख देने के लिए कहो, राम ने शरीर धारण किया और लोगों का, साधुओं का दुख भिटाया। अवतारों का काम यही है। जब जब धर्म की ग्लानि होती है वे दुनिया में आते हैं। शहर में गड़बड़ हो जाए तो फौज के कंट्रोल में दे दिया जाता है। फिर दो चार दिन में सब सैट कर के फिर सिविल के हवाले कर दिया जाता है। इसी तरह जब जब धर्म की ग्लानि होती है, दुनिया में दुख बढ़ जाते हैं, वह ताकत इज़हार कर के किसी पोल पर बैठती है। राम अवतार आये दुनिया में, अधर्मियों को दंड देने के लिए। ये राम की तारीफ कर रहे हैं। राम जो राजा दशरथ के बेटे थे, चौदह कला सम्पूर्ण अवतार, ये उनकी तारीफ कर रहे हैं क्योंकि दोनों का इज़हार एक दूसरे के ऊपर है। सन्तों के राम और आम दुनिया के राम में बड़ा फर्क है।

एक राम दशरथ का बेटा। एक राम घट घट में पैठा॥

एक राम का सकल पसारा। एक राम सबहूँ ते न्यारा॥

सबहूँ ते न्यारे राम का, राम जो इज़हार में है, उससे मुकाबला कर रहे हैं।

(28) राम भगत हित नर तनु धारी। सहि संकट किए साधु सुखारी॥

(29) नाम सप्रेम जपत अनयासा॥ भगत होहिं मुद मंगल बासा॥

कहते हैं, जो प्रेम के साथ नाम को जपते हैं, बिना तकलीफ के मंगल के, खुशी के मुकाम (स्थान) को पा जाते हैं। मंगल कहते हैं खुशी के मुकाम को।

(30) राम एक तापस तिय तारी। नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥

कहते हैं, भगवान राम के जीवन का वाकेआ बयान किया जाता है कि अहित्या जो पत्थर हो गई थी, उसे पैर छुआ कर ज़िन्दा कर दिया राम ने, एक का उद्धार कर दिया और नाम ने गये—गुज़रे, बुरे से बुरे इन्सानों का, करोड़ों पापियों का उद्धार कर दिया। नाम बड़ा हुआ कि नहीं? असल बात क्या है कि नाम उस पावर का, ताकत का नाम है जो सबको बनाने वाली है। अवतारों को बनाने वाली भी है और सन्तों को बनाने वाली भी है। बिजली एक ही है, कहीं वह आग जला रही है और कहीं बर्फ जमा रही है। बिजली वही है, उसके इज़हार में फर्क है। कहीं अवतारों का काम कर रही है वह ताकत, कमांडर—इन—चीफ का काम कह लो, मिलिट्री का काम कह लो वह काम कर रही है और कहीं वह वायसराय का काम कह लो, सिविल का काम कह लो, वह कर रही है। दोनों की **background**, (आधार) एक ही ताकत है। कबीर साहब ने इसका निर्णय किया है।

काल अकाल खसम का कीना एह प्रपञ्च वधावन॥

अर्थात् काल पावर और अकाल—पावर दोनों ही उस खसम (मालिक) की बनाई हुई हैं क्योंकि यह प्रपञ्च बनाना था। तो पावर जो आधार है, जो **background** (आधार) है, वह तो एक ही है, उसके काम में फर्क है। कमांडर—इन—चीफ का अपना काम है, सिविल का अपना काम है। पापियों को दंड देने के लिए, धर्मियों को उबारने के

लिए वह मिलिट्री पावर काम करती है। और सन्तों का क्या काम है? सुरत को मन—इन्द्रियों की कैद से छुड़ा कर लोगों को प्रभु से जोड़ना। अवतारों का काम है दुनिया को बाकायदगी में ला कर उस का स्थापन करना ताकि वह आबाद रहे और सन्तों का काम दुनिया को, क्या कहना चाहिए, उजाड़ना है। सुरत, मन—इन्द्रियों के घाट के ऊपर आ कर नाम से लग गई तो वह दुनिया में क्यों आयेगी? दुनिया तो उजड़ गई।

काल और दयाल दोनों ताकत कहाँ से लेते हैं? एक ही मालिक से। आजकल कोई दयाल के पक्ष में है, कोई काल के पक्ष में है। अरे भाई! दोनों की ज़रूरत है अपनी—अपनी जगह, सुपरिटेंडेंट ऑफ पुलिस बैठा हो, हम कुछ न करें तो वह हमें कुछ नहीं कहेगा। अगर कोई तंग करे तो कौन हमें बचायेगा, वह सुपरिटेंडेंट आफ पुलिस और उसका महकमा। सो दोनों की अपनी—अपनी जगह ज़रूरत है दुनिया के लिए, बाकायदगी के लिए, दोनों ताकतों का इज़हार हो रहा है। हमारे दिल में दोनों के लिए इज़ज़त है। सन्तों की गर्ज़ यही है कि इन्सान का आने—जाने का झगड़ा न रहे। सुरत पिंड से यानी इन्द्रियों के घाट से आजाद हो जाये। इस का जन्म—मरण खत्म हो जाये, यह हमेशा की राहत (शान्ति) को पा जाये। इस काल के देश को बहुत बुरा कहा गया है। इस में रहते हुए काल से निकल कर अकाल से जुड़ कर, फिर उससे भी परे दोनों का जो आधार है, उसको पाना है हमने। उसे स्वामी—पद कहते हैं। गुरु साहबों ने उसे महा—दयाल कह कर बयान किया है। बात एक ही है, सिर्फ तरीका बयान का है अपना—अपना। बात एक ही है, कशमकश (झगड़ा) कहीं नहीं। सिर्फ समझने में फर्क है।

(31) रिषि हित राम सुकेतुसुता की। सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी॥

फिर कहते हैं कि राम ने ऋषियों की भलाई के लिए विश्वामित्र के यज्ञ में गड़बड़ डालने वाली ताढ़का राक्षसनी को मारा। उस के बेटे मारीच को कत्त्व किया ताकि ऋषि-मुनि सुख से रहें और नाम ने क्या किया? सो कहते हैं—

(32) सहित दोष दुर्ख दास दुरासा। दलइ नामु जिमि रवि निसि नासा॥

कहते हैं, ‘नाम’ ने क्या किया कि भक्तों की बुरी वासना के जो दोष थे, गिरावट थी जितनी, पाप थे, उन सब का नाश कर दिया। जैसे सूरज के चढ़ने से अँधेरा खत्म हो जाता है, इसी तरह नाम के साथ लगने से सब आलायशें (मैलें) खत्म हो गई। ज्ञान-रूपी अग्नि कह लो, ‘नाम’ की ज्वाला कह लो, उस से लगने से सब आलायशें हवन हो जाती हैं।

(33) भंजेत राम आपु भव चापू। भव भय भंजन नाम प्रतापू॥

अब भगवान राम का ज़िक्र आता है कि उन्होंने शंकर के ज़बरदस्त धनुष को तोड़ा था। इस तरफ नाम का प्रताप क्या करता है? जग के भय का नाश करता है। भय की कमान, जिसने जगत को जकड़ रखा है, उसे तोड़ देता है। ‘नाम’ से लग कर इन्सान निर्भय हो जाता है।

(34) दंडक बन प्रभु कीन्ह सुहावन। जन मन अमित नाम किए पावन॥

राम के बारे में ज़िक्र आता है कि वे दंडक वन में गये, वह अच्छी जगह बन गई। कहते हैं, नाम ने भक्तों के मन को गुलज़ार बना दिया। वे (राम) एक जगह रहे और उस जगह को गुलज़ार बनाया, ‘नाम’ ने दुनिया के भक्तों के दिलों को गुलज़ार बना दिया।

(35) निसिचर निकर दले रघुनंदन। नामु सकल कलि कलुष निकंदन॥

कहते हैं, राम ने जितने राक्षस थे, उनके वंश का नाश किया और

नाम ने कलियुग के सारे पापों का नाश कर दिया। जो ‘नाम’ से लगे, उन के सारे पाप नाश हो गये। आगे कहते हैं—

(36) दोहा - सबरी गीध सुसेवकनि सुगति दीन्हि रघुनाथ।
नाम उधारे अमित खल वेद बिदित गुन गाथ॥

(37) दोहा - ब्रह्म राम तें नामु बड़ बर दायक बर दानि।
रामचरित सत कोटि महं लिय महेस जियं जानि॥

फरमाते हैं, राम ने भीलनी के जूठे बेर प्रेम वश खाये और जटायु को, जो गिछ्ठ था, उसका कल्याण किया। रावण सीता को हर कर ले जा रहा था तो उस (जटायु) ने लड़ाई की थी उस से। इन दोनों की गति की राम ने। अच्छे भक्तों की गति की उन्होंने। ‘नाम’ ने अनेकों पापियों का उद्धार किया।

आगे फिर, कई मिसालें दी हैं कि राम ने विभीषण, हनुमान वगैरा को शरण दी और ‘नाम’ ने अनेकों गरीबों का उद्धार किया। राम ने समुद्र पर पुल बाँधा, ‘नाम’ ने लोगों को भवसागर से पार दिया। राम ने खानदान (कुटुम्ब) समेत रावण को मार दिया और ‘नाम’ को जिन्होंने जी करके जपा, उन्होंने बगैर किसी मेहनत के जगत के मोह माया को जीत लिया। सो कहते हैं, ‘नाम’ सब से बड़ा है।

(38) नाम प्रसाद संभु अविनासी। साजु अमंगल मंगल रासी॥

फरमाते हैं, ‘नाम’ के प्रसाद से, ‘नाम’ की बरकत से अविनाशी शिव जो हैं, जो बाहरी क्रियाओं के लिए, साँप आदि पास रखते हैं और श्मशान भूमि जिनके रहने का स्थान बताया जाता है, कहते हैं, ये साँप, राख, श्मशान भूमि आदि, जो अमंगल वस्तुएँ हैं, ‘नाम’ के जपने ने इन सब को मंगल रूप बना दिया।

(39) सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी। नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी॥

कहते हैं, शुक, सनक, सुनन्दन आदि जितने ऋषि - मुनि बने, वे सब 'नाम' की ब्रक्तव्य से बने। जितना - जितना वे 'नाम' से लगे, उतनी - उतनी उनकी गति हो गई, वे ब्रह्मानन्द के सुख को भोगते रहे। किस की कृपा से? 'नाम' की कृपा से।

(40) नारद जानेउ नाम प्रतापू। जग प्रिय हरि हरि हर प्रिय आपू॥

कहते हैं, नारद जो शिरोमणि भक्त थे, उन्होंने 'नाम' के प्रताप को जाना और जगत के प्यारे विष्णु जो थे, नारद उनके प्यारे बन गये। 'नाम' कोई आज नया नहीं, वह शुरू से है। जितनी - जितनी किसी को समझ आई इसकी, वे इसका इज़हार करते रहे। जिस जिस का कल्याण आज दिन तक हुआ, चाहे वह नारद मुनि हों या कोई और ऋषि, वह 'नाम' से हुआ। जितना - जितना वे 'नाम' से लगे, उतना उनका कल्याण हो गया। 'एक नाम जुग चार उद्धारे,' जितने भक्तजन बने वे 'नाम' ही की कृपा से बने।

(41) नामु जपत प्रभु कीन्ह प्रसादौ। भगत सिरोमनि भे प्रहलादौ॥

कहते हैं, 'नाम' के जपने से प्रभु इतने प्रसन्न हुए कि प्रह्लाद को शिरोमणि भक्त बना दिया। 'नाम' का इज़हार कोई आज नहीं हुआ। युगों - युगों से इसका इज़हार था। हम भूलते रहे, महात्मा आ कर इस तालीम को ताज़ा करते रहे। कबीर साहब ने अपनी कथा बयान की है कि मैं चारों युगों में आया। सतयुग में मेरा नाम 'सतसुकृत' था। फिर त्रेता में मैं आया, उस समय मेरा नाम 'करुणामय' था। फिर द्वापर में आया, उस समय मेरा नाम 'मुनेन्द्र' था। कलियुग में मेरा नाम 'कबीर' है। कहते हैं, चारों युगों में मैं लोगों को यही 'नाम' की महिमा समझाता रहा।

'नाम' हमेशा से है। कई भाई ख्याल करते हैं कि यह सिलसिला अभी शुरू हुआ है, पहले नहीं था। ऐसा, यह हमेशा से चला आ रहा है। बाकी वक्त और ज़माने के मुताबिक इसका इज़हार किया जाता है। दुनिया 'नाम, नाम' कहते हुए नाम से बेरवबर रहती है। महात्मा आ कर इसे ताज़ा कर जाते हैं। हम भूलते रहते हैं, वे आ कर हमें रास्ते पर डाल देते हैं और इस तालीम को फिर *revive* (ताज़ा) कर देते हैं, उसे ज़िन्दा कर जाते हैं, बात तो इतनी है।

(42) ध्रुव सगलानि जपेत हरि नाऊ। पायउ अचल अनूपम ठाऊ॥

कहते हैं, ध्रुव ने गुस्से में आ कर 'नाम' जपा था। वह घर से नाराज़ हो कर निकला था। राज्य किसी और को दे दिया गया। ये घर से निकल गये और 'नाम' जपने लगे। नतीजा क्या हुआ कि वे अचल मुकाम को पा गये, अटल भक्त बन गये। चाहे दुनिया से नफरत में आकर ध्रुव ने नाम जपा, पर जब वह दुनिया से उपराम हुआ तो अटल मुकाम को पा गया। किस की कृपा से? 'नाम' की कृपा से।

(43) सुमिरि पवनसुत पावन नामू। अपने बस करि राखे रामू॥

कहते हैं, पवन सुत हनुमान ने नाम का सुमिरन किया और राम को वश में कर लिया। नाम की महिमा है न! ये सब मिसालें किस लिए दे रहे हैं? कि ऐसा, जिस किसी का उद्धार होगा तो किस से? नाम से। सिर्फ नाम को समझने की बात है, 'नाम' और 'रूप' दोनों का जो आधार है, उस से लगने का सवाल है।

(44) अपितु अजामिल गजु गनिकाऊ। भये मुकुत हरि नाम प्रभाऊ॥

अब फरमाते हैं, अजामिल, गणिका आदि कितने ही पापियों का कल्याण हुआ, कैसे? 'नाम' से। गणिका जैसी बेसवा (वेश्या) और अजामिल जैसे पापी तर गये, 'नाम' के साथ लगने से। बड़े - बड़े पापी

नाम से लग कर तर गये। हम भी ‘नाम’ से लग जायें तो हमारा भी उद्धर होगा। गुरु रामदास जी ने एक ज़िक्र किया है कि अगर आप लकड़ियों के अम्बार में थोड़ी चिंगारी आग की डाल दें तो सारा अम्बार खत्म हो कर स्वाह (राख) का ढेर रह जाता है। ऐसे ही पापों के अम्बार लगे हों तो साधु से थोड़ी ‘नाम’ की लूटी (चिंगारी) लेकर लगा दो तो सारे पापों का नाश हो जाता है। ‘नाम’ की महिमा गा रहे हैं। आखिर क्या कहते हैं—

(45) कहाँ कहाँ लगि नाम बड़ाई। रामु न सकहिं नाम गुन गाई॥

कहते हैं, कहाँ तक ‘नाम’ की महिमा बयान की जाये, सच बात तो यह है कि भगवान राम भी ‘नाम’ के गुणों का बरवान नहीं कर सकते। एक जगह इज़हार हो रहा है उसका, एक पोल (रवभा) है, एक पावर हाऊस है बड़ा भारी। पोल की जितनी ताकत होगी, उतना ही इज़हार करेगा बिजली घर का, नहीं तो वह फट जायेगा। इन्सानी पोल पर जितना उस शक्ति का इज़हार हो सकता है, उतना ही होगा। वह पूरी ताकत का इज़हार नहीं कर सकेगा और यह बयान में आने वाली चीज़ नहीं। वह तो ला-बयान है, इसमें राम की हेठी (नीचे बताने) का सवाल नहीं किसी तरह से। इसमें राम की बड़ाई है। जितनी शक्ति का वह पोल होगा, उतना ही इज़हार होगा उसमें। इन्सान उसको क्या बयान कर सकता है? जितनी ग्रन्थ - पोथियाँ, वेद - शास्त्र आये, उसकी महिमा बयान करते रहे। गुरु नानक साहब फरमाते हैं, कितने ही ऋषि, मुनि, महात्मा उसकी महिमा गाते रहे, इतने ही और भी आ जायें उसकी महिमा करने वाले, तो भी ‘आख न सके केही के’। वह ला-बयान ही रहेगा।

(46) दोहा- नामु राम को कलपतरु कलि कल्यान निवासु।
जो सुमिरत भयो भांग ते तुलसी तुलसीदासु॥

फरमाते हैं, जो ‘राम - नाम’ है, जो रमा हुआ ‘नाम’ है, वह कल्प वृक्ष है और कलियुग में कल्याण का निवास है, कलियुग में इसके सिवा और कोई कल्याण नहीं। इसके (नाम के) सिमरन करने से जो गरीब तुलसी था, तुलसीदास बन गया। किस की महिमा से? ‘नाम’ की महिमा से। ‘नाम’ की बड़ी भारी महिमा है। ‘नाम’ की महिमा आगे भी आ रही है। यह तो ‘रामायण’ में से, जो हिन्दुओं की एक मुस्तनिद (प्रमाणिक) किताब, एक बड़ा उच्च प्रमाणिक धर्म ग्रन्थ है, उसमें बताया गया था कि वे भी इसी की, नाम की, महिमा गा रहे हैं, तुलसीदास जी इसमें भी नाम की महिमा गा रहे हैं, सब सन्त - महात्मा ‘नाम’ की महिमा गाते चले आ रहे हैं। अरे भई, छोटी - छोटी बातों पर न चले जाओ। अपराविद्या (समाज - धर्म) अपनी - अपनी रहे। जिस समाज में तुम पैदा हुए, वे समाज तुम्हें मुबारिक हों। हमने किसी न किसी समाज में रहना है। सो अपने - अपने समाज में रहो और उस समाज के नियमों के मुताबिक जीवन बसर करो मगर जो नाम की गति है, उसे हासिल कर लो।

गुरु अर्जुन साहब ने गुरु ग्रन्थ साहब के लिए जो वाणी इकट्ठी की तो कौन सी - कसौटी सामने रखी? यही कि जो नाम के जपने वाले थे, जो उसके माहिर थे, उनकी वाणियाँ उसमें शामिल कर दीं। चुनांचे उसमें कबीर साहब जुलाहे की वाणी है, नामदेव छीपे की वाणी है, रविदास चमार की वाणी है, तरलोचन ब्राह्मण की वाणी है। उसमें धन्ना जाट और सेना नाई के भी श्लोक हैं। गुरु साहिबान खत्री थे। अरे भई, खत्री, ब्राह्मण, जाट हमने बनाये हैं। परमात्मा ने किसी को मोहर लगा कर तो नहीं भेजा कि ये सब जाट हैं, ये ब्राह्मण हैं, ये खत्री हैं?

परमात्मा ने तो इन्सान बनाये। इन्सान आत्मा देहधारी का नाम है, आत्मा उस परमात्मा की अंश है। इसकी जाति वही है, जो परमात्मा की है। हजूर (बाबा सावन सिंह जी) से एक बार पूछा गया कि महाराज आप कौन हैं? उन्होंने फरमाया कि परमात्मा हिन्दू है तो मैं हिन्दू हूँ। आत्मा की जाति वही है जो परमात्मा की जाति है। बाकी सामाजिक लिहाज़ से मैं सिख हूँ।

हमें किसी न किसी समाज में रहना पड़ेगा वरना नया समाज बनाना पड़ेगा। क्यों वक्त ज़ाया करते हो? परमात्मा ने कर्मों के अनुसार जिस समाज में पैदा किया, उसमें रहो, सदाचारी बनो। नेक - पाक जीवन बसर (व्यतीत) करो, उस समाज में रहते हुए और उसके नियमों का पालन करते हुए, अपनी आत्मा को मन - इन्द्रियों से आज़ाद करके उसे नाम से लगाओ। वही समाज मुबारिक है जिसमें रह कर यह काम कर लो। नाम के साथ लगने से ही तुम्हारा कल्याण होगा। वही बाहरी समाज मुबारिक है जहाँ बैठ कर तुम यह काम कर सको। सन्तों के नज़दीक समाजों का सवाल नहीं। वे कहते हैं, इन्सान आत्मा देहधारी है, वहाँ ऊँच - नीच का भी सवाल नहीं। वे कहते हैं:

मानुस की जाति सबै एके पहचानबो॥

पूर्व - पश्चिम का सवाल नहीं, न उत्तर - दक्षिण का सवाल है। इन्सान आत्मा देहधारी है लेकिन यह अपने आप को भूल गया है। इसे होश नहीं कि वह जिस्म नहीं, जिस्म का मकीन (निवासी), उसे चलाने वाला है। सो यहाँ अपने आप को जानने का सवाल है। सन्तों की हमेशा से यह तालीम रही है, यही नाम की तालीम, यही मुसलमान फकीरों का 'कलमा' है। 'कलमे' से चौदह तबक बने, मुसलमानों के धर्म ग्रन्थ कहते हैं। 'कलमा' क्या है, क्या अक्षर है वह? कहते हैं—

ऐ खुदा बिनमा मारा आं मुकाम। कन्दरो बे हर्फ़ मी रोयद कलाम॥

कहते हैं, ऐ खुदा! मुझे वह मुकाम बता जहाँ बिना हर्फ़ों के तेरा कलमा उग रहा है। अब अक्षर बताओ कहाँ रह गये? 'कलमे' से चौदह तबक बने। ताकत बन गई न, अक्षर तो न रहा। हिन्दुओं का धर्म - ग्रन्थ कहता है, 'नाद' से चौदह भवन बने। इधर (गुरवाणी में) कहते हैं कि 'नाम' से खण्ड - ब्रह्मण्ड धारे गये, 'शब्द' से धरती और आकाश बने। इधर ईसाइयों के धर्मग्रन्थ में आया है कि 'Word' (शब्द) मालिक के साथ था, जब कुछ भी न था, तब भी 'शब्द' था, शब्द खुद खुदा था, सारी सृष्टि शब्द के पीछे बनी। यही गुरु साहब कह रहे हैं—

सगली सृष्टि शब्द के पाछे॥ नानक शब्द घटो घट आछे॥

'शब्द' कहो, 'नाम' कहो, 'अकथ - कथा', 'श्रुति' कहो। उपनिषदों में उसे 'उद्गीत' कहा है। सब महात्माओं ने 'नाम' की महिमा गाई है अपने अपने तरीके से। आज़ाद दिली से इनके कलाम पढ़ो तो करीब हो जाओगे एक दूसरे के। यह हमारी तंगदिली तास्सुब (कट्टरपन) है जिसने एक दूसरे को जुदा कर रखा है। यह एक common ground (सांझी जगह) है जहाँ आप बैठे हुए 'रामायण' की कथा सुन रहे हैं। यहाँ सब की वाणी, कभी गुरु साहिबान की और कभी स्वामी जी की वाणी ली जाती है। सन्तों की तालीम हमेशा से एक चली आ रही है। यह तालीम कोई आज की नहीं, परम्परा से चली आ रही है। यह एक खास मज़मून है। जैसे डाक्टरी है, ऐसे ही आत्म - विद्या का एक खास मज़मून है। किसी भी समाज में तुम रहो, वह समाज तुम को मुबारिक है मगर उस समाज में रहते हुए इतने ऊँचे उठ जाओ कि सारी दुनिया तुम्हारे लिए एक समाज बन जाये। सत्गुरु की तारीफ भी यही की है—

सत्गुर ऐसा जाणिये जो सबसे लिए मिलाए जीयो॥

वहाँ यह नहीं कि हिन्दू आयें, मुसलमान न आयें। वे समाजों की नज़र से नहीं देखते, वे (सन्तजन) सबको मिला कर बैठते हैं क्योंकि वे आत्मा की नज़र से दुनिया को देखते हैं। आत्मा को इन्द्रियों के घाट से ऊपर लाकर ‘नाम’ से जोड़ना उनका काम है। ‘नाम’ से जुड़ने में मनुष्य का कल्याण है। सन्तों के नज़दीक ऊंच नीच का कोई सवाल नहीं। वे किसी समाज से निकालते नहीं किसी को, न कोई नया समाज बनाते हैं। वे कहते हैं कि अपने अपने समाज में रहो, नेक-पाक जीवन व्यतीत करो और ‘नाम’ से लगो हमेशा के सुख के लिए। तो यह था ‘रामायण’ का एक शब्द, जहाँ तुलसीदास जी ने थोड़ा सा ‘नाम’ का निर्णय दिया है। उसमें से थोड़ा हिस्सा हमने लिया, सारा नहीं लिया।

भक्ति मार्ग ज्ञान मार्ग से उत्तम

(उत्तरकांड में गरुड़ - काकभुशुंडि संवाद)

मनुष्य जीवन पा कर सबसे बड़ा आदर्श प्रभु को पाना है। जो महापुरुष आये, सभी ने यही आदर्श पेश किया। यह काम हम केवल मनुष्य जीवन में कर सकते हैं, और किसी योनि में नहीं। तो महापुरुष आये, उन्होंने कई तरीके रायज़ (प्रचलित) किये। इन्सान जिस्म रखता है, बुद्धि रखता है और आत्मा रखता है। जिस्म करके कर्म - योग वगैरा मार्ग प्रचलित किये गए। बुद्धि करके ज्ञान - योग प्रभु को पाने का ज़रिया बना। तीसरे, आत्मा करके उसको पाने का यत्न किया है। ये तीन तरीके हैं जो महापुरुषों ने बयान किये हैं। जिस्म करके तो ताल्लुक है कर्म - योग का और वैराग का, समझे। बुद्धि कर के ज्ञान का और आत्मा करके ताल्लुक है परमात्मा का।

आत्मा परमात्मा की अंश है जिससे यह बिछुड़ी पड़ी है। हर एक जुज़ (अंश) अपने असल (स्रोत) से मिलना चाहता है। हमारी आत्मा चेतन स्वरूप है, महाचेतन प्रभु की यह अंश है, मन - इन्द्रियों के घाट पर धिरी पड़ी है। अगर यह इधर से आज़ाद हो जाये, इसकी कुदरती रगबत (लगाव) अपने असल की तरफ, परमात्मा को पाने की तरफ है। तो तीन ही तरीके रायज़ किए गए परमात्मा को पाने के। कर्म - योग भी आखिर कहाँ खत्म होता है? जहाँ selfless हो जाये, जब तक यह जानता है कि मैं करनेहार हूँ, मैं करता हूँ, नेक कर्म करे या बद कर्म करे, दोनों ही में इसको बन्धन है। तो भगवान् कृष्ण ने फरमाया, “नेक और बुरे कर्म दोनों ही जीव को बाँधने के लिए एक जैसे हैं जैसे सोने की बेड़ी (हथकड़ी) और लोहे की बेड़ी।”

जब एह जाने मैं किछु करता, तब लग गर्भ जून में फिरता।। भगवान कृष्ण ने गीता में कर्म योग का उपदेश दिया अर्जुन को, समझे मगर अर्जुन नेहकर्म न हो सका। जब महाभारत का युद्ध खत्म हो गया तो सिवाय युधिष्ठिर के, सबको नर्क दिखलाया गया, यह इतिहास में आता है। नेहकर्म कब होता है इन्सान? जब यह अन्तर की आँख खुले, यह देखे कि प्रभु ही सब कुछ कर रहा है, मैं नहीं कर रहा।

काठ की पुतली क्या करे बपुरी खिलावनहारो जाने।

समझे? यह कब बनेगा? जब यह co-worker, सहकार्यकर्ता बनेगा परमात्मा का, तो कर्म-योग, जब तक नेह कर्म न हो, बन्धन का कारण है, बड़ी साफ बात है। इस के बाद ताल्लुक (सम्बन्ध) है ज्ञान का, ज्ञान का ताल्लुक है बुद्धि विचार से, समझे। वह परमात्मा, उसके मुतल्लिक क्या बयान करते हैं? 'बृहदारण्यक उपनिषद' कहता है, "परमात्मा को बुद्धि के दायरे के अन्तर समझना इतना ही नामुमकिन है, दो मिसालें देते हैं, जैसे शराब के पीने से प्यास का बुझना नामुमकिन है, जैसे रेत में से तेल का निकलना नामुमकिन है इसी तरह बुद्धि के दायरे के अन्तर उसका लाना नामुमकिन है।" It is not subject of thought (यह बुद्धि का विषय नहीं)। "इन्द्रियाँ दग्न हों, मन खड़ा हो और बुद्धि भी स्थिर हो, तब आत्मा का साक्षात्कार होता है।" बुद्धि से inference(निष्कर्ष) निकाल सकते हो। इस के परे कुछ और होना चाहिए, इस नतीजे पर पहुँच सकते हो मगर प्रभु का पाना अभी दूर है। इन्सान के अन्तर में कई कोष हैं। एक तो अन्नमय कोष है, एक प्राणमय कोष है, मनोमय कोष है, आगे विज्ञानमय कोष है, ये सारे कोष हैं। आगे आनन्दमय कोष है, कई कोष हैं। तो जिस्म और प्राणों का ताल्लुक कर्म-योग से है। और ज्ञान-योग भी एक पर्दा है, यह सब राममयी है, यह नतीजा निकाला है, देखा तो नहीं न। देखना

किस का काम है? आत्मा का। आत्मा कब देखेगी? यह प्रेम का स्वरूप है। परमात्मा प्रेम है, आत्मा उसकी अंश है, यह भी प्रेम का स्वरूप है। तो प्रभु के पाने का ज़रिया (साधन) भी प्रेम ही है। प्रेम आत्मा के अन्तर कुदरती खासा (स्वाभाविक गुण) है।

प्रेम आत्मा के अस्तित्व में है। जब यह (आत्मा) बन्धनों से आजाद हो तो प्रेम उभर - उभर कर बाहर निकलता है। तो सारे महापुरुषों ने यह बयान किया है कि परमात्मा के पाने के दो रास्ते प्रचलित हैं— एक है ज्ञान-मार्ग और दूसरा है भक्ति-मार्ग। गीता में भगवान कृष्ण ने भक्ति-मार्ग को ज्ञान-मार्ग से श्रेष्ठ बतलाया है। आप पढ़िये गीता। उसके छठे अध्याय में कहते हैं, "इन सब योगियों में मैं उस को अच्छा और ऊँचा समझता हूँ जो मुझे घट में बसा कर श्रद्धा और भक्ति से मेरे ध्यान में, भजन में लगा रहे।" और नौवें अध्याय में तीसरे श्लोक में साफ-साफ कहा कि ज्ञान भी श्रद्धा के बगैर असंभव है, ज्ञान में भक्तिभाव न हो तो ज्ञान भी नहीं मिलता। तो इस लिए वह मालिक इंद्रियों करके नहीं जाना जा सकता और न ही बुद्धि विचार करके प्राप्त हो सकता है। वह केवल भक्ति करके ही पाया जा सकता है। सब जप तप भक्ति बिना थोथे हैं, यह गीता का सिद्धांत है और सारे महापुरुष यही कहते हैं। अब देखना यह है कि और महात्माओं ने क्या कहा? रामकृष्ण परमहंस थे, वे कहते हैं कि ज्ञान, वैराग और भक्ति ये तीन ही साधन हैं उसके पाने के। वैराग का ताल्लुक कर्मकांड से है, ज्ञान का ताल्लुक बुद्धि-विचार से है। 'सोचे सोच न होवई जे सोची लख बार।' It is not a subject of thought. 'लिखा लिखी की है नहीं, देखा देखी बात।' यह अनुभव करने का सवाल है। अनुभव कौन करेगी? आत्मा। कैसे करेगी? इसके अन्तर जो ज़ातियत में प्रेम शामिल है, (उस) प्रेम के ज़रिये। भक्ति कहो, प्रेम कहो, इश्क कहो, ये तीनों

एक ही के नाम हैं। जब तक यह अन्तर में, जो अब फैलाव में जा रहा है, यकसू (एकाग्र) न हो, जैसे एक नाली हो, उसमें नौ सुराख हों, उनमें पानी बह रहा हो, सुराख से एक एक कतरा बाहर बहता है, टपकता है। अगर सारे सुराख बन्द कर दो, एक सुराख खुला रहे, उससे फिर धार मार कर पानी निकलेगा, और भक्ति का खासा (गुण) है यकसूई (एकाग्रता)। प्रेम कहो, भक्ति कहो, बात वही है।

तो किसी समाज में रहो, अपनी जो फैलाव में आई सुरत है, यह जो प्रेम का स्वरूप है, बाहर जगह जगह पर लग रही है। अगर इसे समेट लो, एक जगह यकसू (एकाग्र) कर लो, यह overflow करेगी, उभर कर निकलेगी और वह जज्बा जो इसके अन्तर है, वह परमात्मा से मिलाने वाला है। तो भक्ति योग इसलिए सबसे ऊँचा माना गया है। रामकृष्ण परमहंस थे, वे फरमाते थे कि ज्ञान और वैराग, ये दो नौकर हैं, वज़ीर हैं प्रभु के दर पर और भक्ति उसकी स्त्री है। समझे? वज़ीर जब भी जाएगा मकान के अन्तर, बादशाह सोया है, जब तक बादशाह बुलाये नहीं, उसे इजाज़त नहीं, वह अन्तर जा नहीं सकता, बैठा इन्तजार करेगा। भक्ति उसकी स्त्री है, सातवें कमरे के अन्तर भी सोया हो, वहाँ भी जा पहुँचेगी। यह मिसाल दी है। तो मतलब क्या है कि भक्ति योग सबसे आसान है। इस से वह रसाई होती है जो किसी और ज़रिये से नहीं होती इतनी जल्दी। तो इसका मुकाबला 'रामायण' में, आगे यहाँ और महापुरुषों की वाणी लेते रहे हैं, आज आपके सामने 'रामायण' में से भक्ति और ज्ञान का मुकाबला पेश किया जायेगा। मज़मून बहुत लम्बा है। शायद आज थोड़ा भक्ति के मुतलिक बयान कर दिया जाये, फिर ज्ञान का मुकाबला करके आप खुद कहोगे कि भक्ति ऊँची है। भक्ति बगैर ज्ञान भी नहीं बनता, समझे? तो प्रसंग 'रामायण' का आ रहा है, गौर से सुनिए। हमारी धर्म पुस्तकों में इस बात

का उपदेश हमेशा से रहा है मगर हमने कभी उसको खोल कर देखा नहीं, बात तो यह है। तो यह कोई नया उपदेश नहीं। गीता ने, और - और महापुरुषों ने इस को पेश किया है। तो इस वक्त 'रामायण' से आपके सामने यही मज़मून पेश किया जाएगा कि भक्ति और ज्ञान में क्या भेद है और भक्ति की महिमा क्या है और ज्ञान क्या है? गौर से सुनिए।

(1) जे असि भगति जानि परिहरहीं। केवल ग्यान हेतु श्रम करहीं॥

फरमाते हैं, कि 'जे असि भगति जानि परिहरहीं,' जो लोग भक्ति को छोड़ देते हैं और समझते हैं कि ज्ञान ही से प्रभु पाया जा सकता है, उनकी क्या गति है, मुकाबला करेंगे। लोग यह जानते हैं कि भक्ति कुछ नहीं, ज्ञान ही सब कुछ है, ज्ञान के बगैर गति नहीं, तो कहते हैं कि ऐसे लोग जो जानते हैं, उनकी क्या गति है? मिसाल आगे फरमाएँगे।

(2) ते ज़़ कामधेनु गृह त्यागी। खोजत आकु फिरहिं पय लागी॥

कहते हैं, घर में कामधेनु हो, वह छोड़ कर आक के दूध को आकाश में ढूँढते फिरें, ऐसी मिसाल है। कामधेनु तो यहाँ हो, भक्ति कामधेनु है, कामधेनु क्या है? जो चीज़ माँगो, मिलती है। भक्ति एक आ जाये, ज्ञान उपज आता है। भक्ति एक आ जाये, सबसे ला - ताल्लुक हो जाता है, बैरागी हो जाता है। प्रेमी सच्चा बैरागी है, प्रेमी सच्चा एकान्ती है, (उसको) बैराग करने की ज़रूरत नहीं। ये सारे फल भक्ति में आ जाते हैं। तो यह ऐसे हैं जैसे कामधेनु को छोड़ कर आकाश पर आक के दूध को ढूँढता फिरे। यह तुलसीदास जी की वाणी है। आगे बयान करेंगे। असल बात क्या है कि भक्ति कैसे उत्पन्न हो, भक्ति के मायने हैं प्रेम। समझे? यह भक्ति संस्कृत धातु 'भज' से

निकलता है। 'भज' के मायने हैं भजना, सेवा या आराधना करना, पूजना। किसी महापुरुष में, जो आपसे ज्यादा गुणवान हो, दिली रजामन्दी और रगबत (लगाव) के साथ अपनी तवज्जो कायम करने, उसके साथ जुड़ने का नाम भक्ति है, दिली भाव से। तो ऐसे महापुरुष में जो अपने आप से ज्यादा गुणवान हो, के प्रति दिली भाव रखना यह है भक्ति का इज़हार। यह भक्ति कैसी है? इसका रूप क्या है? गुरु नानक साहब पहली पातशाही ने फरमाया—

आपै भक्ति भाओ तूं आपे मेल मिलाये॥

हे प्रभु! तू आप ही भक्ति का स्वरूप है, **God is love**, परमात्मा प्रेम है और आप ही प्रेम ही के ज़रिये अपने साथ मिलाता है। प्रेम एक कुदरती खासा (गुण) है, **innate**, ज़ातियत (निज - अस्तित्व) में शामिल है, हर एक इन्सान के अन्तर इसका खासा (गुण) है, कहीं न कहीं लग कर रहेगा। इस वक्त कहाँ लगा पड़ा है? जिस्म के साथ, बाल - बच्चों के साथ, रूपये - पैसे - जयदादों के साथ। **misfit** हो (गलत जगह लग) रहा है। ये चीज़ें बदल रही हैं। जितनी देर इनसे जुड़ा रहे, यह सुखी। जब वह हटे या ये हटा ली जायें, उखड़ने पर दुखी। तो महापुरुष यह कहते हैं कि ऐसे से भक्ति पैदा करो, जो फना से रहित है।

मीराबाई सदा सुहागण, वर पायो अविनाशी।

ऐसा वर मिल गया जो हमेशा अविनाशी है। तो इस लिए सब महापुरुष यही कहते हैं, 'हर भक्ति हर का प्यार है।' हरि की भक्ति किस को कहते हैं? हरि का प्यार दिल में आना, 'जे गुरुमुख करे विचार।' यह भक्ति प्यार कैसे मिल सकता है? अगरचे गुरुमुख हो कर इसका विचार करें। मनमुख का प्यार मन - इन्द्रियों के घाट पर बाहरी

फैलाव में रहेगा। अगर गुरुमुख होकर करोगे, वह कहेगा कि तुम्हारी आत्मा प्रभु की अंश है, प्रभु से प्यार करो। यही भक्ति, माफ करना, अगर **misfit** हो जाये, (गलत जगह लग जाए) तो हमें दुनिया में लाने वाली है बार - बार।

हम दुनिया में बार - बार क्यों आ रहे हैं? हमारी मुहब्बत दुनिया में है, दुनिया के सामानों में है। अगर यही मुहब्बत गुरुमुख से बन जाये तो दुनिया में दोबारा क्यों आओगे? तुम्हारी आत्मा का आधार परमात्मा है। तुम्हारी आत्मा उसी की अंश है। इसको उस से जोड़ दो, तुम हमेशा के लिए सुखी हो जाओगे। नहीं तो क्या? गुरु अमरदास जी फरमाते हैं:

पाखण्ड भगत न होवर्ड दुविधा होर खुवार॥

यह दिखावे का मज़मून नहीं, यह दिल का सवाल है। जिस के दिल में भक्ति हो, उस की आँखों से भक्ति टपकती है। उस की याद करने से बेअरिष्ट्यार दिल भर आता है, आँसू बहने लग जाते हैं।

जोपै मुख बोले नहीं आँख देत हैं रोय।

यह निशानी है भक्ति की। भक्ति कहो, प्रेम कहो। वह ऐसी बाहरी दिखावे की भक्ति नहीं माफ करना, सिर मारने का नाम भक्ति नहीं। भक्ति का ताल्लुक हमारी आत्मा से है, समझे? ज्ञान का ताल्लुक हमारी बुद्धि से है। कर्म, वैराग, यह वह का ताल्लुक हमारे जिस्म से है, भक्ति का आत्मा से। आत्मा का दर्जा दोनों से ऊँचा है। उसी के आधार पर दोनों चीज़ें चल रही हैं, समझे। क्योंकि भक्ति का ताल्लुक सीधा आत्मा से है, जो इसका आपा है, ज़ातियत है। इस लिए वह सब से बड़ा साधन है। भक्ति वह साधन है जिसे कर के रुह ऊँची हो कर प्रभु में जा समाप्ति है, यह कह दो। जब प्रेम उभर आता है तो बाहरी जिस्म - जिस्मानियत के ख्याल, मैं तू के ख्याल, ऊँच - नीच के ख्याल

सब हट जाते हैं। प्रेम भाव, भक्ति भाव दुनिया में देखो, राजाओं को तरक्त से उतार कर तरक्ते पर बिठा देता है, देख लो।

भक्ति एक बड़ा ऊँचा जज्बा (भाव) है। यह हमारी आत्मा को इतना ऊँचा करता है कि प्रभु में समा सकता है और प्रभु अलौकिक मण्डलों से उतर कर रुह में आ समाता है। जिस को रखोगे दिल में, कशिश होगी कि नहीं। ‘रखो किसी को दिल में, बसो किसी के दिल में।’ जिस को अपने दिल में बसाओगे, बार-बार उस की भक्ति होगी। प्यार का खासा (गुण) क्या है? लगातार याद, समझे? जिस की लगातार दिल में याद हो, प्रतिक्रिया होगी कि नहीं? एक तो आत्मा को बाहरी ताल्लुकात से यह उभार देता है, रुह परवाज़ (उड़ान) करती है। जहाँ एक जगह लगन लगी हो न, हज़ारों से बैराग हो जाता है, हज़ारों में बैठा एकांती हो जाता है। तो बाहर फैलाव से हट कर, यकसूई (एकाग्रता) में आकर इस में उभार पैदा होता है, प्रभु में जा समाती है और जिस की याद दिल में बसाता है बेअख्तियार, तो प्रभु उसकी आत्मा में अलौकिक मण्डलों से उतर कर इस में इज़हार करता है, overflow करता है।

नारद जी बताते हैं कि भक्ति ईश्वर के लिए परम प्रेम है। वह प्रेम का रूप है परमात्मा। परमात्मा खुद प्रेम है, प्रेम है तो हमारी ज्ञातियत (निज अस्तित्व में) में शामिल, हमारी आत्मा में रचा-बसा है मगर फैलाव से हटे तो इसमें प्रेम overflow करेगा (उभरेगा) अपने आप। हर एक चीज़ अपने असल की तरफ जाना चाहती है। एक बत्ती लो, उसको जला लो, उसका शोला, लौ उसकी ऊपर को जायेगी क्योंकि उसका मम्बा (स्रोत) सूरज ऊपर है। उलटा करो तो भी शोला ऊपर जायेगा। तो आत्मा प्रभु की अंश है, अगर बाहर से हट जाये तो इसका रुख हमेशा ऊपर रहेगा। इसके बढ़ाने के लिए क्या काम करना होगा?

उभार की ज़रूरत है, थोड़ा आत्मा को उभार मिले। जो हमारी आत्मा इस वक्त फैलाव में जा रही है, इसको यकसू (एकाग्र) करने के लिए थोड़ा उभार चाहिए। यकसू होगी तो बेअख्तियार जितनी यकसूई में जायेगी, उतना प्रेम overflow करेगा (बढ़ेगा)। तो यही महापुरुषों ने बयान किया। रविदास जी साहब फरमाते हैं एक जगह, ‘साची प्रीत हम तुम स्यों जोड़ी’ और क्या ‘तुम संग जोड़ अवर संग तोड़ी।’ समझे? उसका नतीजा आखिर क्या हुआ? ‘भक्तन स्यों बन आई,’ भक्ति या प्रेम भक्तों का ही काम है। ‘तन मन गलत भये ठाकुर स्यों आपन लये मिलाई,’ मन तन धन सब उसी की याद में हवन हो गया। क्यों? तन मन की सुध न रही। यह भक्ति का खासा है। जब ऐसी भक्ति overflow करे तो इन्सान के अन्तर जो यह हद में है न वह बेहद में मिलने का ज़रिया बन जाता है। इस लिए सब महापुरुषों ने, जब उसका (प्रभु का) जज्बा उनके अन्तर उभार में आया है, तो क्या फरमाया, ‘मो लालन स्यों प्रीत बनी।’ हे प्रभु, जब प्रीति बन गई, ‘तोरी न टूटे।’ और क्या कहते हैं? ‘छोरी न छूटे, ऐसी माधो खींच तनी।’ जब छोड़ने लगे तो छूट नहीं सकती, तोड़ने से टूट नहीं सकती। अरे, जहाँ प्रेम लग कर टूट गया, वह प्रेम नहीं है। समझे मेरी बात? वह तो व्यापार है। हमारे लोगों का प्रेम क्या है, माफ करना? किसी से प्रेम बना, जब तक किसी से गर्ज़ हुई, प्रेम है, न रही तो कैसा प्रेम? भक्ति आत्मा का खासा (गुण) है, जब इस (प्रभु) में उभार करती है तो प्रभु के साथ प्रेम हो जाता है। अगर दुनिया में काम करता भी है इन्सान तो उस (प्रभु) की खातिर करता है। वह ऐसी लगन लग जाती है जो कभी छूटने में नहीं आ सकती। शंकर जैसे ज्ञानी लोग भी, वे क्या फरमाते हैं कि सब साधनों में से सबसे विशेष साधन जो है, वह भक्ति है। मैं इस लिए पेश कर रहा हूँ कि भक्ति मार्ग सब महापुरुषों ने बताया, किसी की भी वाणी

लो। अब शंकराचार्य बड़े बुद्धिमान, माने हुए फिलासफर थे। वे भी कहते हैं, भक्ति ही एक मात्र साधन है प्रभु को पाने का। बच्चा भी भक्ति करना जानता है, माफ करना; ज्ञान की समझ किस को आयेगी? ज्ञान में बुद्धि का विचार, यह सत है, यह असत है, यह यह है, वह वह है, पचास बातें, उस में कई क्रियायें, कई साधन करने पड़ेंगे। बच्चे को कहो, कुदरती खासा बच्चे का अपने आप मौजूद है किसी के साथ लग कर रहने का, किस के साथ? माता के साथ, भाइयों के साथ, दोस्तों-मित्रों के साथ। इसलिए महापुरुष यह कहते हैं कि यह जो अमृत का भण्डार भक्ति का है, यह कैसा है? 'गुर सत्गुर पासै राम राजे,' गुरु के पास है। समझे? कैसा गुरु? जो सत्गुर है, सत का स्वरूप है, वह कैसा है? 'गुरु सत्गुरु सच्चा शाहो है।' सिख के अन्तर वह प्रकट कर देता है। उसके पास प्रेम की दौलत है, वह **overflow** (खुले आम प्रसारित) कर रहा है। 'सुभर भरे प्रेम रस रंग, उपजे चाओ साध के संग।' वे प्रभु के प्रेम और रस के प्याले हैं उभर उभर कर डुलने वाले। जो उन के पास बैठता है, उस में भी वही इज़हार, मण्डल की **radiation** से, उसकी पावन देह से प्रसारित होने वाली आत्म रंग की किरणों से उसको भी वही दौलत मिलती है। क्या यह बयान में आ सकती है? हाफ़िज साहब कहते हैं, नहीं।

कलम रा - ओ - ज़मान रा न बवद कि बेहतर इश्क गोए बाज़।

कि कलम को यह ताकत ही नहीं दी गई कि प्रेम को, भक्ति भाव को बयान कर सके। बताओ, आप के अन्तर प्यार हो, किन लफ़जों से बयान करोगे? कोई लफ़ज नहीं। कहते हैं कि कलम को ताकत ही नहीं दी गई।

बराए हदे तकरीर अज़ सरे आबे जू बीद।

यह दिल के उभार के बयान करने का तरीका है। भक्ति-भाव जिस के साथ हो कितना मीठा लगता है। कैसा? रवाँड़ जैसा। समझे? क्या कहोगे? माता जैसा, पिता जैसा, और भई, कैसा? वह बयान में आ सकता है? यह वही जाने जिसके अन्दर लगन हो। कम से कम दुनिया का तो तजरबा हमें है ही न। इससे थोड़ा अन्दाज़ा लगा सकते हो, क्या यह लफ़जों में बयान हो सकता है? तो गीता में वह जो बात बतलाई गई कि सब किस्म के योगियों में से उसको ऊँचा समझता हूँ, किस को? जो श्रद्धा से अपने अन्दर मुझे याद करे। भक्ति की निशानी क्या है? श्रद्धा सहित, प्यार भरी याद, श्रद्धा भरी, भरोसे सहित प्यार भरी याद। प्यार भरी याद में यकसूई (एकाग्रता) है। जहाँ प्यार है, जहाँ प्रेम का बाज़ आ जाये, वहाँ कोई चिड़िया - शिड़िया नहीं रह सकती। लोग कहते हैं, हमारा जी नहीं लगता। और, वहाँ प्रेम नहीं। प्रेम से याद करो, काम बन जाये। क्योंकि प्रेम नहीं, इस लिए मुश्किल बात है।

आप देखेंगे, जब एक बार भगवान कृष्ण गोपियों से दूर चले गये, गोपियां बड़ी विरह और सोज़ (संताप) में जल रही थीं, तो ऊधों को भेजा कि जाओ, उनको थोड़ी ज्ञान - ध्यान की बातें सुना आओ। यह याद रखो, जिस को तुम याद करो, वह भी तुम को याद करता है। यही बड़ा असूल है। अगर सिख गुरु को याद करता है तो गुरु सिख को याद करता है।

सत्गुरु सिख को जिआ नाल सम्हारे॥

सत्गुरु सिख को जिंद - जान से याद करता है। इतना प्यार से याद करता है कि जैसे माता बच्चे को खिला कर खुश होती है, ऐसे गुरु सिख को खिला कर खुश होता है। यह तो है मिसाल दुनिया की, यह भी भद्री मिसाल है। इस से हज़ारों गुना ज़्यादा मीठा लगता है। पिता बच्चे

को कितना मीठा लगता है, बयान कर सकते हो? बच्चों को अन्दाज़ा नहीं कि पिता को बच्चे कितने प्यारे हैं। वह अपना सब सुख आराम यह वह कुर्बान करता है। फिर नाम नहीं लेता है किए का। तो शिष्य को इतना पता नहीं कि गुरु उस से कितना प्यार करता है? वह समझता है कि मैं ही उस को प्यार करता हूँ। प्यार की निशानी क्या है? हर वक्त उसकी याद रहे। जैसे सीने में छुरी लगी हो तो भूल नहीं सकता दर्द उस का, ऐसे कलेजे में जो कसक हो वह भूल नहीं सकता।

भगवान कृष्ण ऊर्धो को कहने लगे, “ऐ ऊर्धो, गोपियों ने मुझे अपना दिल दिया है।” जहाँ दिल गया, वहाँ जिस्म गया, वहाँ जान गई।

तन दादन ओ जां दादन ओ इमां दादन।

सरमद से पूछा गया, “अरे तुझे क्या मिला भक्ति भाव में?” कहते हैं, “तन भी दे दिया, जान भी दे दी, अरे ईमान भी चला गया। सूदे दिगर चूं नमी दानम किह चीस्त।

और इससे ज्यादा क्या, सब बोझ हलके हो गये। अब बन्धन कौन रहा? कोई भी नहीं।” तो कहते हैं कि गोपियों ने मुझे दिल दिया है, मैं उनका प्राण हूँ। वे अपने शरीर की सब क्रियाएँ मेरी खातिर भूल चुकी हैं। प्रेम में कायदा है, वहाँ कोई नमाज़ या टीके लगाने की याद रह जाती है, बनावटें बनानी याद रह जाती हैं? प्रेम में तो तन बदन की सुध नहीं रहती। तो महापुरुष कहते हैं, ‘सुध नहीं है तन-बदन की कि अपने आपे से जा चुके हैं।’

प्रेम में खासा (गुण) है, वहाँ जिस्म का बनाना कहाँ रहता है? ख्याल ही नहीं रहता। तो कहते हैं, ऐसी हालत उनकी बन चुकी है। मुझे उनका ख्याल है जिन्होंने दुनिया के सब फर्ज़ मेरे चरणों में अर्पण

कर दिये हैं। अपनी धर्म पुस्तकें पढ़िये। तो कहा भगवान कृष्ण ने, “गोकुल की नारियों ने मुझे सबसे प्यारा समझा और मेरी जुदाई में व्याकुल हैं। जब वे मुझे याद करती हैं, तब तन बदन की सुध नहीं रहती।” यह प्रेम की निशानी है। गुरु रामदास जी साहब फरमाते हैं, ‘हौं आकुल विकल भई गुर देरवे।’ गुरु को देरवने से अपनी सुध-बुध भूल जाता है, जिस्म-जिस्मानियत भूल जाता है। उस में एक रुहानी कशिश है, आत्मा को खैंचती है।

जहाँ हुस्न नहीं वहाँ इश्क भी पैदा नहीं होता।
बुलबल गुले दीवार पर शैदा नहीं होता॥

जहाँ फूल खिले होंगे, वहाँ बुलबुल चहचहायेगी? अगर दीवार पर फूलों की तसवीर बना दो, कभी कोई बुलबुल चहचहायेगी? अरे, जिस में आत्म रंग है, वह आत्मा को आत्म रंग की किरणों से खैंचता है। तो जो उसकी याद में रहते हैं, कुदरती तन-बदन की होश न रही। अरे, वैराग धारण करके बाहर जा कर भी फिर खाने-पीने का फिक्र रहता है? देरव लो, मैंने थोड़ा तजरबा किया है। शाम के वक्त फिर खाने को आ जाते हैं, रोटी चाहिए। अरे भई, अगर इतना प्रेम, लगन हो, घर-बार छोड़ा, वैराग लिया, खाना मिले न मिले, क्या सवाल है? तो प्रेम में खासा आप देरव रहे हैं, क्या बन जाता है। तो इस लिए कहते हैं, ‘मेरे बगैर वे (गोपियाँ) ज्यों-त्यों मेरे वापस आने की इंतज़ार में दिन काट रही हैं।’ इंतज़ार बड़ी बुरी है, याद रखो। दो ही मुश्किलें हैं, एक शायर (कवि) कहता है—

दो मुश्किलें हम ने देरवी दिल के लग जाने के बाद।
इक तेरे आने से पहले इक तेरे जाने के बाद॥
यह लगन का सवाल है। जिसके अन्तर में इतनी प्रबल लगन है प्रभु

की, और भई, वह दुनिया में आयेगा बार - बार? तो भक्ति भाव सब से बढ़ कर है। कहते हैं, वे मेरे साथ एक हो चुकी हैं, मैं उनमें एक हूँ। प्रीतम और प्रेमी एक ही जैसा है। 'प्रेम गली अति सांकरी ता में दो न समाएँ।' दो नहीं ठहरते, एक - रूप होकर रहते हैं, गुरु और शिष्य को भी एक होकर रहना पड़ता है। मगर जिस्म - जिस्मानियत की सुध नहीं, वे जिस्म के बनाने सँवारने में नहीं रहते हैं। वह आत्मा एक महवीयत (मग्नता) में चली जाती है। उसी महवीयत का नाम है प्रेम। वहाँ सुध - बुध कहाँ रहती है? तो बात समझ रहे हैं आप? ऊर्धो ने योग का उपदेश दिया। उसको भेजा कि जाओ, उनको थोड़ा उपदेश दे आओ। वे उपदेश देने के लिए गये तो उन्होंने कहा, "ऐ ऊर्धो, तुम जो आये हो उपदेश देने को, बड़े सुन्दर उपदेश तुम ने दिये, ज्ञान - ध्यान बहुत छाँटा है। हम ने भी सुन लिया मगर हम क्या करें? हमारा तन मन उसकी भक्ति में भरपूर हो रहा है। मरतबान में समुद्र नहीं समा सकता। इसी तरह श्याम सुन्दर के केवल मुखड़े के दर्शन के लिए आँखें तरस रही हैं।" उन्होंने ज्ञान ध्यान दिया कि वह तुम्हारी आत्मा की आत्मा है। तो कहने लगीं, "हाँ भई, ठीक है, 'माना कि तू दिल के खलवत कदह में है मर्कीं, मगर ज़रा सामने आके तू बैठ जा कि नज़र को खूए मजाज़ है।' और भई, ज्ञान ध्यान तूने सब कुछ दिया। तू यह बता जो आँखें हमारी तरस रही हैं उसके पाने को, उसके लिए क्या इलाज है? घर बार छोड़ो, जंगलों की राह लो, आगे ही हम एकान्ती हैं। हमारे दिल दिमाग से दुनिया निकल चुकी है।" तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं। आखिर क्या कहते हैं? "ऊर्धो, जाओ योग की शिक्षा उनको दो जो भगवान से बिछुड़े पड़े हैं।" प्रेम में दो से एक रूप हो जाता है। दशम गुरु साहब ने फरमाया, 'दो ते एक रूप होहि गयो, चित न भयो हमरो आवन को, ज्यों - त्यों कहि के मोहि पठायो।' प्रेम का गुण है दो से एक - रूप

हो जाना। योग में चित्त - वृत्ति का निरोध होगा, बाहर का त्याग और बैराग होगा, तब यह अवस्था आयेगी। वह भी चित्त - वृत्ति का निरोध होगा, क्योंकि आत्मा का जो प्रेम का खासा है, वह उभरेगा, आगे मिलने का सामान एक कदम और आगे होगा।

तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं, "योग की तालीम तुम उन को दो, जो उससे बिछुड़े पड़े हैं। हम तो देख रहे हैं कि उस का हमारे से सदा का मिलाप है। हमारा प्यार श्याम सुन्दर के साथ हमेशा जुड़ा है।" महापुरुषों ने कहा, 'प्रेम गली अति सांकरी ता मैं दो न समाएँ।' मैं भक्ति भाव पेश कर रहा हूँ। भक्ति भाव किस को कहते हैं? प्यार को। वह प्यार भरी याद से शुरू होगा। किस से? उस परमात्मा से, जो हमारी आत्मा की आत्मा है। जिन के अन्तर में प्यार ठाठे मार रहा है उनकी सोहबत से भी वह रंग हम को मिलता है जो उनके रोम - रोम से प्रसारित हो रहा है।

भक्ति एक बेअरिक्त्यार जज्बा (भाव) है। इस में कशिश है जो अपने प्रीतम की तरफ बेअरिक्त्यार खैंच कर ले जाती है। इसको प्रीतम के साथ रसाई और उस में इक - मिक होने (अभेद होने) का एक रस बन जाता है। 'दो ते एक रूप होए गयो।' न अपने आप की सुध रही न उस की। यह खासा किस का है? आत्मा का। ज्ञान का खासा, infer करना (निष्कर्ष निकालना) है, एक होना नहीं। आप देखेंगे कर्मयोग का, वैराग का अपना काम है, ज्ञान - योग का अपना काम है और आत्मा का अपना काम। ज्ञान - योग विज्ञानमय कोष से ताल्लुक रखता है और आनन्दमय कोष आत्मा से ताल्लुक रखता है और आनन्द एक पर्दा है जो महवीयत में चला जाता है। तो यह भक्ति, यह किसी बुद्धि विचार का नाम नहीं, याद रखो। मुहब्बत के जज्बे का नाम है। इस में अकल को दखल नहीं, याद रखो। मुहब्बत के जज्बे का नाम है। इस में

बेअरिक्तियारी की एक कशिश है। जो किसी देखे अनदेखे की तरफ उसे खैंच ले जाती है। भक्ति में श्रद्धा का होना बहुत ज़रूरी है। अगर श्रद्धा नहीं तो भक्ति काहे की? भक्ति उसकी, मैंने अभी कहा था, किसी गुणवान, अपने से श्रेष्ठ की, जिसके अन्तर आत्मानुभव है उसकी तरफ जो कशिश उसके अन्तर में हो रही है, वह प्रभु ही बैठा कर रहा है। तो प्रभु के लिए कशिश जो है, उसकी खिंचावट का नाम है भक्ति। यह दृढ़ होने पर श्रद्धा की सूरत अरिक्तियार करेगी। **Faith is the root cause of all religions.** ज्ञान में faith नहीं, (श्रद्धा, विश्वास नहीं) माफ करना। देखा ही नहीं, inference (निष्कर्ष) है। हो या न हो, तो दोनों ही सूरतें हैं।

ज्ञान में दो - चिन्ती (दुविधा) बनी रहती है, मेरा यह view (मत) है। हो सकता है inference (निष्कर्ष) ठीक हो, हो सकता है गलत हो। तो, feelings, emotions and inferences, they are all subject to error. सबमें गलती की संभावना है। Seeing is above all, देखना सब से ऊपर है। यह खासा आत्मा का है जो आरिक्ति भक्ति में बदल जाता है। Devotion या faith के बाद भक्ति और प्रेम जाग उठता है। भक्ति में दुनिया की ख्वाहिशात नहीं रहती। पहली बात, विषय - विकार, इन्द्रियों के भोग रस बिल्कुल उड़ जाते हैं। सच्चा प्रेम आत्मा का खासा है। प्रभु से जुड़ने से, उसको पा कर सब कुछ पाया हुआ हो जाता है। उसके प्रेम में महव हो कर बाहरी जिस्म - जिस्मानियत की बनावट, मैं - मैं, तू - तू, इन्द्रियों के भोग - रस नहीं रहते, कम हो जाते हैं। यह खासा है कुदरती प्रेम का और जहाँ जिस का प्रेम हो, उसकी क्या गति होती है? सारी ख्वाहिशात मिट कर एक प्रीतम के पाने में बदल जाती है, ruling passion बन जाती है। नतीजा क्या हुआ? और किसी चीज़ के पाने की ज़रूरत नहीं रहती।

शंकराचार्य ने इसलिए कहा, “हे मालिक! तेरे और मेरे में भेद नहीं है, तो भी मैं तेरा ही हूँ, तू मेरा नहीं।” समुद्र की लहर होती है, लहर का समुद्र होना ना मुमकिन है। कुदरती है कि मैं तुझ में हूँ, तू मुझ में है। आरिक्ति inference करके (बुद्धि - विचार से निष्कर्ष निकालने के बाद) वहाँ पहुंचता है, यहाँ (भक्ति द्वारा) direct (सीधे) उसमें लय होना है, ‘सोहंग,’ ‘जैसा तू है वैसा मैं हूँ’, I and my father are one. ‘जैसी मैं आवे खसम की बाणी तैसड़ा करि ज्ञान वे लालो।’ मैं - पना नहीं रहता, तू - पना रहता है।

तू तू करता तू भया, मुझ में रही न हूँ।
जब आपा पिर का मिट गया, जित देखा तित तूं।

एक नज़ारा इसका देखिए, गुरु नानक साहब की ज़िन्दगी का। वे मोदीखाने में थे, तोल - तोल कर चीज़ें दिया करते थे। एक दिन लेने वाले आये, तोल कर माल डालने लगे। एक, दो, तीन, चार, पाँच, छः, सात, आठ, नौ, दस, ग्यारह, बारह, तेरह। तेरा के दो मायने हैं, एक thirteen, एक तेरा के मायने, मैं तेरा हूँ। आत्मा में यह उभार था कि मैं तेरा हूँ। ‘तेरा’ में महवियत हो गई, ‘तेरा, तेरा’ करते तोलते ही चले गये। समझे? यह अवस्था बन गई। लोगों ने शिकायत की कि मोदीखाना लुटाया जा रहा है। भई जाओ, हिसाब करो, तुम मारे जाओगे। खैर, हिसाब हुआ। प्रभु (अपने) भक्तों का रक्षक होता है। वहाँ कहते हैं, कई चीज़ें फालतू निकलीं उस के मोदीखाने में। तो ‘तेरा,’ यह ज़बा है।

दशम गुरु साहब थे, महवियत में बैठे। ‘ज़मी तू ही, ज़मां तू ही, मकीं तू ही, मकां तू ही, जलस तू ही, थलस तू ही, नगस तू ही, नजस तू ही,’ तू ही तू ही में जाते आरिक्ति तू ही, तू ही, तू ही, तीन दिन इसी

ज़ज्बे में रहे। मैं यही पेश कर रहा हूँ कि भक्ति एक ज़बरदस्त ज़ज्बा है। आसान से आसान है, बच्चे से बूढ़े तक हर कोई इसे कर सकता है। सिर्फ यह (प्रेम, भक्ति का ज़ज्बा) गलत जगह लग रहा है। इस की अब वह लगन, वह आत्मा की कशीश या भक्ति - भाव इसके, जिस्म और जिस्म के ताल्लुकात के साथ लगने के कारण कई टुकड़े हो चुके हैं। कोई कहीं गिरा, कोई कहीं गिरा, कोई कहीं गिरा। अगर सब तरफ से हट कर एक जगह हो जाये, वह उभरेगा। यह बुतपरस्ती, मूर्ति पूजा कैसे शुरू हुई? ठाकुर बना लिया, तवज्जो को यकसू (एकाग्र) करने के लिए मूर्ति बनाई गई, और कोई मतलब नहीं था। सब तरफ से हट - हटाकर, यह ठाकुर है, यह परिपूर्ण परमात्मा है, उस ज़ज्बे को यकसू करने के लिए, प्रेम के उभार के लिए था। मतलब कुछ और था, बन कुछ और गया। आखिर वे लोग क्या करते थे? जब यकसू हो जाती थी तो फिर नासिका के अग्र भाग में आते थे। यहाँ से चढ़ कर दो भू मध्य, फिर नीचे चक्करों में, फिर चढ़ कर ऊपर जाते थे। असल बात क्या थी, बन क्या गई 'साँप गया निकल, तू लकीर पीटा कर।'

तो यह है भक्ति का राज़। 'प्रभ जी तू मेरे प्राण अधारे।' इन लोगों के आप शब्द और बाणियाँ पढ़ो, अजीब प्रेम के रंग में रंगी पड़ी होती हैं। 'नमस्कार दंडौत वन्दना, अनिक बार जाऊँ वारे।' हज़ारों बार तुम्हें 'उठत बैठत सोवत जागत, एह मन तुझे चितारे,' हर वक्त हे प्रभु! तेरी याद, 'तू मेरी ओट, बल, बुद्धि, धन, तुम हो, तू ही मेरे प्राण अधारे।' तो भक्ति, प्रेम देना जानता है। अगर हम प्रेम करना सीख जायेंगे तो दुनिया में दुख क्यों रहेगा? सब को दोगे न। किस की खातिर? उस प्रभु की खातिर। हम लेना जानते हैं, हर कोई लेना जानता है। इस लिए कशमकश बढ़ रही है। अगर देना जान जायें

तो सुख हो जाए सब के लिए। तो प्रेम दूसरों को खिलायेगा, जैसे माता बच्चे को बड़े प्यार से खिलाती है, अगर सारे इसी तरह, सारे माता की तरह सबको खिलाना सीख जायें तो आप कभी भूखे रह जायेंगे? नहीं।

पुराणों में एक गाथा आई है। उस में आया है कि विष्णु भगवान ने देवताओं की और दैत्यों की दावत की। देवता भी आ गये और दैत्य भी। आ कर बैठ गए, अपनी अपनी लाईन में। खाना तैयार हो गया। भगवान ने कहा, "भई यह सब कुछ तुम्हारे खाने के लिए है। बड़ी खुशी से खाओ मगर मेरी एक शर्त है कि हाथ टेढ़ा कर के नहीं खाना। बाकी, खाना यह तुम्हारे लिए है।" जो दैत्य लोग थे, असुर बुद्धि वाले, वे कहें हाथ टेढ़ा न करें तो खायें कैसे? कुछ समझ में न आई बात। थोड़ी देर बैठ कर बातें करते रहे, "हमारी निरादरी हुई है, हाथ टेढ़ा न करें तो कैसे खायें?" वे तो चले गए, दैत्य लोग। देवता बैठे सोचने लगे कि भई, हाथ टेढ़ा नहीं करना तो क्या हुआ, मैं तुमको खिलाऊँगा, तुम मुझे खिलाओ। मैं तुमको खिलाऊँ, मैं भूखा कैसे रहूँ। खूब खाया सबने। ये मिसालें देकर समझाने का यत्न किया है कि प्रेम देना जानता है, लेना नहीं। कोई भूखा नहीं रहेगा। दुनिया में कोई दुख नहीं रहेगा। समझे? यह खाना है प्रेम का, भक्ति का। ज्ञान में तो निष्कर्ष निकालेगा कि सब में वह परमात्मा है। वह आँख खुले, तभी देखे न।

एक और भक्त का ज़िक्र आता है। उसने भगवान से कहा कि मेरे घर आज दर्शन दीजिए आप। कहने लगे, "बहुत अच्छा, आयेंगे।" तो भक्त ने क्या किया, घर की सफाई की, बड़ी सफाई कर करा के खूब रास्ता साफ किया। पानी छिड़काया, बैठे इन्तज़ार करने, भगवान

आयेंगे, भगवान कोई नहीं आए। सारा दिन बैठे रहे, शाम पड़ गई, दिन को एक बूढ़ा आदमी आया जो चल फिर नहीं सकता था, लड़खड़ाता था, “रोटी दो, हाय रोटी दो, भूख लगी है।” वह बूढ़ा आया और चला गया। शाम तक भगवान न आए तो भक्त ने कहा, पूजा में बैठे, “भगवान आपने इकरार किया आने का, आए नहीं?” भगवान कहने लगे, “मैं आया तो था, रोटी माँग रहा था, तूने दी नहीं।” अगर देना सीख जाये, सुख हो जाए कि नहीं? क्या पता किस भेस में वह प्रभु आ जाये। तो इस लिए जो भक्ति भाव का जज्बा है न, वह बड़ा जबरदस्त है। जब तक भक्ति नहीं, विश्वास नहीं बनता। विश्वास की पहली निशानी है, भक्ति भाव बनता है। वह कब होगा? जब तुम किसी को समर्थ पुरुष जानोगे। अधूरे पर कभी *faith* (विश्वास) नहीं आ सकता, याद रखो। जैसे एक आदमी हो, सर्वत बीमार हो, ज़िन्दगी का खतरा है, डाक्टर को बुलाते हैं। डाक्टर कहता है कि भई, तुम्हारी जान खतरे में है, तुम्हारा आप्रेशन किया जायेगा, शायद तुम मर जाओ, मैं ज़िम्मेवार नहीं, तुम लिख दो। वह अपनी अज़ीज जान उसके हवाले कर के लिख देता है कि अगर मैं मर जाऊँ तो कोई फिक्र नहीं। इसका नाम है, *faith*. किस तरह हुआ? किसी को समर्थ पुरुष जान कर उसके हवाले करना। **Faith is the root cause of all religions**, यह सारे सच्चे परमार्थ की बुनियाद (नींव) है। जैसे मकान नहीं बनता, जब तक बुनियाद न हो, इसी तरह विश्वास न हो, किसी काम में कामयाबी नहीं। तो बड़े प्यार से समझा रहे हैं, भक्ति के बारे में कि भई जो भक्ति को छोड़ कर केवल ज्ञान ही के पाने में मेहनत करते हैं, उनकी गति ऐसी है जैसे कामधेनु को छोड़ कर आक के दूध की तलाश कोई करे। यह तुलसीदास जी फरमा रहे हैं।

(3) सुनु खगेस हरि भगति बिहाई। जे सुख चाहहिं आन उपाई॥

कहते हैं, हे गरुड! सुनो, प्रभु की, हरि की भक्ति को छोड़ कर जो किसी और तदबीर (उपाय) से सुख को हासिल करना चाहते हैं, वे जाहिल (मूर्ख) हैं। पहली बात, ‘जो सुख को चाहे सदा सरन राम की ले।’ वह परिपूर्ण परमात्मा है, जो उसके साथ लगेंगे, हमेशा के सुख को पा जायेंगे, ‘न ओह मरै न होवे सोग।’

(4) ते सठ महासिन्धु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहिं जड़ करनी॥

क्या मिसाल देते हैं कि वे मूर्ख लोग हैं जो महासागर को बगैर जहाज़ के पार करना चाहते हैं, समझे। और क्या कहते हैं, यह उनकी जहालत (मूर्खता) का नतीजा है। भवसागर पार करने के लिए भक्ति भाव चाहिए।

(5) सुनि भुशुंडि के बचन भवानी। बोलेउ गरुड़ हरणि मृदु बानी॥

अब शिवजी कहते हैं कि हे पार्वती, काकभुशुंडि की यह बात सुन कर मुझे अब कुछ शक नहीं रहा। यह ठीक हो गई बात, समझ में आ गई मगर,

(6) तव प्रसाद प्रभु मम उर माहीं। संसय सोक मोह भ्रम नाहीं॥

कहते हैं, तेरी कृपा से मुझे अब कोई संशय नहीं रहा कि वाकई भक्ति ज्ञान से ऊँची है, सब से ऊँची है। उसका कारण यह है, भक्ति अपने आप में काफी है। यह भक्ति ही है कि और किसी साधन पर इस का आधार नहीं। ज्ञान और बैराग दोनों ही इस के अधीन हैं। भक्ति न हो तो कुछ भी नहीं बनता। भक्ति में जा कर ही बाहर से बैराग होगा, ऊँची चीज़ पाने के लिए ही छोटा बैराग होगा। तो बैराग अधीन हुआ कि नहीं? समझे? यह जीना (सीढ़ी) है। भक्ति आ जाए तो बैराग अपने आप आ जाता है।

(7) सुनेतं पुनीत राम गुन ग्रामा। तुम्हरी कृपा लहेतं बिश्रामा॥

कहते हैं, आपने जो कहा, मैंने सुन लिया है। आपकी मेहरबानी से, कृपा से मुझे शान्ति और धीरज हो गया, आराम मिल गया।

(8) एक बात प्रभु पूछउं तोही। कहहु बुझाइ कृपानिधि मोही॥

कहते हैं, हे भगवान! मैं आप से एक बात पूछना चाहता हूँ। कृपा करके आप मुझे यह समझाओ। क्या?

(9) कहहिं संत मुनि वेद पुराना। नहिं कछु दुर्लभ ग्यान समाना॥

कहते हैं, आम संत, मुनि, वेद और पुराण सारे यही कहते हैं कि ज्ञान की तरह कोई चीज़ दुर्लभ नहीं। यह क्या बात है? आप कहते हैं भक्ति सब से ऊँची है। ये सब कहते हैं ज्ञान ऊँचा है, इस में भेद क्या है?

(10) सोइ मुनि तुम्ह सन कहेत गुसाई। नहिं आदरेहु भगति की नाई॥

कि हे गुसाई! लेकिन आप अब कह रहे हैं कि भक्ति की तरह ज्ञान की भी इज्जत नहीं, भक्ति को बड़ा बतलाया ज्ञान के मुकाबले में। यह बात क्या है? वे कहते हैं, ज्ञान ऊँचा है, आप कहते हैं भक्ति ऊँची है। कारण क्या है?

(11) ग्यानहि भगतिहि अन्तर केता। सकल कहहु प्रभु कृपा निकेता॥

कहते हैं, हे ज्ञानी पुरुष! ज्ञान और भक्ति में किस कद्र फर्क है, आप मुझे समझा दो।

(12) सुनि उरगारि बचन सुख माना। सादर बोलउ काग सुजाना॥

काकभुशुंडि गरुड़ की बात सुनकर बड़े खुश हुए और इस तरह बयान किया। आगे उसका जबाब देंगे।

(13) भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा। उभय हरहिं भव संभव खेदा॥

(14) नाथ मुनीस कहहिं कछु अन्तर। सावधान सोउ सुनु बिहंगबर॥

कहते हैं, ज्ञान और भक्ति में कुछ भेद नहीं, दोनों ही एक ही बात को पेश कर रहे हैं। दोनों ही संसार में दुरुवों को नाश करने का ज़रिया (साधन) बन रहे हैं, मगर आगे, 'नाथ मुनीस कहहिं कछु अन्तर।' तो गरुड़ ने कहा, ''भई, मुनि लोग तो कहते हैं कि फर्क है, ज्ञान ऊँचा है। वह नीचा है, आप कैसे कहते हैं?'' फिर आगे जवाब देते हैं। 'सावधान सोउ सुनु बिहंगबर।' अब कहते हैं, ऐ गरुड़, सुन! अब ज़रा कान देकर सुन, जो मैं कहता हूँ।

(15) ग्यान बिराग जोग बिग्याना। ए सब पुरुष सुनहु हरिजाना॥

कहते हैं, ज्ञान, बैराग और योग, ये सब, ऐ गरुड़! पुरुष हैं। जैसे मैंने पहले एक मिसाल दी, रामकृष्ण की, कि ये हैं पुरुष।

(16) पुरुष प्रताप प्रबल सब भांती। अबला अबल सहज जड़ जाती॥

कहते हैं, कि पुरुष का प्रताप सब में प्रबल होता है। स्त्री बेचारी कुदरती तौर पर कमज़ोर है। मगर आगे उस में एक फज़ीलत (बड़ाई) बयान करते हैं।

(17) दोहा - पुरुष त्यागि सक नारिहि जो बिरक्त मति धीर।

न तु कामी विषयाबस बिमुख जो पद रघुबीर॥

कहते हैं, पुरुष स्त्री को छोड़ सकता है बशर्ते कि अकल का मज़बूत और बैराग वाला हो वरना जो कामी और विषय के ताबे (अधीन) है और प्रभु से, प्रेम से बेमुख है, वह छोड़ नहीं सकता। कोई बैरागी, कोई धीरजवान पुरुष, जिसको अपनी इन्द्रियों पर कंट्रोल है, वह ही छोड़ सकता है, दूसरा नहीं छोड़ सकता। आगे कुछ और कहते

हैं, वह सुनिये।

(18) सोठा - सोउ मुनि ग्यान निधान मृगनयनी बिधु मुख निरस्वि।
बिबस होइ हरि जान नारि विष्णु माया प्रगट॥

कहते हैं, ऐ गरुड़! जो ज्ञान के घर, मुनीश्वर बन चुके हैं उन को भी इन्द्रियां प्रबल हैं, वे भी लूटे जा रहे हैं। आँख देख कर, आँख के रास्ते चेष्टा आती है। वे भी मारे जा सकते हैं। वह जो स्त्री है, विष्णु के रूप में माया, यह बाहरी इन्द्रियों के द्वार पर प्रकट है, इसलिए मारे जाते हैं। तो मर्द स्त्री से मारा जा सकता है मगर स्त्री स्त्री से नहीं मारी जाती, आगे बयान करेगे। इस लिए महापुरुषों ने प्रभु के साथ कई संबंध कायम किए। कहीं नौकर और मालिक का पेश किया है। कहीं बच्चे और पिता का, पिता और पुत्र का ताल्लुक पेश किया है मगर सब से बढ़ चढ़ कर स्त्री और पुरुष का ताल्लुक है। आत्मा को उस प्रभु की 'एका पुरुख सभाई नारि,' आत्माएं सब उसी की अंश हैं, वह सब का मालिक है, उसके मिलने से सदा का सुहाग है। तो यह जो नज़रिया है, इस में माया असर नहीं कर सकती, नहीं तो माया बड़ी प्रबल है।

माया दो किस्म की है। एक जड़ माया और एक चेतन माया, **woman and gold.** यह सब को लूट लेती है। जब विवेकाननद मगरिब (पश्चिम) में गये, वापस आये तो स्वामी रामाकृष्ण ने पूछा कि भई तुम ने वहाँ क्या देखा? कहने लगे, गुरुदेव वहाँ कनक और कामिनी की, ज़र और ज़न की पूजा हो रही है। अरे हिन्दुस्तान में क्या हो रहा है? यह प्रबल चीज़ है, जड़ माया भी और चेतन माया, ये सब को खैंच कर ले जाती हैं। कबीर साहब कहते हैं, 'एक कनक और कामिनी, दुर्गम घाटी दो,' एक ज़र और ज़न ये दो दुर्गम घाटियाँ हैं। कोई ऐसा साधु न मिला जो इन से पार गया हो। तो यह ज्ञान, बैराग और उसका ताल्लुक और भक्ति का क्या ताल्लुक है?

आगे बयान करेगे।

(19) इहाँ न पच्छपात कछु राखउं। वेद पुरान संत मत भाषउं॥

अब कहते हैं, भगवान रामचन्द्र की जुबानी, कि भाई देखो, मैं अब पक्षपात नहीं करूँगा। जो वेदों ने, पुराणों ने संत-मत की तालीम पेश की है, वह मैं पेश करता हूँ। मैं सब लिहाज़ नहीं करूँगा। गौर से सुनिये।

(20) मोह न नारि नारि के रूपा। पन्नगारि यह रीति अनूपा॥

कहते हैं, 'मोह न नारि के रूपा,' कि औरत दूसरी औरत का हुस्न देख मोहित नहीं होती। यह कुदरती असूल है। हे गरुड़! यह कुछ अजीब सी नीति बनी है क्योंकि भक्ति भी स्त्री रूप है और माया भी स्त्री है, इसलिए माया उसको मोह नहीं सकती। बड़ी ख़बूसूरती से निर्णय कर रहे हैं।

(21) माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ। नारि बर्ग जानइ सब कोऊ॥

कहते हैं, हे स्वामी! सब लोग जानते हैं कि भक्ति और माया दोनों ही औरतें हैं, हमजिन्सियत (सहजातियता का संबंध) है। हमजिन्सियत हमजिन्सियत को खैंच नहीं सकती।

(22) पुनि रघुबीरहि भगति पिआरी। माया खलु नर्तकी बिचारी॥

कहते हैं, उस राम, मालिक को, पुनि रघुवीर यानि भगवान राम को, मालिक परिपूर्ण जो है उसको केवल भाक्ति ही प्यारी है। क्योंकि बेचारी माया यकीनन एक नर्तकी, रकासा है कहो, (नाचने वाली) वेश्या है। माया नाच नचाती है। जो भी एक नाच देखे, तो दुनिया नाचने लग जाती है। यह हाल माया का है, दुनिया को नचा रही है सबको। पढ़े - लिखे लोगों को, ज्ञानियों को, सबको खतरा है इससे। मगर जो

भक्ति - भाव से जाते हैं उनको कोई खतरा नहीं। तो महापुरुषों की, अब Christ (ईसा) की तालीम लीजिये। वहाँ भी यही कहते हैं कि स्त्री रूप होकर जाओ। जैनियों में भी आता है कि स्त्री रूप चेले की न्याई है। कि हे परमात्मा! तुम हमारे सच्चे पति हो, मालिक हो। जो स्त्री रूप होकर जाते हैं, वे बच जाते हैं क्योंकि माया उनको भरमा नहीं सकती। अगर ज्ञान बैराग ले कर गए तो मारे जाओगे। कोई विरला, कोई ज़बरदस्त, जिसने अपनी इन्द्रियों पर पूरा काबू पाया है, अक्ल का मजबूत है, बैराग वाला है, वह बच जाए तो बच जाये नहीं तो सब मारे जाते हैं। और यही कारण है, माफ करना कि ज्यादा लोग गिर जाते हैं। जो भक्ति - भाव से जाते हैं, वे बच जाते हैं क्योंकि माया उन्हें भरमा नहीं सकती। माया के, कहते हैं, लक्षण हैं, उसके अगले सिर के भी बाल नहीं और पिछले भी बाल नहीं। उससे पूछा, कि भई, तेरी ऐसी गति क्यों है? कहती है कि जब मैं अनुभवी पुरुषों के पास जाती हूँ तो माथे रगड़ - रगड़ कर (अगले) बाल उड़ गये, वे मुझे कबूल नहीं करते। पिछले बाल मेरे दुनियादारों ने खैंच - खैंच कर खौंस लिए, मैं किसी के हाथ नहीं आई, यह हालत है दुनिया की। किन के लैवल से? जिनकी आँखें खुली हैं, जिन्होंने प्रभु भक्ति को पाया है, सच्चे मायने में, उनका बयान कर रहे हैं। फिर आगे कुछ और बयान करते हैं—

(23) भगतिहि सानुकूल रधुराया। ताते तेहि डरपति अति माया॥

कहते हैं, परमात्मा भक्ति का मददगार है, साथी है क्योंकि वह खुद भक्ति का रूप है, समझे, Innate (जन्मजात) उनका ताल्लुक है। इस लिए माया उन पर असर नहीं करती, उनका कुछ बिगड़ नहीं कर सकती। आगे क्या कहते हैं?

(24) राम भगति निरूपम निरूपाधी। बसइ जासु उर सदा अबाधी॥

कहते हैं, जिस के दिल में वह लासानी और बगैर किसी उपाधि के भक्ति बस रही है, वह हमेशा बेरवौफ है। प्रेमी को किसी का डर नहीं क्योंकि वह जान हवाले कर चुका है। प्रेम का खासा है, सब कुछ दे देना, अर्पण कर देना।

(25) तेहि बिलोकि माया सकुचाई। करि न सकइ कुछ निज प्रभुताई॥

यह हालत देरव कर माया पसोपेश करती है, घबराती है और उस पर अपना ज़ोर नहीं करती। भक्ति पर माया क्या ज़ोर करेगी जो आगे ही स्त्री रूप चेले की न्याई (तरह) है, वहाँ कोई झागड़ा ही नहीं। और भक्ति प्रभु को प्यारी है। **Those who do not know love can't know God.** क्राईस्ट ने कहा, जो प्रेम करना नहीं जानते, वे प्रभु को नहीं पा सकते, बस।

फिर वे कहते हैं, यह सवाल यहाँ आयेगा कि भक्ति के असूल क्या है? यह तो समझ में आ गई बात कि भक्ति बड़ी ऊँची चीज़ है ज्ञान के मुकाबले में, बैराग के मुकाबले में, बाकी सब के मुकाबले में मगर इस के असूल क्या है? सवाल यह है। यह समझना चाहिए। इसका पहला असूल यह है कि परमात्मा सबका पिता है, वह रब्ब - उल - आलमीन है, सब आलमों (खण्डों - ब्रह्मण्डों और लोकों) का है। न वह रब्ब - उल - हिन्दू है, न - रब्ब - उल - मुसलमीन है, न रब्ब - उल - सिख है, न रब्ब - उल - ईसाई है। वह सबका पिता है, न पहली बात। भक्ति भगवान को पाना चाहती है। प्रेमी प्रीतम को पाना चाहता है, बस। उसके प्रीतम दो - चार नहीं। **You cannot serve two masters,** दो की भक्ति नहीं कर सकते, या प्रभु की या दुनिया की। तो भक्ति - भाव एक आदर्श, एक निशाना रखता है, दो - चार - पाँच नहीं।

‘हम खुदा खाही ओ हम दुनियाए दूं,
ई रव्याल असतो महाल असतो जुनूं।

अगर तुम दुनिया के पुजारी बनते हो और उधर प्रभु के पुजारी बनते हो, कहते हैं यह वहम और गुमान है भई, यह भक्ति नहीं। फिर आप कहेंगे कि क्या हम दुनिया को छोड़ जायें? नहीं भाई। क्योंकि वह सब का मालिक है और सब दुनिया मालिक की बनाई हुई है। और सब ही रक्बसूरत है और सब में वह परिपूर्ण है, इस लिए सब दुनिया से प्यार करो। इस भाव से दुनिया की जो मुहब्बत, प्यार है, वह अनश्वर है, बगैर बन्धन के है। अगर वह भूल जाये तो यही दुनिया बन्धन का कारण है।

दात पियारी विसरेया दातारा॥

जाणे नाहिं मरण विचारा॥

स्त्री यह समझे, पति मुझे प्रभु ने दिया है, प्रभु इस में भी विराजमान है। पति यह समझे कि स्त्री मुझे प्रभु ने प्रारब्ध कर्मों के अनुसार दी है। प्रभु ने जोड़ा है, इन्सान ने तो नहीं जोड़ा। इस लिए जिस को प्रभु ने जोड़ा है, प्रभु ही तोड़े तो तोड़े। उसके अन्तर भी वही भगवान है। जिसने जोड़ा है, अगर उस का प्यार है तो उस से प्यार होगा कि नहीं। ऐसे ही बच्चों के लिए यह दुष्टिकोण जो है, यह तुमको दुनिया में नहीं फँसायेगा।

पूरा सत्गुरु भेटिये पूरी होये जुगत ॥
हसन्दियां, खावन्दियां, पहनन्दियां विचे होवे मुक्त॥

दुनिया में घर बार छोड़ने की ज़रूरत नहीं। उसको सही नज़री से देखो। प्रेम के खासे को बढ़ाओ, प्रभु की खातिर, प्रभु सब में है, सब से

प्यार करो। घर के भी सामान बड़े सही बन जायेंगे। पति का ताल्लुक स्त्री से सही बन जायेगा। बच्चों का ताल्लुक माता - पिता से अच्छा बन जायेगा और माता - पिता की सहीनज़री बन जायेगी बच्चों के साथ। यह असूल है पहला भक्ति का। दूसरा असूल उस में क्या है कि मालिक की रज़ा में रहना। समझे? और जो कुछ, दुख सुख आ जाये, यह समझे कि जैसे सोने को कुन्दन बनाया जा रहा है। वह परमात्मा, माता - पिता बच्चों की हमेशा बेहतरी चाहता है कि नहीं? बाज़ वक्त हो सकता है, उसको दाना (फोड़ा) निकल आये, उसकी चीर - फाड़ करनी चाहे, अपनी गोद में रख कर उसका आप्रेशन वह करा दे। मगर आप्रेशन कराने में उसकी नीयत ठीक है। उसको वह सुख पहुँचाना चाहता है। तो इसके लिए क्या है कि उसकी रज़ा में रहे। **If you love me, keep my commandments.** ‘अगर मुझ से तुम प्यार करना चाहते हो तो मेरा कहना मानो’, क्राइस्ट कहता है। तो भक्ति भाव में कहना मानने का सवाल बनता है, समझे। **Let my words abide in you and you abide in me, you shall have everything.** ‘मेरे वचन तुम्हारे हृदय में बसें और तुम मेरे अन्तर में बसोगे।’ यह भक्ति का असूल है कि जो उसके वचन हों, वे हमारे हृदय में बसें और हम उसके हृदय में बसें। यह कैसे होगा? यह तो बात तुम्हारी समझ में आ गई कि उस पर कारबन्द रहो। ‘जो बचन गुरु पूरे कहियो, सो मैं छीक गाठड़ी बांधा।’ उसके आदेशों का पालन करो। पर तुम उसके हृदय में कैसे बसो, इसका एक ही जवाब है।

रखो किसी को दिल में, बसो किसी के दिल में।

जिस को अपने हृदय में धारण करो, **reaction** होगा, **radiation** होगी, बे अस्तियार उसकी याद बनेगी। अगर तुम किसी की याद करते

हो तो बेअखिलयार उस का **reaction** होगा, प्रतिक्रिया होगी। फिर क्या होगा? जो माँगोगे, मिलेगा। समझे? अगर हमारे हृदय में प्रभु की याद बसे, उस का **reaction** होगा कि नहीं? प्रभु बच्चे को कैसे भूल सकता है? हम भूल जायें तो भूल जायें, वह नहीं भूलता। बच्चे गुमराह हो जायें तो हो जायें, पिता कभी बच्चे को भूल नहीं सकता। बच्चा जुआरिया भी हो, माफ करना, तो भी माता को फिक्र होता है, बच्चे ने रोटी नहीं खाई, उसके लिए रोटी लिए फिरती है। यह भी दुनियावी मिसाल है। उसका सिलसिला, प्रभु का हज़ारों दर्जे इससे बढ़ कर है। इस लिए महापुरुषों ने कहा है कि उसकी रज़ा में रहना, दुरव आये, सुरव आये। दरेवो, साने को कुन्दन बनाते हैं कूट-कूट कर। कोई शिकायत ज़बान पर न हो, यह भक्ति का असूल है।

एक मिसाल में आप को अर्ज़ करूँ। हज़रत मुहम्मद साहब के वक्त का एक वाकेआ है। हर एक समाज की पहली रौ-रीत अपनी है। अपराविद्या, उसका मलतब है कि प्रभु के लिए रुचि बने, शौक बने, भाव-भक्ति बने। नमाज़ के वक्त एक आदमी एक चादर ओढ़े भागता - भागता आता था। जब नमाज़ पढ़ी जाती, उस में शामिल हो जाता, जब नमाज़ खत्म होती तो भागा भागा जाता। तो हज़रत मुहम्मद साहब को लोगों ने कहा कि महाराज एक आदमी आता है, ऐन नमाज़ पढ़ने पर, जब खत्म होती है तो भागा जाता है। तो कहने लगे, “कल जब वह जायेगा तुम भी भाग कर पूछना, बात क्या है”? जब दूसरे दिन वह नमाज़ पढ़ कर भागने लगा तो उन्होंने पूछा, “भाई क्यों भागते हो?” कहने लगा, “बात कुछ नहीं, हम हैं गरीब, इतने गरीब हैं कि हमारे कपड़े पहनने को एक चादर है, मेरे और मेरी स्त्री के पास। नंगे बदन नमाज़ पढ़ना जायज़ नहीं शरीअत में। मैं इसलिए भाग रहा हूँ

कि नमाज़ का जो वक्त मुकर्क है, वह कज़ा न हो जाये(बीत न जाए) ताकि वक्त पर पहुँचूँ, चादर ओढ़ कर वह नमाज़ पढ़ ले।” यह बात आ कर हज़रत मुहम्मद साहब को बतलाई। उन्होंने कहा, “अच्छा कल जब वह भागेगा तो तुम भी दो-चार ऊँट लाद लो, कुछ कपड़े के, कुछ खाने पीने के सामान के, वह भागे तो तुम भी पीछे लेकर भाग पड़ना।” दूसरे दिन जैसे वह भागा, वे भी ऊँट लेकर पीछे भाग पड़े। वह आदमी घर पहले पहुँचा, दूर से घरवाली ने देखा कि ऊँट क्यों भागे आ रहे हैं। कहने लगी, “क्या हुआ भई, बात क्या है?” कहने लगे, “उन्होंने कहा था, हम गरीब हैं, एक चादर है सिर्फ उसी में नमाज पढ़नी थी। इसलिए आ गए। ये सामान उन्होंने (हज़रत मुहम्मद साहब ने) भेजे हैं।” कहने लगी, “हैं? गरीबी हम को खुदा ने दी, उसके रसूल के पास तुमने खुदा की शिकायत कर दी? यह कभी नहीं हो सकता।” इस का नाम है भक्ति। समझे? तो न कर दी, वापिस कर दिया सब कुछ। चुनांचे हज़रत मुहम्मद साहब खुद पैदल चलकर गए उनके दर्शनों को। इतना भरोसा। यह भक्ति भाव है। ये भक्ति के असूल हैं। जब तक यह दिल में न बसे, तब तक काम नहीं बनता। तो इस लिए कहते हैं, और क्या बनेगा, और असूल क्या होगा भक्ति का? अगर उसके लिए भक्ति है, तो वह परमात्मा सबका जीवनाधार है। घट-घट में वह बस रहा है। उसी के आधार पर हमारी आत्मा जिस्म के साथ कायम है। समझे? जो उसमें गुण हैं, वे हमारी आत्मा में भी छोटे स्केल पर मौजूद हैं।

अगर हम जान जाएँ कि सब आत्माएँ उसी की हैं और सबका जीवनाधार वही (परमात्मा) है तो हम किसी का दिल दुरवायेंगे? कुदरती बात है, नहीं। यह भक्ति का असूल है।

जे तो पिया मिलण दी सिक ता हीया न ठाई केहीदा।

अगर तुम प्रभु को पाना चाहते हो तो किसी के दिल को न दुरवाओ। इसी लिए कहा, ‘अहिंसा परमो धर्मः’, अहिंसा परम धर्म है। अहिंसा कहाँ होगी? जहाँ प्यार होगा। जिस से प्यार होगा, उससे कभी हिंसा का भाव बनेगा? कभी नहीं। मेरा आप से प्यार हो, आपके बच्चों से कुदरती प्यार होगा। अगर हमारा प्रभु से प्रेम है, प्रभु सब में, घट - घट में है, कोई घट उससे खाली नहीं तो सब से हमारा प्रेम होगा।

तो भक्ति - भाव इस लिहाज़ से हो। इसी भाव से अगर हम भक्ति करेंगे, नतीजा क्या होगा? दुनिया में सुख। धर्म तो बहुत हैं, धर्म के मायने हैं - ऐसा कार्य करो, जिसका नतीजा सुख हो। अहिंसा परम धर्म है। इसकी दो सूत्रें हैं प्रेम और अहिंसा। एक ही चीज़ के दो पहलू हैं। जहाँ प्रेम होगा वहाँ अहिंसा होगी। जहाँ अहिंसा होगी वहाँ प्रेम होगा, समझे? आपको पता है, हिन्दू भाइयों में गुणे पीर (साँप) को दूध पिलाते हैं। क्यों भई? प्रेम का असूल है। क्योंकि उसके अन्तर भी उसी का आधार है। दररक्तों की जड़ों में पानी देते हैं, किस लिए? क्योंकि उनमें भी परमात्मा की सत्ता काम कर रही है। क्राइस्ट से पूछा, “हम क्या करें?” अरे किसी महापुरुष से पूछो, सबका उपदेश दो चीज़ों पर निर्भर करता है। एक परमात्मा से प्रेम करो, परमात्मा सब में है, सब से प्रेम करो। ‘प्रेम सेवा जानता है, कुरबानी जानता है, देना जानता है।’ मैंने अभी मिसाल अर्ज की थी कि अगर हम दूसरों को सीधे हाथ से खिलाना शुरू कर दें, कोई भूखा न रहे। हम टेढ़ा हाथ करते हैं, उसी का नतीजा है कि सब भूखे मरते हैं। तो भई प्रेम का खासा यह है, अगर इस भाव से दुनिया में व्यवहार करें तो दुनिया में सुख हो जाए। क्राइस्ट से पूछा गया, हमें क्या करना चाहिए? तो यही कहा, **Love thy God with all thy heart, with all thy soul, with all thy strength.** परमात्मा से प्यार करो, अपने पूरे मन से, अपनी पूरी आत्मा

से और अपनी पूरी ताकत से, और क्या करो? **Love thy neighbours as thyself.** अपने पड़ोसी से भी प्यार करो। कहते हैं दुश्मनों से क्या करें? कहने लगे, **Love thy enemies.** अपने दुश्मनों से भी प्यार करो क्योंकि उनके अन्तर भी प्रभु है। केवल वह भूल में जा रहा है। उसके अन्तर भी वह परमात्मा है कि नहीं? यह भाव हो।

दशम गुरु साहब थे। मैदाने जंग था, कन्हैया नाम था उसका। नौकरी (सेवा) थी पानी पिलाने की। वह सब को पानी पिलाता था। किस को? मरने वालों को भी और मारने वालों को भी। थोड़े कम - फहम लोग (थोड़ी बुद्धि के) जो थे, उन्होंने शिकायत की आकर कि महाराज, देखो, अपना आदमी दुश्मनों को पानी पिलाता है, वे फिर लड़ने के लिए तैयार - बर - तैयार हो जाते हैं। कहने लगे, ‘‘उसी को बुलाओ।’’ बुलाया गया, पूछा, ‘‘क्यों भाई, ये क्या कहते हैं?’’ ‘‘कि महाराज, मुझे तो उसी की ज्योति सब में नज़र आ रही है। मैं तो उसी को पानी पिला रहा हूँ।’’ कहने लगे कि इसने मेरी तालीम को ठीक समझा है। एक डिबिया दी पास से कि आगे मरहम पट्टी भी साथ करो। यह है नज़रिया उन लोगों का जिन्होंने अनुभव को पाया है। तो अहिंसा कुदरती खासा (गुण) बन जाता है, यह असूल है।

बताओ अगर ऐसी भक्ति हो, यह कशमकशें कहाँ रहेंगी? समझे। **St. John** (सेंट जॉन) थे। बूढ़े हो गया। उसको एक स्कूल में ले जाया गया कि उपदेश दो। बहुत बूढ़े थे। बैठे, सिर उठा कर कहने लगे, ‘‘**Boys, love one another,** बच्चों, आपस में प्रेम करो।’’ यह कह कर फिर एक पल के बाद सिर उठाकर कहने लगे, ‘‘बच्चों, आपस में प्रेम करो, फिर तीसरी बार सिर उठाया, यही कहा, ‘‘बच्चों, आपस में प्रेम करो’’, और चुप कर गये। वहाँ के जो प्रबंधक थे, वे बोले,

“महाराज! और कोई उपदेश नहीं देना?” कहने लगे, “ मैंने सारा उपदेश दे दिया जो देना था, सब दे दिया।” “ **Love and all things shall be added unto you.** प्रेम करो, सब बरकतें मिलेंगी।” यही और महापुरुष सब कहते हैं, ‘कर साहब स्यों प्रीत रे मन कर साहब स्यों प्रीत।’ ‘बिना प्रेम के मानवा कहीं ठौर न पावे।’

महाभारत का युद्ध क्यों शुरू हुआ? द्रौपदी के एक लफज़ से। कौरवों के लड़के जा रहे थे द्रौपदी के महल में। महल का जो फर्श था, वैसे था जैसे पानी की लहरें चलती हैं। उन्होंने पाजामे ऊपर खैचे तो द्रौपदी कहने लगी, “अंधों की औलाद अंधी होती है।” और यहाँ से सारा विनाश हुआ, सारे हिन्दुस्तान की सभ्यता का नाश हुआ। अरे, घर-घर में क्या है? प्रेम का घाटा है। याद रखो, तलवार का ज़ख्म पन्द्रह - बीस दिन, महीने में भर जायेगा। ज़बान का ज़ख्म हमेशा ताज़ा रहेगा, कभी भर नहीं सकता। भक्ति - भाव, प्रेम हो तो ज़बान मीठी होगी, अगर सरक्षा ज़बानी भी करो तो भी मिठास में रसी हुई होगी। समझे कि नहीं। **Out of the abundance of heart a man speaks.** जो इन्सान के अन्तर बस रही हालत है, जो बोलता है, उसका रंग लेकर आती है, वैसा ही असर देगी। एक हवा है, वह बर्फ के साथ लग कर आ रही है, ठंडक देगी। एक हवा है, आग के साथ लग कर आ रही है, वह गर्म होगी। जो हृदय की कैफियत (स्थिति) है उसी का रंग लेकर हमारे वचन आयेगे। समझे? जिनके अन्तर ‘सुभर भरे प्रेम रस रंग, जिसके अन्तर प्रभु और विश्व का प्रेम छलक रहा है, जो लफज़ वह कहेगा, वे भी मीठे लगेंगे, ठण्डक देंगे। इस लिए कहा:

जवाबे तलवार भी जेबद लबे लाले शकर खारा

उसके लाल - लाल होठों से सरक्षा कलामी भी बड़ी मीठी मालूम होती है। किसी से आप का प्यार हो, वह गालियाँ भी निकाले, बड़ी मीठी लगती हैं। तो दिली भाव का सवाल है। तो ऐसी भक्ति करो, किसी अनुभवी पुरुष के चरणों में जिसके अन्तर में वह प्रेम - भाव छलक रहा है, उसकी सोहबत - संगत का रंग मिलेगा। ‘सुभर भरे प्रेम रस रंग, उपजे चाओ साध के संग।’ जिसके अन्तर वह प्रेम हो, उसके मण्डल में भी **radiation** अर्थात् उसकी किरणों का, तेज का प्रभाव है। अगर यकसूई (एकाग्रता) से बैठोगे, वही असर तुम को मिलेगा। यह नहीं कि तन तो वहाँ बैठा हो, मन कहीं और हो, फिर? मन तो बाहर भटकता हो, ‘मन दिया कहीं और ही, तन साधु के संग। कहें कबीर कोरी गजी कैसे लागे रंग।’ तो सोहबत - संगत का असर बड़ा प्रबल होता है। इस लिए महापुरुषों ने कहा, भई किसी के आसरे होकर काम करो ताकि तुम में हंगता (अहं) न रहे। जो अनुभवी पुरुष हैं, जिन्होंने इस अनुभव को पाया है, जिनकी वह आँख बनी है जिससे वे प्रभु को देखते हैं और हमारी आँख बना सकते हैं उसके देखने वाली, अरे ऐसे पुरुषों की सोहबत में वैसा ही रंग मिलेगा, कुदरती बात है।

इसी लिए महापुरुषों ने कहा कि साध संगत क्या बनाती है? यह एक ऐसी जगह है जहाँ भाव उपजता है, समझे। इसलिए ‘भाव बिन भक्ति न होई।’ जब तक भाव न बने, भक्ति नहीं होती। इस लिए महापुरुषों ने यह कहा कि किस की भक्ति की जाए? जो कभी फना(नाश) न हो। ‘न ओह मरे न होवे सोग।’ वह कौन है? वह परमात्मा है। तो इस लिए महापुरुषों ने यह कहा कि प्रभु से प्यार करो। अब सवाल यह आता है कि प्रभु को तो हमने देखा नहीं। जब तक उसको देखा न हो, ऐसों की सोहबत करो, जिन्होंने उसे देखा है, जिनके अन्तर वह प्रकट है। है हम में भी मगर अभी हमारी

आत्मा मन-इन्द्रियों के घाट पर दबी पड़ी है, इससे ऊपर नहीं आई अगर इससे ऊपर आए तो पता लगे कि वह प्रभु हमारा जीवनाधार है।

देखिए, जिस्म के नौ दरवाजे हैं, दो आँखें हैं, दो दरवाजे, दो कानों के, दो नासिका के, मुंह, गुदा और इन्द्री। समझे? इससे रुह हमारी बाहर भाग नहीं सकती। इसे भाग जाना चाहिए न? वेदों में इसका जिक्र आया है, उपनिषदों में, कि यह ऐसा अजीबो-गरीब मकान है कि जिसके नौ सुराख होते हुए भी रुह बाहर भाग नहीं सकती। साँस बाहर जाता है, बाहर रह नहीं सकता। कोई चीज़ कंट्रोल कर रही है। वह हमारा जीवनाधार है, वह प्रभु है, वह परमात्मा की सत्ता है, जो सबको कंट्रोल कर रही है। 'नानक नावें के सब किछु वस है पूरे भाग को पाए।' एक वही फना से रहित है, बाकी सब बदल जाने वाले हैं। बड़े-बड़े ऋषि, मुनि, महात्मा दुनिया में आए, आज उन के जिस्म कहाँ हैं? गुरु या अनुभवी पुरुष भी इन्सान ही है। अगर तुम इन्सान, जिस्म जिस्मानियत से ताल्लुक रखते हो, उस असूल से जो उसके अन्तर प्रकट है, उस के पुजारी नहीं बनते हो तो दुखी रहोगे। तो इस लिए कहते हैं, उपायों में सबसे ज्यादा मुख्य उपाय अनुभवी पुरुषों की सोहबत और संगत है। 'श्रीमद्भागवत्' में आता है, 'न पूजा से, न दान से, न भक्ति, न इन्द्रियों के दमन से, न हवन से जीव मुझ को इतनी आसानी से पा सकता है जितनी जल्दी कि साधु संग में। साधु किस को कहते हैं? वह भी हमारी तरह ही इन्सानी शक्ल रखता है, पर उसने क्या *develop* किया है? अपनी आत्मा को मन इन्द्रियों से आज़ाद करके अपने आपको अनुभव किया है। वह आँख बन गई, जिससे वह (प्रभु) नज़र आता है। आप देखता है और दूसरों को भी *way up* करके देखने की थोड़ी पूँजी दे सकता है। जिसने पाया है, वह हमारे पाने में मददगार हो सकता है। तो इसलिए कहा, 'संत संग अन्तर प्रभु ढीठा।' 'सत्गुरु मिले तां अकर्की वेखे।' कबीर साहब ने इसी लिए कहा:

स्वामी विवेकानन्द जब रामकृष्ण परमहंस के पास गये हैं तो सवाल किया, 'क्यों महाराज! आपने प्रभु को देखा है?' तो कहा, 'हाँ बच्चा, मैं उसको देख रहा हूँ, जैसे मैं तुझे देख रहा हूँ, बल्कि इस से भी सफाई के साथ।' यह इकरार है, अंहकार नहीं। वह आँख बन गई। कौन देखता है? *Son knows the Father.* और कौन देखता है? *And others whom the Son reveals.* वह *Son* भी जो है, अनुभवी पुरुष, वह भी इन्सान ही है, उन्होंने एक तरफ *development* (तरक्की) की है। जैसे एक डॉक्टर भी इन्सान ही है, उसने जिस्म को चीड़फाड़ कर देखा है, कैसे बीमारियाँ बनती हैं? कैसे वे दूर हो सकती हैं? तो है इन्सान, पहले। मगर वह इस जिस्म की साईंस का माहिर बना। तो अनुभवी पुरुष भी है इन्सान ही। वह कभी नहीं कहता कि मैं आसमानों से गिरा हूँ। वह कहता है, मैं तुम्हारी तरह इन्सान हूँ। *Every saint has his past and every sinner a future.* समझे? उसकी सोहबत संगत में क्या है? वह उस साईंस का माहिर है, उसने अपनी आत्मा को, मन इन्द्रियों से आज़ाद करके अपने आपका अनुभव किया है। वह आँख बन गई, जिससे वह (प्रभु) नज़र आता है। आप देखता है और दूसरों को भी *way up* करके देखने की थोड़ी पूँजी दे सकता है। जिसने पाया है, वह हमारे पाने में मददगार हो सकता है। तो इसलिए कहा, 'संत संग अन्तर प्रभु ढीठा।'

परदा दूर करे आंखन का निज दर्शन दिखलावे।
साधो सो सतगुरु मोहि भावे॥

हम आँख बन्द करते हैं, आगे अँधेरा है। परमात्मा ज्योति स्वरूप है, *God is light.* वह जो अँधेरे की स्थानी को हटा सकता है, उसका नाम साधु-संत और महात्मा है। कितनी भारी महिमा गाई है उसकी।

वह भी कहता है, हम इन्सान हैं मगर एक चीज़ को पाया है। प्रभु की कृपा से मिली है चीज़, तुम भी फायदा उठा लो। अगर डॉक्टर बनना चाहते हो तो डॉक्टर के पास जाओ। पहले आप के अन्तर उसके पाने का शौक हो, डॉक्टर बनने का, पिछले संस्कारों से या यहाँ पर विचार से। फिर किस के पास जाना होगा? जो इसका माहिर है। उसका नाम कुछ रख लो। इस लिए अगर प्रभु को पाना है तो जिन्होंने पाया है उनकी सोहबत करो, जब तक प्रभु को नहीं देखा। तो पहला कदम क्या है? जिन्होंने पाया है या पा रहे हैं, उनकी सोहबत करो। समझे? ‘सुन संतन की साची साखी, सो बोले जो पेरवें आखी।’ तो संतों की शहादत को सुनो, वह सच्ची है। वे वही कुछ बयान करते हैं जो उन्होंने अपनी आँखों से देखा है। समझे? देखे का बयान कुछ और होता है। पढ़ा - पढ़ाया या inference (निष्कर्ष) निकाल कर बयान करना कुछ और होता है।

+++

हमारे अन्य प्रकाशन

1. कृपाल वाणी (गद्य एवं पद्य) हिन्दी
2. कृपाल दया के सजीव सागर (प्रश्न उत्तर अगस्त 1974) हिन्दी
3. जीवन चरित्र संत कृपाल सिंह (उनके अपने शब्दों में) हिन्दी
4. आदर्श शिक्षाएं (जिल्द - 1) हिन्दी
(Teachings of Kirpal Singh का हिन्दी अनुवाद)
5. आदर्श शिक्षाएं (जिल्द - 2) हिन्दी
(Teachings of Kirpal Singh का हिन्दी अनुवाद)
6. Divine Melodies (कृपाल वाणी गद्य का अंग्रेजी अनुवाद) अंग्रेजी
7. प्रभु : मानव तन में हिन्दी
8. 68 डीवीडी /सीडीज़ का सेट जिस में 50 डीवीडी फिल्मों समेत सत्संग की, 1 सीडी बाबा सावन सिंह जी की फिल्मों की, 6 डीवीडीज़ 280 हिन्दी सत्संगों की, 1 सीडी 10 पंजाबी सत्संगों की, 1 सीडी पुरातन महापुरुषों के शब्दों की, 2 सीडी 341 फोटोज़ की, 2 सीडी पाठी जी के विरह और प्रार्थना के शब्दों की, 2 सीडी पाठी जी के चेतावनी के शब्दों की, 2 सीडी भाई - बहनों के विरह और प्रार्थना के शब्दों की, 1 सीडी भाई - बहनों के चेतावनी के शब्दों की तथा 1 सीडी महाराज जी द्वारा लिखी आडियो कविताओं की शामिल हैं, तीन हज़ार रुपये में इस सभा से प्राप्त किया जा सकता है।